॥ सामप्रातिशाख्यम् ॥

(अतिप्राचीनम्

॥ सामगाचार्य्यवर्य्येण महामुनिना पुष्पेण कृतम् ॥



चतुर्वेदानुवादकेन,

सामगाचार्य्यश्रीसत्यव्रतशर्म्मणा सम्पादितम्,

बोधसौकर्य्याय बङ्गभाषीयितञ्च ।



CALCUTTA.

16—1, GHOSHE'S LANE, SATYA PRESS.

Printed and Published by Priya Vrata Bhattacharjya.

1890.

গ্রন্থারম্ভসূচনা।

আমি গত তৃতীয় সন্ যে সময়ে স্বাস্থ্যলাভাশয়ে বায়ু-বারি-পরিবর্ত্তনের জন্য সপরিবার ৺বৈদ্যনাথ ধামে অবস্থিতি করিতেছিলাম, সেই সময়ে মিথিলার মধ্যে অদ্বিতীয় সামাধ্যাপক, দ্বারবঙ্গাধিপতির কনিষ্ঠ সহোদর শ্রীমান্ রাজা, রামেশ্বর সিংহ বাহাদুর মহোদয়ের সামশিক্ষাগুরু, শ্রীযুক্ত আচার্য্য অযোধ্যানাথ মিশ্র মহোদয়, আমার বাসায় সপরিজন আগমন পূর্ব্বক আমার সহিত বৈদিক-আলাপ করিয়া সাম-বেদের প্রাতিশাখ্যাদি গ্রন্থ পাওআ যায় এবং সামসংস্তের অন্তে যে এক-একটি অক্ষর প্রাচীন পুস্তকে দেখা যায়, তাহারও অর্থ আছে ও তাদৃশ-অর্থ-জ্ঞাপক পুস্তকও আছে,—ইত্যাদি সবিশেষ অবগত হইয়া বড়ই বিস্মিত হ'ন এবং ঐ সমস্ত অধিগত হইবার জন্য লালায়িত হওত উপর্য্যুপরি কয়েক দিবস আমার নিকটে আসিতে থাকেন; পরং সেই সময়ে দৈববিড়ম্বনাবশে তাঁহার বাতের পীড়া বিবৃদ্ধ হয় এবং আমার প্রত্যাগমনের চেষ্টাও উপস্থিত হয় সুতরাং তিনি স্বকার্য্য-সাধনে সম্পূর্ণ কৃতকার্য্য হইতে না পারিয়া ভবিষ্যতে ইষ্টসিদ্ধির আশয়ে একখানি প্রার্থনা-পত্র লিখিয়া নিজ ছাত্র দ্বারা পাঠাইয়াদেন। উহাতে অন্যান্য বিষয়ের সহিত "সামপ্রাতিশাখ্য"-প্রাপ্তির জন্যও প্রার্থনা ছিল। সেই মৈথিলাচার্য্য মহোদয়ের প্রার্থনাও আমার এই সামপ্রাতিশাখ্য প্রচারের একটি নিদান। উক্ত মৈথিল সামগাচার্য্য মহোদয়ের লিখিত প্রার্থনাগুলি পরপৃষ্ঠে যথাবৎ প্রকাশ করিতেছি॥

শ্রীসত্যব্রত শর্ম্মা॥

॥ सूचना ॥

दारवङ्गाधिपमहाराजश्रीरामेश्वरसिंहबहादुरस्य सामवेदाध्यापकेन मिथिलैकभूषणेन महामतिना श्रीमद्बौध्यानाथमिश्रमहोदयेन मैथिलसामगाचार्येण कविधुवसुमेदिनित-शकीयमार्गशीर्षे वैद्यनाथधेनं मह्यमया प्रेषितं यत् स्वकरकमलाङ्कितं प्रार्थनम्, तदनु-रोधरक्षणार्थमेतस्य सामप्रातिशाख्यस्य अन्ते बीजाक्षर मिति तदिह प्रकाश्यते च यथायथम्। पश्यन्तु तावत्—

“ * * * सामतन्त्र सभाष्य १ ऋक्तन्त्र सभाष्य १ सामवेद का प्रातिशाख्य १ और प्रतिसाम के अन्त में एक एक अक्षर लिखा रहता है उस का सूत्रावली १ इत्यादि सामवेदोपयोगी जो अपूर्व अपूर्व विषय आप का पास सुना है उस सभ का नाम लिख करके भेज दीजिएगा कृपायुक्त रहिएगा यही हमारा प्रार्थना है और अपने घर का ठेकाना और पूरा नाम अपाना लिख कर दीजिएगा की उसी पते से चीठी पत्री हम लिखा करेंगे।”

॥ अथ सामप्रातिशाख्यप्रकाशकोक्तिः ॥

भो भो प्रज्ञालिभवो यूयं मा आशीर्भिरभ्यभिनन्दत,— पश्यत तावदतिविश्रुत मप्येतच्छ्रोदृष्टचरं प्रायः, प्रज्ञानुसन्धानतत्पराणा मप्यतिदुर्लभं नाममात्रावशिष्टकल्प मनिर्दिष्टकर्त्तृकं पुष्पर्षिप्रणीतं वा अतिप्रामाणिकं पाणिनीयादिभ्यो मीमांसासर्वार्दिभ्यश्च पुरातनं सामगजीवनं सामव्याकरण मिदं दृक्पथं नीयते भवता मस्मिकर्णयोर्वादभञ्जकायेति। एतस्यैवैं हि तात्त्वीयिकं सूत्र मेक मवलम्ब्यारचितं मीमांसादर्शननवमाध्यायीयनवमाधिकरणम्; तथोक्त मधिकरणमालाया मपि "तथाच सामगा आहुः—'हव' तालव्य माद्य भवति'—इति"—इति।

सोऽयं सामग्रन्थो द्वादशप्रपाठकात्मकः। तत्राद्ययोर्द्वयोः प्रपाठकयोः दशरात्रसंवत्सरैकाहाहीनसत्रप्रायश्चित्तक्षुद्रानुसारतोहिः स्तोत्रियपरिवायकाभिधानादीन्यभिहितानि; ततो दशसु प्रपाठकेषु साम्नां भावादयो निरूपिताः समग्राः समन्तात्। तत्सङ्ग्रहश्लोकाश्चाह आचार्यः स्वय मेवैतत्रवमद्वितीये। तथाहि —

"अथ भावान् प्रवक्ष्यामः प्रगाणां यैर्विधीयते।
आर्चिकं स्तौभिकं चैव पदं त्रिर्क्रियते तु यैः॥
आयित्वं प्रकृतिं चैव हवं चाहव मेव च।
गतागतं च स्तोभाना मुच्चनीचं तथैव च॥
सन्निवृत्त् पदवसान मल्प मार्भाव मेव च।
प्रश्लेषाश्चाथ विश्लेषा जहे त्वेव निबोधत॥
संश्लिष्टश्च विश्लिष्टश्च व्यञ्जनं लुप्त मतिप्लुतम्।
आभावांश्च विकारांश्च भावानेतेऽभिलक्षयेत्॥

एतैर्भावैस्तु गायन्ति सर्वाः शाखाः पृथक्पृथक् ।
पञ्चस्वेव तु गायन्ति भूयिष्ठानि स्वरेषु तु ॥
सामानि षट्सु पञ्चानि सप्तसु द्वे तु कौथुमाः ।
राणायना अन्यथा गीतिः कालाना मधिकाश्च ये ॥
कौथुमेषु समा ये ऽन्ये पादास्त्वक्षराः कृताः ।
आर्षभावश्च नैदानौ दीर्घं यत्रैव कथ्यते ॥
आर्षेयं तु निवर्त्तेते नाधिकाया मुपद्रवे ।
ओभावौ ह्रस्वतो साम्नि औभावश्च यथाक्रमम् ॥
अभ्युदूहे न सर्वत्र काले गीतौ ह्रस्ववत् ।
ऐकारादिपर्वणि निस्तायां तथैवान्येषु सामसु ॥
चतुर्भिर्वा निधनं स्यात्ते स्तोभिर्वा ऽक्षरम् ।
अष्टाक्षरं भवेत्स्वार्थे अन्तोदात्तं द्वये स्वरम् ॥
अथाजनप्रसदोना मानियुक्तिविशेषु जितं ।
तनाशयश्रियैतिभिर्विश्यमभिहिता ।
अथावसन्तमनर्थमित्युतलक्षणः विभिर्यम् ।
न्यायावेतान्यपेतानि अतप्रति अधे स्वरम् ।
औभासपोपकांशेष्वयिहाक्षिप्रवर्णाश्च ।
चैतान्यग्रलयोशान्नीषतुः पृथिवीप्रथा ।
मध्माले पोपांके मम पौषाष्टे प्रथक् द्वये ।
दयिमौलि कथा पीभे द्वे हे आयविरोधिनी ।
अथाश्रीगवयौकोभवर्णाभिर्विदेतु पञ्चसु ॥" —इति ।

एवमेतद् वस्तु कृतात एव, — न शाखाध्ययन मन्तरा साम-
प्रश्नोत्तरदाने सामवेद 'सुपर्णायते,' 'सामगान' वा पूर्णं इति ।
अथासां मन्त्रधरणी बोधौ अवश्यं सामगानां मतिकुशलः, परं

যেষা মম মতিমঙ্গীকরণীয়া, তেষা মধীতসামমন্ত্রাণামন্ত্যেনীব সুখদঃ ; ততঃ পিতৃপুত্রমিলনীকারিণি মে সম্প্রদায়ে সম্ভবতি ন তথা যত্নো যথা মূলগ্রন্থে ইতি মম ॥

যে সকল মহোদয় প্রয়োজনীয় অতিপ্রাচীন গ্রন্থাদির লাভের ইচ্ছা করেন, তাঁহারা অদ্য আমাকে আশীঃ—প্রদানাদির দ্বারা অভিনন্দিত করুন। দেখুন,—অতিবিখ্যাত অথচ অদৃশ্যকল্প, এমন কি প্রাচীনগ্রন্থাদির অনুসন্ধানে বদ্ধকটি য়ুরোপীয় পণ্ডিতগণেরও দুষ্প্রাপ্য, এক্ষণে নামমাত্রাবশিষ্ট বলিলেও চলে, সম্ভবত পুষ্পনামক মহর্ষির প্রণীত, অতিশয় প্রামাণিক, পাণিনিসূত্র হইতে—সর্ব্বদর্শনশ্রেষ্ঠ মীমাংসা হইতেও পুরাতন, সামগগণের জীবনস্বরূপ, এই সামবেদীয় ব্যাকরণখানি আপনাদের চক্ষু-কর্ণের বিবাদভঞ্জনার্থ দৃষ্টিপথে উপস্থিত করা হইতেছে।

এই গ্রন্থের তৃতীয়াধ্যায়ের প্রথম সূত্রটী অবলম্বন করিয়াই মীমাংসাদর্শনের নবমাধ্যায়ীয় নবমাধিকরণ বিরচিত হইয়াছে।

এই গ্রন্থখানি 'প্রপাঠক' নামক দ্বাদশ পরিচ্ছেদে বিভক্ত। সামবেদের সকলগ্রন্থেরই অধ্যায়গুলি প্রপাঠক সংজ্ঞায় ব্যবহৃত দেখাযায়। প্রথম ও দ্বিতীয় প্রপাঠকে যথাক্রমে দশরাত্র, সংবৎসর, একাহ, অহীন, সত্র, প্রায়শ্চিত্ত ও ক্ষুদ্র পর্ব্বানুসারে স্তোত্রিয়-সামসমূহের সংজ্ঞাগুলি সংক্ষেপে বিবার পরিচায়িত হইয়াছে। তৃতীয় ও চতুর্থ প্রপাঠকে সামমধ্যে প্রকৃত আবির্ভাব ও প্রকৃতিভাব সম্বন্ধে বিধিসমস্ত উপদিষ্ট হইয়াছে। পঞ্চমপ্রপাঠকে রুদ্ধ ও অরুদ্ধভাব যথাযথ ব্যবস্থিত হইয়াছে।

ষষ্ঠপ্রপাঠকে সামভক্তিসমূহের কোথায় গীত হইবে কোথায় বা অগীত থাকিবে ইত্যাদি নির্দ্দিষ্ট হইয়াছে। সপ্তম ও অষ্টম প্রপাঠকদ্বয়ে লোপ, আগম ও বর্ণবিকারের স্থানাদি পুঙ্খানুপুঙ্খরূপে উপদিষ্ট হইয়াছে। নবমপ্রপাঠকে ভাবকথন। এবং অন্তিমপ্রপাঠকে কৃষ্টাকৃষ্ট নির্ণয়াদির পরেই প্রস্তাবসম্বন্ধে লক্ষণাদি প্রকাশ করা হইয়াছে।

এতাবতা ইহা বলাই বাহুল্য যে এ গ্রন্থের আদ্যোপান্ত অধ্যয়ন ব্যতীত সামসম্বন্ধে কোনরূপ প্রশ্নেরই উত্তর দেওয়া যায় না সুতরাং যে কোন সামগ এই গ্রন্থখানি ভালরূপে অধ্যয়ন করেন নাই, তিনি কোনমতেই আপনাকে সম্পূর্ণরূপ সামজ্ঞ বলিয়া বিবেচনা করিতে পারেন না।

যাঁহারা সামবেদ রীতিমত অধ্যয়ন না করিয়াছেন তাঁহাদের পক্ষে এ গ্রন্থের ভালরূপে অর্থ বোধ যদিও অতিকঠিন কিন্তু যাঁহাদের জন্য ইহা অতিপ্রয়োজনীয় তাঁহাদের অর্থাৎ সামগগণের পক্ষে কঠিন নহে; অতএব আপাতত ইহার মূলরক্ষাই যাদৃশ কর্ত্তব্য বিবেচিত হইল, টীকা প্রস্তুত করিয়া মুদ্রাযন্ত্র সাহায্যে তাহা প্রকাশ করা তাদৃশ প্রয়োজনীয় বলিয়া বোধ হইল না; — মূল রক্ষিত হইলে যথাকালে টীকাও অনেক হইতে পারিবে॥

ভারতরাজধানী,
শাকাঃ ১৮১১। } শ্রীসত্যব্রতশর্ম্মা।

॥ अथ सामप्रातिशाख्यम् ॥

॥ हरिः ॐ ॥

ॐ उच्चामहो पुनारवजये आत्वौशनं कयादेव्यं तंवो धसं तरोसेय ऽ स्वादिहित पवस्विन्द्रमच्छसफाष्कले पुरःश्यावागवे ऽभिप्रिकाव ऽ स्वासुत्तीय मेच्छसाकं वयंभ रमधामेधं पान्तं ऽ हव्यं प्रवःशात्तां वयद्याग्नु प्रथमः ॥ १

इन्द्राकत्तमयम्दासीर्द्दसंम्नमातूपारमभित्वार्षभमिद्ग्वारमिदंघ्नतष्ठुर्निधममातु तिथंयोगमेधमिन्द्रसुत्रेकौत्समाश्वन्द्रोगासुतासोमेकत्रौंप्रसोजयंत्वचेप्रसोहितमयासफमाभार ऽ हर्य्यंप्रसुन्वासौरोगौतमंमेकर्चात्रिषारयौशाघ पुनायास्यमेडे द्वितीयः ॥ २

एतास्वेवत्रिणिधनंवृषाशोग्निष्ठमभिप्रवश्यैतंत्वामिद्राकन्दसंयसेप्रतम्यवस्मरूपूषासुशंकुसुत्रानरोवितांन्येकर्चाःपृषात्वंचेक्रोश्वंवृषायंममेवामहोविश्वादेरष्टम्पूर्वमुत्वाचुष्टम्ममभिसोमद्गंतमेप्रहिन्वाप्कारान्तल्लिखः संक्रोशोघत्वाष्टम्भन्तरणिरवन्तिसः षोढे तृतीयः ॥ ३

आस्तोसखाषोचःशैाम्नएकाच्चौंसुतावितन्वाष्टीअन्ते-
स्वासुहिष्ठीयंवर्मारस्वगंनिदघसाकामन्तवद्ष्ठोत्तरा-
भीशवेस्वःपृष्ठस्वपुनासत्वाविश्वाःशोकीयोरापृश्नौसीरत
र२स्वासुत्वहिहत्वमातोषासोमःपुरोनानदंवात्सपृ
सोमःसैन्धचित्तमग्निंवश्चतुर्थः ॥ ४

प्रियमिमंवितंजुषस्वाषाशाकलवाशैंउष्वाणमान-
वामूषवास्वाम्ने यानियरसोशवन्तनिव्यश्रुदुंग्नंप्राणाव-
नक्रोशेजसावितपार्थैस्पत्यमिन्दुरातेसत्वयमिन्द्रामित्वम
सामत्वामित्वमिन्द्रावृधीयकौत्से पञ्चमः ॥ ५

एतास्वेववयंमृज्योत्वोरध्रेस्वःरैडेजजिद्रुणसाम-
गोष्ठमुत्य३वह्वेव्यरेवतीयम्परिस्वावेदन्वतानिहती-
याद्यचतुर्थानिससुतंवोदीर्घकाश्वसोमागौरीमधुश्चुन्नि-
धनेतथाक्रौञ्चेवाङ्निधनमैडेश्वोष्टमयापवाग्नेगूर्दःप्रवो-
त्रौंपिबहशपुवे षष्ठः ॥ ६

वृषातनिपृश्नौडक्लीयानिपुनाकगवतरगौङ्गवया-
स्यानिस्वासुप्रवद्भिर्निधनंवैखानसानियक्षेमौक्षमेषस्य
शार्करंपूर्वःसवपुरोवितकात्वंज्यदाह्वविषयेसोजराबा-
टसमालेनत्वःसौश्रवसंयदिवौक्षमध्वर्योरूपे सप्तमः ॥ ७

एतास्वेवाशुभार्गीमित्रटलसावालस्वान्यभिसोहि-
हिङ्कृपार्श्वहन्मगतद्वाराप्किटाणिप्रहिन्मन्वाङ्मुद्

वश्वर्षीयदिनैम्पातिथमुभयवैयश्वयुषकासुरूपाद्यभासका-
च्चीवतासितान्यष्टमः ॥ ८

द्युम्नमैषिरंपूष्णानैतमभीनोवितकौत्समुद्वाक्रौञ्चा-
रयिष्ठौद्लानिस्वासुधर्मह्निनुविशीयएंसासुशनसांवत्स-
मारुतानिजिघ्नतद्वत्यदारसुरूपोत्तरएंहरिश्रीनिधंमसैन्धु-
वाभ्रवेडानाएंसंहारक्ष्मभश्चेतिं नवमः ॥ ९

तौषिंपृष्ठकौल्मपुष्पदैर्घवैयश्वाद्याभीशवानिश्रीणा-
न्तोवासिष्ठमसासामराजंएंवासुश्रायन्तीयंयतःसम्मतंत्व
एंसामाश्वसूक्तंशाम्मदावचौनेडविष्कृतानित्वम्यंसा पक्व
मनसंपरित्यंत्रितनिहवहिंछौथानि दशमः ॥ १०

एतास्वेवासितसाधुपाराणिस्वासुविधर्मोपोषुश्रुध्य-
एंद्वास्वैभवांहकाकुभोहएश्रीयान्युत्वाजिग्गाभीकेपुनोत्से-
धत्त्रीयनिषेधान्याजावितंमार्चित्तथमुदुत्वे वत्सो स्वकु-
लीयंपर्यूषुश्याबागवेधन्वत्वविषंवाङ्निधनमेकादशंसूर्य-
स्याग्निं वाजजिह्व्ये दशरात्रः ॥ ११

वृषामह्वीपुनामन्तंपुरसःप्लवःप्लव दैर्घंकापार्थमां-
चिंद्वत्तीयस्तेजराकसुसत्वानंपुरःकौत्सप्रोत्वावमग्निवःसं
त्वापसामाभ्व प्रसामदेपजएं वासुवर्त्त ःथंवतेत्वानकाशी
तेपसुविलभाजाम्योकोनिधनएंसत्रीरादलंप्रसुन्वांसाघ्रे
प्रथमः ॥ १२

वृषाम्णतयौ क्तोत्तरे तो षिच्छन्दसम्च्यो ड मार्मस्य-त्र्यो चेश्नौ वान्तस्त्रिणिधनं वृषाशो पार्थमभिप्रवर्त्त श्च कुविदित-पव स्वायम्पूषाभ्यामद्यौ विश्वाद च्छ्रेत्तरी मुच्चारूपमभिसो-रौ रवं प्रहिन्वाग्नेयमाला वर्त्तः स्वासु त्सुक्रवा चेसखाज्ञान-दासि सुताभ्यौ द्वितीयः ॥ १३

पवि राजं पवस्वादा रतो प्रिं पृश्नि रक्षयांत चेभी शवी-मर्यौ धाश्री णमुह्न वाग्नर्ष सिच्छ यो राम्वर्त्तः स्वारवौ सद्य-सुज्ञाने परस्त्वाष्ट्राड्डे डं स्वासुलो शा द्य ड शुद्धी ये ग्नर्षा स-त्न्यभिसो मा नावानूपवाग्नांण्यभि विसम्पाय शावर्त्तौ-सागौ षूत्मा वाज्ञानि तृतीयः ॥ १४

एतां स्वेवदासं पवस्ववारयिष्ठ मसा लो शोत्तरं यजि छं-साध्यमिन्द्राश्वसूक्तं मृज्यमत न्निणिधना याश्वे साकं सिं-छं पिबावर्त्तः पवि वैधमला हन्त वर्चिज्ञानकाशौतेस्वासु-रुताभ्ये नुप्रसो र्चिवर्त्तौत्सः प्रत्न वर्त्तले ये तथाभिसोमत्स-परिष्वीन्द्वेहेति च चतुर्थः ॥ १५

हा उनित प्रते लो शा द्य मन्द्र दुग्धावर्त्त लेयेन्दुः स-म्यापवस्वत्वाष्ट्रौ दिर भ्यस्त ङ्गो विश्नौ ग्रा सरम्पवमा वृषो वर्त्त-लेयेश्रुया प्रवासि छं ज्योतिर्म रुतामुच्चासत्वो पुनावर्त्त भि-वायुम्पा र्थं पुरो मधुश्चुत्तो र्य बृहदाग्ने यमभिसे गो ङ्क्वं प्रहि-त्वायो धा मादिद्त्सुष्टम्भ पुञ्चमः ॥ १६

आजातममभ्यैडङ्कावन्तोषिमतंयभ्रासितंन्तषाया-
ममैडङ्कत्वायत्तं स्तिस्रोहितꣳसहत्वाष्ट्रास्यसचातवोत्से-
धोदुहापृश्निशिशुम्प्रार्थंदुग्मम्प्राणासफस्तुध्येकर्चाविंदु-
र्निषेधोधर्त्ताकावंक्रतुꣳष्टम्भꣳसखापौष्कलंकतुꣳश्यैतम-
क्कश्तुध्ये षष्ठम् ॥ १७

क्रतुन्वसंपवनेपैष्कोलमस्यामक्षीतोमिलेयमृच्यर्थꣳ
सोपार्थꣳखामोहितंम्प्रवसचांपयूंदेव्यमिंद्धुर्य्यहापरिप्रध-
वारꣳसूर्य्यस्यक्रावंहचेपवंमापौरुमौढम्मन्द्रनवाद्यम्परि
धीनिवमभिसोहाजमुत्सःसिष्ठ यहापमीनम्मितिप्रसोगव-
शुङ्गीयएकर्चाःक्रतुम्मौढन्तवर्चिस्तुध्ये सप्तमः ॥ १८

क्रतुम्मानवाद्य प्राणापैष्कलंक्रतुञ्जनिवꣳसोमः-
स्तुध्य क्रतु हाजमभिसोतिथंतोषिदुक्थंयस्तेसोमसोमा-
ध्यर्धैडमदभ्रःसुमाण्डवमस्यज्ञरातोषिरवंभ्रवे देवानिह-
वः संवत्सरः ॥ १९

प्रतिनानदमानोविम्ब्राश्यैतम्पुरोदलꣳखाद्रोःश्यै-
तम्पवस्वेडानांकर्व प्रलयेधाशिशुन्दे व्यङ्कयाखारम्पस्म
म्पोरंप्रधन्वसफमिकस्याभुंखाखारसौंपस्म शाक्वरेपुनाष्ट-
भलेयेश्रायभरन्तरोवारमक्कैकस्यांसुरस्तूचेयास्यमैडꣳ-
खाभ्रैधरावस्म मिषंपुनात्नषट्कर्चे प्रथमः ॥ २०

तृचेमंच्छौपगवन्निषेधःश्रायमयापार्श्वमिन्द्रमहीकर्षःमवस्रमलेयंतृचेत्वैसोयैधादेर्वैधाद्यै तानमेन्द्र मारुतंएखादिजरानदंवसुध्यन्दे वोर्दार्ग्नीयमुत्त महीमन्द्रजरापाहिरवंतृचेष्कचैदंघंविश्वस्मात्समन्तन्नाखेवजयमिमश्चौशने द्वितीयः ॥ २१

कयातेदेव्यमग्नश्चायाधर्म्मच्छलेयमदासंएहितंभद्रोग्नेवाजंसफच्छलेकश्चैतृचेश्रुध्य विशोश्वाश्चवमृचितृचेश्वौगवन्नौर्येसमिद्धं न्नीयकावंमुपत्वावारमुच्चे षन्तोकजराखासुंवम्बट्प्रसोंतृचेगौङ्गवंएशगधूग्हारत्वङ्कोल्मलाशुमंदच्युतःकर्चे तृतीयः ॥ २२

प्रधंसचाप्रसुवाश्वकचौवैघदलंतृचेप्रदैन्नीयएखासुदैर्घंएशगधूवर्तःखादिष्कृतमसाम्नतंयस्ते हितमयंपूवाश्वंविपश्चितेभिगंवएखासुयोतासुचंप्रसुन्वागौतमंतृचेवप्रांजिगखारपक्ष पुनादैर्घंयस्ते सुरूपोत्तरंतुएहिशंकुसुम्नापवस्वदेवासितमयंपूषितिं चतुर्थः ॥ २३

उच्चार्षभमपूतोभिसोमोत्स धःखानोवारप्राणाश्रुध्ययुरोनिषेधःप्रधन्वंवर्य्यौजिन्नमहौसाक्षार्थमिमाउंत्वामेतंयसत्रलेयंपवमासएहितमासोगोमन्नेःसपश्रुध्यं भोनोवाश्याबागवेत्रतेन्नावन्तोषिदएष्टोत्तरमभित्वाकणूरंमानोदोविशीयः पञ्चमः ॥ २४

परित्यएष्यवागवेपविंत्र कावएस्वादिमौत्वंत्नीयन्तु विश्रीयंत्वन्नस्विवारमुखोऽवारसैन्धु चित तोषिंवर्त्तासा- मयेस्ते कात्वरच्छाद्यस पुरोवाभ्रयवेतहव्यंसोमसामत्रासा न्यमें त्वएसत्वाभिसीदोविश्रीयएस्वांसुवारंप्रतूर्तिषुवत्त तामृषभंस्तोष्युत्सेधे षष्ठः ॥ २५

उत्सेध एवश्रीणामच्छविश्रीयमयंपूनिषेंधद्वन्द्व पुष्प च्यावनमेकस्याम्यवृत्वतंवःपुरोजनितेपुनातिथंतंवशुद्धा- पदान्तएस्वादिमच्छगौपृत्नाश्वसूत्नएकत्वौयित्रैह्यं पुतन्तैंस्त- धीतिचत्वाराणिपिवोत्सेधनिषेधावष्यापर्ण मैडन्द्रहा समन्त पङ्क्तागंपुनाव्रतसामि सप्तमः ॥ २६

तवाहम्मतंजयेरेवतीर्दैव्यएऽवासुसत्वाभंरन्तवत्यत्नु रोजागतएसोमसामयदभित्यमितिस्पृतम्महींद्रम्यसं मैडं वसुरुचःसताधयदोविश्रीयंप्रत्नमुत्से धस्तादिदोश्यै तएर- त्वंसुरूपोत्तरएसुमन्मावांरंपुनावैयश्वङ्कचौंवषड्न्तमुत्सो यस्ते सत्वापवस्वकाशोचौनेंडमेकाहाः ॥ २७ ॥

॥ इति प्रथमः प्रपाठकः ॥

पन्यङ्कत्समाख्याविद्‌ष्टम्पूर्वम्परि त्वासुरूपोत्तरंश्रासु-
हविषजरामागीयवाष्णोर्दवाम्यवत्वसाकमृच्यभिसोनवी
जनित्वेच्छजराप्रसोजरासोमसामरोहितकूलीयानिप्र-
सोत्वारान्तं जयमुद्वैखारम्यषमच्छाखारमभिपिखानस-
मस्यपत्वाशुमागीयवे प्रथम: ।। १

एतास्वे वमित्रटत्सकालश्वानग्रभिसोदैर्घपहिन्वा-
दिहिङ्काद्रिव्यमेवमेवतनिहृन्नेमोषुत्वापार्श्वमस्तासन्ननि-
यस्तं सुरूपाद्यभासासितान्यभिघवाच:सखातृचेश्यौक्तमि
न्द्रासितकौत्सशुद्धाकौञ्छरयिष्ठानि द्वितीय: ॥ २

इन्द्रापावनीयेत्वासुविशीयमुत्वासुरूपोत्तरादारसं-
त्वारास्तापिपूर्श्नितथाश्रीणश्मानोहाविषमशाम्मदावची-
नेडावष्कतानायंपूत्रीयहिष्ठीयेधर्तागीयम्प्रसुपारमयंपू
कोञ्चावङ्कसन्दे व्यन्तिसं सैधुचिते तृतीय: ॥ ३

सुतात्वाष्टीत्वारेपुनापृश्नाभीशवोमरेसिन्नमयम
दुदेव्यश्वानोगोषूक्तं पायावारन्दत्वसासवापरिप्रिवाज
मूर्मिणाकोशन्तोषिवाम्भानवानूपानिश्रीणाग्ने यश्सो-
आ:श्यावागवनिषेधा:दवत्वशासागवे चतुर्थ: ।। ४

एतास्वे वानूपरथसोमा:कौश्राधश्सुतात्वाहूत्वेइड-
पुर:शुद्धापदात्मसाचितमैडन्तोषियैधाद्वैगहश्रीहन्मन
पुर:पारसाग्निपवत्ववाचे यंपरिप्रिषूक्तमेकसाप्रत्यस्यै वित

मिन्द्रोऽच्युतमग्रसुदानोत्तरमृच्यभिप्रगोमंत्रमस्ते जराबृषाणीयःखासुभरमेनामिन्द्रं पञ्चमः ॥ ५

प्रवस्वद्वाष्टीपदीइन्द्रयन्नगामभिसोद्दःष्ठोत्तरमृचिचित्रचेभोशवोत्तरःस्वःपृष्ठःहिन्वावयमेसिष्ठम्प्रु रःशुक्लयन्त्वमिन्द्रद्विहिङ्गदेव्यमग्राव्णवार्शम्पवस्वत्रीयंबृहदाग्नेयत्ररस्तोदःश्रीणाम्पिबापृष्ठमध्वर्य्योपर्शीड्कूलीयैतवद्वन्मागतगौङ्गत्रयाख्यानिस्वासुवारहवाशे षष्ठः ॥ ६

प्रस्वदं चित्ततमैड्ङ्गामंत्रवेतम्प्रुरःक्रौञ्चायंगोतमप्रोसारथ्यातेसौग्मतःहाउहुवाद्रशिशुसिष्ठम्परित्यमृद्वड्वाग्नेःग्नेयेपुनामदृगकाश्वभीनौनिषिधसाध्रेणीयान्निस्तोमम्मन्तपुनासीमसामालेयम्प्रुरःशिशुमुहुवायिसिष्ठकौरसमभीनःस्वारंधतांशार्णे सप्तमः ॥ ७

हाउहुवाअक्रान्त्वासिष्ठपरित्यमासितोत्तरमिन्द्रापारमभ्यस्तङ्कर्णोवसायासमैडमांज्ञागःश्नम्परिप्रधन्ववाजजिद्दोनाः ॥ ८

विशोविर्तमृचितंवस्तुचेत्रुध्यंयजिष्ठमैध्मंजिन्नपर्शैड्कूलीयसन्तभिनिपुनादुक्थम्पवपानोजरास्वसेभीनःकाक्षेंश्रसोमागौप्रसोमदेगतहन्महारयंणानिस्वादिका-

चीभासे प्रसुशुवापदान्ते हषामुहपोत्तरर्षभे पुनीषृष्ठे प्रथमः ॥ ९

एताश्वेवकौल्मलैषस्यशंकुकावेदमाष्कृतमभिसोपु-नांवाश्वमौशनएसाकमिमाधसङ्गोमत्यौष्कलमुभयंवाश न्वामिमानवौत्तरक्षद्वीहावमग्राकृतमभिशग्धिमानवा-द्यमात्वाह्राजंयोरानिचंयमास्त्वमिन्द्राग्निमूसचांपिबाज मवर्त्तः कावमामन्द्रैरभिनिधनंयथामनाज्यन्वमङ्गमीढे द्वितीयः ॥ १०

आत्वैन्द्रसुतैावएश्रीयंप्रतिष्ठैषाजराश्नुध्यमुसत्ता-श्विप्रतुर्थ्यौतिषंयत्प्रयायतेत्यसोद्रूदमाभाद्रूत्यौशनान्या शूच्चात्वएसवाश्रुध्यम्यवंस्वाभिप्रिसिष्ठंयदेषप्रकाशद्वतिज नसैातावोकावानितोषिङ्कवरन्तन्तेमभरम्पुनाच्छन्दस मेकस्यां तृतीयः ॥ ११

तवाहंपृश्नेरकस्यामसामार्गीगोमानाग्नेयंपङ्क्तागाए सन्तनीद्रोगोष्ठपुनापङ्क्ताग्रान्तन्वामगौवयक्षसन्तानिप्र-हिन्वाच्छिद्रमभीन्नस्नुष्ठेरकस्यांत्वान्तएहिन्वनीडाना-मुपावौनेडमुत्सोवितङ्ग विश्नीयंपवमाकएवंप्रसामाभी कपर्षौडेप्रसीद्विशिक्षादेव्यएवादिशवंप्रसुवैष्वामित्रस्वार कौत्से चतुर्थः ॥ १२

ऐतोस्वैवान्वियंत्नथा।इरिश्रीयस्तं शाक्ममदावांश्वसूता-
न्यथंपूर्बोत्समैडमुश्चांमिलटतसाकंलश्वान्योशनवैतृपे-
तिसुःसुतासात्रवांश्वितवाहम्पुष्पदुक्युमासडवानिवि-
दावश्वितियस्यमिधनंपरिग्रियामार्गीयवमीनिधनम्पर:
शुड्डीयमैडंमुच्चावैषावाद्यं पञ्चमः ॥ १३

उच्चावैषावंद्वितीयमेकसप्तंतृचेस्युषमसात्रीमसामा-
ध्यन्द्वेडंपवस्ववासदृस्वंपरित्यंवाङ्निधनंक्रौञ्चम्पयूँवि-
तमृच्योक्रोष्णिहमजीमृज्यकावरमेकास्यांहचेपुष्पोत्तरंत्र-
षाषूत्तकलिपुनोभयतस्तोभङ्गीतमंपुरस्ताष्ट्रौस्वारान्तमा-
कारान्तस्वोच्चामार्गीपुनीर्हिद्विड्डादेव्यगतपुष्पोंगृय्यमम
धुमुत्यश्रोजि पुष्पोत्तरे षष्ठः. स्वाध्याश्वसूत्त मेकस्याए
सत्वाणि ॥ १४

प्रत्नमुद्दुपशिच्चासुफमिन्द्रेविश्वालियन्तवोभरन्त-
मङ्कक्रुभंवरिवःसाहीयमुत्सोभिनिधनंकावमेषवृत्रा
लेयमाष्क,ततंवैवियमुत्वालेयमुपदंविपवचीयांनिससु-
तिश्चासफेच्यांलेकचौमुत्युसेयंतृचेस्यांमुधर्ममुत्तरयोःक-
कुभात्वासेयंपरिप्रधन्वंप्रोक्षमेकस्याएस्वादिष्ठोरसमैडं
प्रथमः ॥ १५

सखायाश्चाश्वमयम्य घेतियद्वितीयमेवाभरमिन्द्रं वि-श्वमिंधधमिन्द्रायाहिधियेगायन्तिलेयमायःपुरमग्नेतक मश्वमेनाप्रत्युद्धमाउत्वामितिचैकेकोऽग्निन्वारदेव्यश्वध्या-निंसम्वावग्नेविवस्व ति च तानि यज्ञामहावैश्वामित्रे द्वितीयः ॥ १६

एतास्वेवदैर्घमचिक्कहितम्वस्ववषट्कर्चः पुरोऽग्रीयं-मुत्तरंगायत्वांविधुंवषट्वगमक्कि मित्तेवितेश्रायन्तीयंपत्र स्वाम्वीपत्रस्वसोमोत्सोद्य तान्नमेकर्चाःप्रायश्चित्तानि॥ १७

अभित्वाकरावमनुत्तरेककुभाविन्दुर्नोधसःश्यैतेसनः कौत्समैडमुत्सोधसम्पुरस्वचेपारमभ्यस्त यत्पुरउक्तःश्यैतेपुरोधसं कर्चास्तवोनोधसःश्यैतमभिप्रवःश्यैतन्नोध-सम्भित्वाल्वामिव्विवारेतवोदाभिप्रवःक्रौंचेभित्वापूर्वक-रावं त्वामिल्वष्ठोहि करावंहव्यद्यायदि महावैष्टम्भे प्रथमः ॥ १८

पिबास्वधीतिचतमसमेतास्वे वमरायरेवाद्धद्रा-वारंमसोप्रसुकरावतरंपुनापूर्णाकरावंस्वदभिसोसुतासा-ष्टम्भेतवपुरर्धतितमसमेतास्व वसरायमिन्द्रायेन्दोवार-मिसमांसितमसास्वाष्ट्रीयदिन्द्रविप्रियंपुराम्भिरदुम्महावै-श्वामित्रे द्वितीयः॥ १९

गायन्तिसाम्यासंक्वाष्टंगद्रयाक्रौंचाद्यमिमसाशायमेन्द्रयाचवितानिदेवःकाद्ववरंय्न साकवब्रह्मत्यरोक्नात्मप्रभुनिताक्नीयएंवाभिमुमरायन्त्व दाशुद्राबासुष्वापारक्षचैसामाःपवन्तक्नीयएंवासुवाराघ्रजंनिताश्ष्यावाव्रप्रतेश्रेःखगिडनङ्गोविक्को नस्तन्वाहवङ्ग्व्यए रसं मार्गीयवेतृतीयः॥ २०

अयापवावार्वतुरुङ्गोतिज्जगितंवरुणसामप्रवत्प्रक्राशिशमुद्रक्रांत्सामराजंप्रकारधीयएशिशुङ्गोतिषम क्राङ्गोतिषवादसप्रेश्रृङ्गमाजापुनायामेवैवगोरुपङ्गिरसंएसामीयमेतमत्यमितिगोवाराहमुद्धवायिधर्गाद्वाउद्धवा-चसाविसिष्ठ प्रोपामीत्रधर्त्ताक्रन्दे साविंसिमानान्निषेधे चतुर्थः॥ २१

प्रवाजिबोधीयमदष्टौत्वाभिनिधनक्काखवमग्नआ-हून्द्रवशामैप्रातिथान्यक्काअायंन्तीयं क्षुद्राः आयन्तीयं क्षुद्राः॥ २२

(इति वृहत्-स्तोत्रियाधिकारः)

स्वासुतरमेनाप्रत्युद्ममाउवामितिचंत्वामिद्धर्दभि सोन्तरिक्षयद्द्यावैरूपम्यविद्मरिष्टपवस्वदायवंवापिबाम हावैराजमषायएवमिन्द्रोहद्गिरंरासि स्वादोवांजीयंप- वस्ववार्यंभाष्टेडाविंद्रायेन्दोरेवत्य:सुरूपकृषभउभेयच्छ्रेग मद्मानुभद्रंयस्मेनेरक्कः:पवस्वदेशिरामक्री स्रोषिस्थान-- सङ्कृतिभर्गीयशीऽसि सुषमसार्विसीतमसीक्कः: कयातरं दशरात्रः ॥ २३

पुनातरमभिसोक्कोरूपेन्तोष्यावयामषांपत्यशाक्करे- यथायज्ञाचतरमत्स्यहत्प्रत्यस्मैतरंयज्ञाप्रसुस्वरस्वतुर्थं मत्स्ययंपूषाद्वितीयमेताश्वे वहतीयंप्रत्यस्मैसुतासःप्रथम- स्यप्रत्नांभ्राजविभ्राट्तववयमेन्द्रमिद्दंश्रायन्त:कौत्संगमि न्द्रकांपुर:श्रायविकर्णंपरिस्वानभाभ्राजमुच्चाम्ने वृंतंमू- र्द्धापुरोभासेतवांहन्तरम्पुरोजिहत्परीतस्तरऽरेवतीरे- वत्यलमग्ने वृहदभिसोपरीतोनाक्कं जग्माव्होत्तरेतदिदा- विकराजनदेव्येपरिस्वानःशिरामक्रौग्ने ततपहृचेलाव्द- ऽसंवत्सरः ॥ २४

पुरोविर्णांऽस्वादिशिरामक्रौषायस्वेवाषाद्वैरभिला- त्वामित्तरवहृद्विपदोत्तरेपर्यूषुनदऽसऽस्तोभःपुनात्समच- मेकस्यांधत्तादीर्घतमसेःकौयंपूभर्गः:स्वासुवरसामाऽम-

बृहच्चेत्तं स्वाभिरामर्कः किमिवबृहत्पवतेयस्तोबंलभिदेक-
श्रैलमिन्द्रयशःपुरोजिभर्गःपुनास्थानुस्वासुसमहली-
सामनीपुरडुन्दुरेरींचे एकाहाः ॥ २५

आज्यदोहानिप्रतिलोम्मानिप्रसुन्वायसोतिस्तोवां
चकृतिश्चायक्लतिःस्वासुरश्ममश्वन्नतमभिवाजीव्याहृति-
सामानिपश्वभूर्भुवःस्वःसत्यं पुरुषइतिस्वर्शिघ्नीचायंपूतं
मसःकचंश्रीवास्थानन्तिस्तोम्ने रर्कःपरिप्रधन्वदीर्घत-
मसोर्काभिस्वावृषभतरंयज्ञावृहद्भिप्रवृषापवित्रंधर्त्ता
इतिस्तोभाद्विरिडचतुरिडषडिडाष्टडानिपुनावर्षपरि-
प्रियास्वाभिरामर्कःसुतावृहत्पुरोवार्कजम्भाद्दामासो-
मान्तेरिवमभिसोवषामक्विवोश्राजीयस्वादाम्नेरर्कोद्दिर्यं
दीर्घतमसोर्कःपरिस्वापयोष्ठीर्नाः ॥ २६

माभेमतरमभिक्रतश्चेनःप्रतिवाजीयान्यभिप्रिया-
दीर्घतमसोर्कउत्सोभर्गःपरिधीनाथर्वणस्त्रीवान्तस्तम-
सःपरित्यसंकृत्येकंश्वाःपुनायशःपुरोजम्भोत्तरमुत्सःस-
सर्पउत्समोभिप्रवाश्वंपुरोद्वितीयसत्तापि ॥ २७

तंवेनवषामभिप्रवंर्षावृषाचैकवृषंचपुनाश्विनीवृत-
स्फुरउत्समेतास्वेवापांवृत्तेपुनागवांवृतस्वादुत्तरमेना-

प्त्युड्मांउवामग्ने विवस्वाविकद्रेकेषु्ण्हद्ग्मे विवस्वद्वर्षपृ-
वण्सखा तौरश्रवसे प्रतिलोमे याम मायज्ञोःप्रायं-
श्चित्तानि ॥ २८

यज्ञेन्द्रेकर्चःसखायोधावृहद्भिःसखाविःपरि-
तन्दुयोधाद्वौपादौविरभ्यस्येदपुनातरमुत्सःप्रत्न दिर-
भ्य त्तमभिवातरबृहत्त्वामिवृहत्तरन्त्वामित्वण्ह्योर्हिअभ्रण्
स्वासुंहृत्वायदिन्द्रयेतिचयद्वायदिन्द्रयान्तरिक्षेत्वासुष-
भःश्रुधीहवमितिचविकर्षेषुवत्सातौषड्डायदिन्द्रेद्राया-
ह्निपुनापुषाजत्वादामभिसोहृत्वासुतासोहृत्वान्तरिक्षे-
तवमुरद्वतिवैराजऋषभण्सोमंउष्वापवस्वबत्सास्तयोरि
वातौषड्प्रसोप्रसुतरंपुनापूषाबृहदभिसुतासोरूपेतव-
पुरद्वतिमहावैराजम्परिस्वारेवत्योभिसोसुतातरन्तवबृ-
हत्सोमउष्वापवर्षतरंमृज्यसोमाह्वत्पवस्वश्रेयःसुता-
सोरिष्टमग्नआयाह्यन्तरिक्षण्होतारंवत्साअक्रान्तमसः
सामउष्वापवस्वसिमाःचुद्रा इति चुद्रा इति ॥ २९ ।

(इति लघु-स्तोवियाधिकारः)

॥ इति द्वितीयः प्रपाठकः ॥

तावृव्यमायि यद्वृहमद्वद प्रकृत्येड्रऐ इत्येतान्यायिप्राप्तमोद्र भवति हिशब्दएवाहिसौभरामहीयवयोरेहोभिहवद्दैवोदासे त्व०हिकौल्मएकारस्य प्रकृतिप्राप्त ऐ भवतीहवंद्दैवोदासे पुनस्वावृद्धमप्यायि भवतीशानं शुतरेस्ताव्वे पवंते क्रौञ्चे वसोनिरेकेभिनिधने यद्वुडं प्रकृतिर्भवति तस्य ग्रहणं निधनेहीषीस्थ०सर्वत्रनजिनेन्नषातनिनिमिशु तिस्रोहितेचविप्रलेभीजयेभिर्नत्वेसोमजयेनिमायस्तेहितेममद्रिपरवेतायां मानंजययोर्विषन्द्रिद्रोमृसन्तनिनि॥ १

यौधादेवस्ताव्वेश्चनेषीद इन्दुः ऋषिः येना देव्यैःखोनां धसेभि षुधे रिक्ने स०हितेयोनि द्रोणेसर्वत्रपर्षि सफेपीतास्ताव्वे क्रमीत नांए. च्छालेताइसद्विदे इन्द्रः अप्सुजित्सर्वत्रनात्म्योहुएशीयेयशुध्यजरावोधीयेषु वाभ्र्वेञ्जि तो मथि घजि य्रोहृद्धाहीसर्वत्रनंकाशंयशोपद्रवयास्यषिधसोमेसामसाध्नेषु श्वाचो धीगवे घजि नस्ताव्वे अभि काव्वेभिर तांतौ आधितृतीयायांज्योयैपप्री०सर्वत्र सिषं द्वाशे जेषुः नासेमद्रै दभिर्व्याभिः तिशृ स्मायि कास्यु तवेत यन्ति प्रथमैः॥ २

क्रत्वेसुते रावदासेषि रात्रिपारेकूर्मिम् वार्षभेमाकौ गारभयिन् ननि गोभिः त्वांस्मिन् सोमेध-

तयेच्छ्वेनिधनयोः कौत्समेषु मनि यौधादेव संकेषि ऐडस्याच्येषसि ट्सि नोद्गीथादौ देवो द्वितीयः ॥ ३

सिष्ठेषिपृ थिवीं षिम एषि श्लैवेभाणि छन्दसेगडिनान्त्येति वे ष्मतेवपूर्वं स्याभिः नधे शंकुनिमहि क्रौञ्चे भि यामेपूर्वौ द‌ृष्टेपतिंद्वितीय अभि ष्टम्भे दद्दे वेवित्सर्वत्र नामरूपमितुविलम्बेषु मद्गभनो संक्रोशेचद्वृक्तिः तिंव मंजी धेन वस्ति मदे ष्टम्भे स्वर्दी रवेसति शैहेतिक यन्तोस्तृतीयः ॥ ४

शौक्लेश्रिये लाष्ट्रीसंस्वे प्रमतान्वे दुम्नौ भवो भिः हारिवर्णसहि दिथ पंलौः रघेपूर्धि असि ध्युषी द‌ृष्टेवे धनि शवेवपूर्वं परि तदि साहीयेविप्रभुवे शाकिमुरौं ओजि कर्सा स्विनः यदि पृश्निनिस्यद्विस्तावेश्रौसायवेयातौ माद्दी हत्कि वद्दी नत्रिस्तावे षादीयेव्रातौ अग्ने अभि वात्सप्रवते द्वीः एति राणि सैन्धुक्षितेनम्रे चतुर्थः ॥ ५

प्रियद्वद्रा ज्येष्ठं हरौ बृवौ त्स रिन्द वितेहेश ध्युश्वेद्भिः येव पैंगा वाचेमन्द्रौ यानिध्युश्वेतान्यग्ने-स्विणिधनेमन्द्रौच शेशयूद्दषि पतौपूर्व नोपि वने श्यतिः क्रोशेप्रिया वौणि तेसर्वत्रविवृत्तमकारप्रत्यय नमम्ने ज्यन्ते हिंतमवतेदाशस्यत्वे पार्थेजभिसर्वत्र दाश-

स्यत्येरर्भति साखी सञ्जयेद्यवि मिबेक्रुते चिते स्वबे अस्मिपूर्वं महामिवेगहि हरीं क्रौञ्चे चैविसर्ष्व पञ्चमः॥ ६

रयिएरंधे न्वसिरयि रुणासाम्नि भिर्वन्तीये विप्रब असिनिधनेदन्वतेप्रथमे परि वसासर्वच तुवे सःपी- द्वितीय क्रविः तुवं प्रव स स्मःपी असिवतीये दीर्घेदुन्द्रः- आये ममि कार्णश्रवसद्व वितेरेसर्वत्र क्रौञ्चभीयाः श्रेष्ठ सृनि जुन्ति मृनि गृदे छदी षष्ठः॥ ६

तनिपर्णाकुलीयेषुन्वे वा शुलरेषसिपूर्व यास्ये- षसि दसि प्रिय षसि अभ्यं तवणे सुते देके स्वर्धो कथं दर्षि खानसेसहिमस्यासे माने मोर्चेस्याभिः शांकरेदवोदगोथे वर्मा मूर्धेनी षो समोः अभि यवी कात्तंयशेतोवो यितवे हविषेयाहि वात्सेवाहि वी- ङ्क स्ति वी यों रुपेपवि तवे दुन्दो पीयूसर्वच सप्तमः॥ ७

होन्द्रातवेयवे पविटले तवेपर्ण पाञ्चे भि हन्मग- तयोर्मनी हदुक्थेभिये उद्दन्नार्गवेभ्रे वैपिन्टभिः नवे वंशेनस्तावेष्टमः॥ ८

ऐषिरेटोद्वितीय दपूर्वे श्यन्तिः स्वरे धर्मेणि- तृाद्दे धंर्त्तासि विशोवोन्दु महे नीयं छुति शमेथि

तौ ये मारुतेकवि: यसी: भवेस्तोवे संज्ञारेनावी नपस: ॥ १०

भीशवेसुते सामराजेषि षिधां थासि श्रायन्ती-येनदीपरिक्रुष्ट प्रतिप्रथमायां मन्तेषाविनोद्गीथे स्यासि काशतेबाजित् निह्ववेरेणसर्वत्र दशम: ॥ ११

सितेयोदेसर्वत्र मदे नरे सर्वत्र विधर्मषिजन्ति वैज्ञकुभेविवा पामी वच्शीयेमी रे श्रामो जिगेतेजा श्राभीकेदर्दे च्यीयेषसिपूर्व बन्त तरम धीत रोहित-पूर्वसाई स्यचे काश्वेनाई गाजी जिये श्रभि धीगवे प्ररि नाई मह्वे अभिसोहमपर्य्याभ्यासे देव्येप्रेह्वो दशरात्र: ॥ १२

पार्थे वत्ति ति तिमा जूति मते बांधीयेस्थाभि: कावेभि: धे सांह्वीयेनश्च श्रु मह्वि वर्ते भिन्न दलेत्र-मर्वत्रत्रिवृत्तमकारप्रत्ययम्धयम: ॥ १३

हिन्वे श्वते हविर्दसे यानिसिष्टेतानिपार्थे वंतं हस्त्र स्तावेशो. शङ्कुतुनिमह्वि दण्षट्पति रूपेतेजा श्रग्नेत्रिणिधनेभिर्थे येष्ठोहेतेष्टस्मे दासेसमी धीगवे वेपूर्वं द्वितीय: ॥ १४

सामराजेसङ्कत वन्ति पवि धिरो मीरे भीशवे-सुते उद्दुलायिसिष्ठेहेम: भि:स पर्ये तिरे मन्ति चैत:

पूर्वं अर्थायवेकविः शुचिः येचोत्तरे लौग्रेनाति शुद्धिये-
ञ्जन शीर्वान् गह्निरिपिं मह्नि रयिं भ्राश्वेभि मेष्टपे
सम्पायांवाणीः वंशी नानि व्यूतिः चीने तृतीयः ॥ १५
टासेचीणि रयिष्टोर्मगिपूर्व हाभ्यालौशेरजे
साध्येश्रेष्ट मन्तेवारे सिष्ठ नुर्वीः नचे धन्वे स्त्रिया भिः-
स चते सुमे गांति वचं दिये मरुताम्येनैामुनिं यदि
नुषी वत्तं देव ऋषिः सर्वत्वनाजीवितत्नीययोर्जनकावि-
प्रसोतरग्रोस्त्र उत्सवत्त देवश्चतुर्थः ॥ १६
ह्वाउनितृवते तीनां दवीः राणि कवीः लौग्रेति-
मनीयन्ति रातिं वते वांस्वे रसेसिष्ठे नए सेह श्रोष्ठे न
यानि मरुता मिन्द्रि वत्त देग्रस्तावे पार्थं युवीं घोज
रथे यूनि षेयं त्नीयेत्वचे प्रञ्चमः ॥ १७
ऐडकावेबृहन्नधि स्तिरधि ऐडयांमेमती सखी
वर्तेस्ववदी कगा सऌहितेहरिः पार्थेगा न ति दवीः
कवी सफेदिदी क्रावेदंभे माहि ष्टभ्मे मनिसर्वत्वन-
मीढे ष्कलेनिषी श्रिये बवी षष्ठः ॥ १८
धसेते भी ष्कलेव्रते प्रार्थे याहिं ग्रोजि रुणि सूनि
यात्रिट् सऌहितिसःपी वन्तीयद्वन्द्रां महे स्यपे काने-
न्द्रात् निक्त मीठेथ्योतिः सप्तमः ॥ १९
ष्कलेधि ति पत्रि त्रित हद्रुकथेसुले संवत्सरः ॥ २०

ध्यैतेसि ईशा यौधादसौसर्वतपूषायाम्नस्तोभे प्रत्यघे यूथि स्वारेपम खीनां सफद्वन्द्रा पूषो बोधीयेस:-पी प्रथम: ॥ २१

पार्श्वे अभि:पूर्वं सीये लेयेपीत्वास्तावे नए यौधा-कुवे महे तौया द्यौतानेमई यवी याभि: स्थानि दिवे-पूर्वं युगेमारुतए दु धाऽसि महि श्रुधि भाश्वी जम्बो बोधीयेयोनिं त्रीयेसिचं प्रब्व वह्नि अदर्शि त्रीयेंतानि त्यानि मन्तेद्वि योधामहे ग्रनेदर्शि तीरुश ती सुभि: एवयो द्वितीय: ॥ २२

देव्येग्ने धमेश्मती बर्हि:रन्ति केश अग्निं सऽ-हिवेग्नि: तर्सि: अग्नि: वाश्ववेदूरी त्रीयेप्रिय दुवी परेत्रीयेकविं जसी समी यत्त कावेकवि जसी दन्ती-येभि: हारायवेनिह केतुम्भे स्वाचि तृतीय: ॥ २३

स्त्लेत्के त्रीयेप्रदे त्यानि तानि वर्त देव स्तावे ष्मतेदुक्ष सर्वत् सऽहितेस्थाभि: वाश्वे प्रियाः षंखो: सुचेद्रे ह द्रे स्वा जिगे हिन्वे सितेरयिश्चतुर्थ: ॥ २४

षभेदवे वन्नीयेकवि: यानिवारेतानित्ररीषुक्रत्वं च यानिसिद्ध तानिपार्थं लेयेये तुभ्येत् अर्ते षस्मे सऽ-हिते ज्योति: सफदेवा कावेनक्रौ ज्योति: बुलरद्वन्द्र-नोद्गीथे पञ्चम: ॥ २५

कावेसव्रत् मैात्रेयोनि विशीर्येवाजे वन्तौयेत्व-भिरत्ये रुणसाम्निसुते दासेश्येत् वन्तीयेमोभिः वत्त्याद्दी षष्ठः ॥ २६ ॥

षेधेरयि उत्तरेनिते भि एश्रूवारेदुभिः तंतेवारेप्रि पत्नीः श्रुधीहवारेनत्री प्युषौं षेधेभि रुणसाम्निन्टभिः सप्तमः ॥ २७

यौधापर्युद्गीथे देव्येरैव चित्यसे वारेरन्ती गहि अभि साद्दीयेयस्वे काशी तत्राए एकाहाः ॥२८॥

॥ इति तृतीयः प्रपाठकः ॥

कत्रेमाद्दो नारे ऊतिः स्वर्वन्निधनेपरि पृष्ठा महे पेश्वात् क्रत्वे ष्वेच वोश्रीयशेय धियेमार्गीयर्वेकिने जयेत्रामराक्ते देव वैखानसेप्रिया प्रथमः॥ १

तनिन्द्यभि पार्श्वगह्नि वाचं;साम्निदोद्वितीय देव वक्रिस्ताव स्वरो शोक्त श्रिये सितेसने मदे द्वितीयः ॥ २

त्रीयेपरि नन्ति पुरेत्रीयेप्रिः सद्वत् विशीये-प्रिय सन्ति संत्रारेभूम्नि श्वानि षतिसःपौ धर्त्तात्रीये त्वीयो मांदी देव्येयेद प्रिया तृतीय; ॥ ३

मीशवेसोद् न्टभिः यान्निपाथे तानिस्निष्ठे देव्य-

एदु साहीयेसन्दे वृहद्वारेमाही क्रोशेधीभिः प्रक्षेसुतं धीस्वर्षधयोर्द्वीयाम्वतुर्थः ॥ ४

त्रेयेदेवे त्रीयेभित्तीयायां बोधीयेदेव संवे त्रीयेदोया पञ्चमः ॥ ५

त्वाष्ट्रीयवे भीशवे मनी सिषठेमथिः गहि वाशे प्रिया त्रीयेचीतीसर्वतनवा खाम्बीगवथोः हदाग्नेथे-दूरे गतेतोदि गौगवेर्दिवेपूर्व परि याखेपयुदगीथे दिवा यानिपार्थे तानिराहे वांशिशीप्रा षष्ठः ॥ ६

सारथिनियासीत् प्रमि द्रुव वति धियो धेन तंपि तेतिः सोग्मतेपनी यसी मिह्वी यानिपार्थे तानि हाउहुवाखिसिष्ठे त्रीयेतिवा द्रिस परिश्वाष्कारणिधने न्तभिः षेथम्नयोर्ने मंतेदिच्यान् दस्येसोमसाम्नित्वसि दसि सिष्ठ पूर्वणोक्तं शर्गो हरिः सप्तमः ॥ ७

अकान्वासिष्ठ्यमे सेनः देवान् गीत देवान् द्रेप ज्योतिः सितेमदे यामएषि एषि शनेमती सरे वीषः अंती षावीदहीनाः ॥ ८

गतहन्मनयोरतुके प्रथमः ॥ ९०

शकुर्निबमौ यानिपार्थे तान्यौश नेर्फलेनेमि वाशे-षणो मानवेवेध आष्कारणिधनेवेद मंद्रने नितेस्यद्वी इन्द्रस्ययशसिताशि एकः जमवर्त्ते तुते अभ्यन्तो मं द्रेः

याहिं धित् येमुः डूत् अति। धन्वे हारी गुम्भी सुम्भुं। मनाज्यं गहि। काण्वे देया। मीढे क्रवी द्वितीयः ॥ १०

बोधीये च्छन्नो दर्शि। परे बोधीये च्छति। श्रुध्ये श्वेह। वैश्वज्योतिषे षीद येना वेद। श्यने यंदों यन्तौ। परे श। नभ्रे कि चीद्या देव सुमे। भाग्ने-देव। रंथ्या तेत्र दृमे। शुभार्गवे म्नानि त्रैष्टुतसिष्ठ याणि धियः। एताः कावे बेद। परे कावे वीत् दे। भरे पत्नीः। वे पूर्व तृतीयः ॥ ११

अग्नेस्त्रिणिधने मन्दी। संजारे दे बे द्रे वे। नीये मी वी तीसा ज्योती षाव्रीत्। स्वारे कौत्से क्ने चतुर्थः ॥ १२

श्रोनिधने हिन्वे। क्रौञ्चे प्रिया: रयिं। ऐटते म्नानि। श्यने यन्तीः। हूपे धेन श्रुष्टीः। संश्रे-दिवे-पूर्व। वाभ्रे तीरा बे-पूर्व। मार्गीयवे मही पञ्चमः ॥ १३

सुंचे मन्दी। क्रौञ्चे मदे। शाकलें त्र्यंवा। आष्का-रणिधने भि-पूर्व। मार्गीयवे तेजा। हैगते सीद संत्राणि ॥ १४

सफे शिचा हिश विदाः । वैकांकुभे ऋशौ भि-गीथे । कांयते रिन्न उपास्मे-न्नीये ते । दवि-न्नीये तीया हेट क्रमीत् । पव-न्नीये वारे नधे । सफे सुन्वे सुषि । प्कले शिचा हिश रयि । लेये नस्ते हिशू । नौधसं पूर्वयोक्त । लेये स्यते । प्काल इन्द्रा प्रथमः ॥ १५

भरे ब्रह्मे । नामैधे पतिं चतुर्थं स्वरे अभिं । लेये रावी । परे लेये यूथे ष्विरे । कमश्वे भिंयौ न्मावी । वारे शि स्वि तबेत् । देव्ये दर्शि । परे देव्ये चोदे । अुध्ये प्रिवर्थ्यां द्वितीयः ॥ १६

संहिते री ये याभिः क्रतुमी । न्नीये तवे । आयन्तीये दे वे प्रायश्चित्तानि ॥ १७

रावतरइन्द्र । धसे नवे । स्व तधसे विट सेणो नौके रेः । क्रौञ्चे भि । परे क्रौञ्चे जरि हस्वे तानी गिरेः । रावतरे भिः आस्थेत् । ष्टम्भे तासी प्रथमः ॥ १८

सहो-दैवे स्वाद्रिः । परं सहो-दैवे नीषा सचे वक्ति उत्तरे मरांये नीषी मारे । वारे भिः । रावतरे थे । ष्टम्भे स्येशी सखे । तव-मरांये परि । वारे र्वसि । त्वाष्ट्री गहि हरी । सिष्ठप्रिये स्ति तेदि । महामित्रे कविः वजी स्तोमैः यमीद्वि तीयः ॥ १९

क्रौञ्चे घोषे। विते त्सुरि। असा-वित इन्द्र। सुते ष्टुती:। गाय-विते चेत। श्वतरे सिंच देवः। त्रैये सूरी। मरांश्च ग्नि ढोधी प्रेहो। वारे पूर्वे तीर्थाः। वाभ्रे ताम्नः। शैखण्डिन आप्त्व-यदि। श्ये न दूया। मार्गीयवे सन्ते तृतीयः॥ २०

वार्त्ततुरे स्त इ। औष्ट्रे च यानि। प्रवद्भार्गवे तिरे, तिसा जूतिं मते। उद्वद्भार्गवे-येना येति ऋषिकृत् सामराजे थमे विध मक्षि देव वृष्णो सुरी ज्योतिः। कुत्सस्याधिरथीये वक्ति एति रेभन् जूति मते। अक्रान्ज्योतिष-थमे देव वृषी। अग्रे सीनः देवान्-पूर्वः। यामे क्रमीत् अभि। गौराङ्गिरसे वि च। अर्थासोमी-येन्द्रे वा श्वाउहुवायि। सिहे राजे। इन्द्रस्यापामीवे नानि चतुर्थः॥ २१

अभ्यन्ते शिशा रोया रेक्ष धो भिः प्र दै थि मौ। आचाभ्यन्तइन्द्रा हरो असि। नैपातिथेन्द्रे त्वा। आयस्तीये वारी चुद्राः॥ २२

हस्ते द्वितीये सम्भितरे चोतिः। तृतीये शंह सीमो। पारिष्टे पवि कावि तिभु। वैराजे साधि आर्हद्गिरे हिवी हरी। रश्मइन्द्रः तमित् रसी। वाजीये वरीः। अष्टे डे मेधि। वत्तीश्विन्द्राः। रैतवभर्षइन्द्रे

श्यने दीर्घ शर्क्ति । पूर्वं देवी । भद्र रुद्धिः । संक्रतिर्नि परि । भर्गं हविः । तमसोर्के राजे कविः । तरे भीषु वासि दशरात्रः ॥ १३ ॥

यज्ञा-तरे तेय । सत्य-बृहति षाते । प्रत्य-तर एनं । यज्ञा-स्वरे तत्ते । प्रसु-स्वरे सावी । मूर्द्धा-भासे ग्नितोषुरेव । बृहति ह्विवे । परिजभ्मे हविः । राजने स्वाद्वी योधीः । स्वाशिरस्तमर्के कविः विश्वे । कुलान्दप्रथमाया मोर्या षिभा साप्ती । द्वितीयाया मग्न सांप्ती । तृतीयायां महि अग्नि रेपु देवा संवत्सरः ॥ २४ ॥

यस्तेन्द्रे वरे वे-पूर्व नभं । सत्स्तोभे धारे अभि । परे सत्स्तोभे तोनां । तमसोर्के नृभिः हरिः त्वभिः । वदसायाङ्गभिहि तीयं हरिः क्रभिः प्राचीं । बृहति सास्त्री । स्वाशिरामर्के दिवे-पूर्व । बृहत्यस्मि । वलभिद्वि राक्षस्य काशाः ॥ २५ ॥

यानि पार्थे तानि द्वितीये दोहे । यानि संकोशे तानि तृतीये । रश्मे याद्व वच्चीः । अस्वव्रते शत्रतिः । अयंपू-तमसेर्के पतिः । सर्वविधने यानि तानि । परिप्र-तमसोर्के तेसा च । तरे शोषां । बृहति यिशौं । स्वाशिरामर्के भविः शुचिः मदी । बृहति

द्विवे-पूर्व। वाजीये ग्नि। पयसि विश्वे तिमा-हीनाः॥ २६

वाजीये प्रथमे ग्निं अग्निः। द्वितीये महे। तृतीये प्रति वार्षो: तना तनी। तमसोर्के भि प्रि नीथ रीय्र भिः ये अभि अधि। अध्यास्यायान्तमसोर्के प्रि। संकृति विनि• परि सवाणि॥ २७

द्वितीये सन्धि-बृहति मही तवे। अग्ने बृहति शुषे ख्रिभ्यां। त्रिक-बृहति सद्दे। यामि क्रमीत् यधी प्रायश्चित्तानि॥ २८

रिच्चे वद्दं। वैराजर्षभे द्विः अश्वि वांणि हएसि। उत्तरे षभे वर्क्ति नो षे वामीत्। वत्सुभ्याए साद्दे प्रेषु-वत्साया सङ्ग। अतीषङ्गणी हस्तायाए सखे। वत्साया मवी येव पेगी। वाज-वत्सायां वेधा वीश्व। एतान्येवातीषङ्गयोर्वी वर्ज। सुतान्तरे वे। तव-बृहति द्विवे-पूर्व। अरिष्टे सखे वे-पूर्व। वत्सायां मग्नि यज्ञि परि णीतां सहि। तमसोर्के मरिस। इन्द्र-वज्रि-आद्यायामिन्द्रो द्वितीयायां पूर्त्तिस्तृतीयायाञ्छा-दसी। षुसिमातीषङ्गेन व्याख्यातः प्रकृतिभावः प्रकृतिभावः॥ २९

॥ इति चतुर्थः प्रपाठकः॥

सौभरं भौवर्त्तजयानां तृतीयं तुरीय मपीयू वाजे तौ च्यतिमंधुदसं मनाद्यं जये श्यावाश्व चायावास्तासो-मधाम सफपौष्कलयोर्वै श्लौष्यामूने द्विपदायां सखा तुरीयं सोमकि द्वितीय मन्वयिक्या मच मौक्ष हृत्रियं-मिमाहि मधोपारिष्टे रयिभूर्थि त्रिष्टुभि चोतायां शने च द्वितीयचतुर्थयो मयन्तो युधा ते देवो चातये वक्त: सर्वत्रान्त्य मपुरन्धिमग्नश्चतिमाग्धादि श्म धृष्णास्मान्म-धाव श्यावस्यैस्वरवेषु षष्ठ मनो बाभरादिर्यौधाजये सवै मरारुणस्तावीपान्तानदेव्यो दाशौसो हव्यो वो जनित्रे सङ्गे सैये द्विपदासु त्रीये दात्ये सनाद्वितीय वैरूपे प्राश्नोश्चचासंयोगे बक्तयाभि: सुशंतवेधृष्णा सोम-वारांग्निहोतयोस्व नासाहंधीन्मु द्र नद्वस्वदीचक्रं त्वानि च्यैतिषामृद्व निहातायाः सोपमव्याञ्च:परिपरित्रतुरि-मानृगीदस्वते चार्गीरिप्रभृतितिसैषाके चाद्यन्तायों-रैटलसारथिनोरविगीतां विश्वामित्रे च सर्वासु नवे च विकल्पे नैकार्य यंवे मध्यामरसन्दोषं प्रथे चाप्नुयोरून-द्रुह्य वैधृते चि. सर्वै जनित्रसंस्कारराथिराजेषु चौतस्ने ष्टचमध्ये चतुरक्षर एकचै चोत्तरयोचं ग्रामि ॥ १

पृश्निन्यपादादिर्भादृनौविभिरप्सु कृताभ्रमृषाद्या-दनुरंसोपस्याभौपूर्वभिगीतादद्विनोश्चर्यश्चतस्त्वाचावि-

यँदन्तोभ्यो नोधसश्यायिन्द्रात्वादृतंनपुषा विश्छन्दसि च पूर्वाख्यिप्रस्तावसहकतुरीयएं शिप्रमतिसुतश्चयोः स्यादेश्व परं नोक्रयोर्वाल्वे च्छाले योनौ हव्ये चोपशि परिप्रधन्व-सखा-प्राणा-तृचयोः शने च स्वाभिनो-राद्यायाञ्च विकल्पे द्वितीये चामप्रतजामुतो वलोपश्च द्वितनीचः फि इतिकृशादृहडएंश्ये ने जिग्यु यं मवाभु मत्यवरोहे च शाक्रो च नयं मजयेहारादृविताथभो-रिया च तावनेहारादिरनेकश्च दादौ भांसे च नौरश्चे निवे च त्वंल च त्वाष्ट्रीसामि हव्ये चायोनौ मत्सरि शब्दाः स्वासूत्तरयोर्दैव्ये क्रोदे हारे थे च धौ च हारे यास्ये देवी जयसाम्रमिकर्भ्रोणाधनाया-स्येषु च थे सार्वादियंन्नाख्ययोर्हितान्तःश्वतः-पाष्ठे हि ष्ट प्रिये सोमा वार्षे सोमौ दनुते तुरे श्नाखादिर-योनौ पुवे इडापाय चाच मायायां वएशीये ज्ञाभ्य आभ्रीगवे च द्वितीये मसन्तु स्वारे च पर्श्व यामौ पृष्ठे चांजिमसुरूपाणां च मौढे व्यमश्रीगोयाश्चक्रावे ते त्रीये स्वासु पुना-देवं पाद्यायां मन्यत्र प्रमएध्यायो-र्भाद्रिष्ठाः शामेत वैश्वामित्र क्रतिथें तुरीयएं सर्वत्र षष्ठ ध्वचयोः पाजे थे भे दीर्घं परे सर्वत्राककुंभि हव्ये त्विवाया मपादौ घृतनिधनसांवर्त्तश्रोराबन्ययाम् ॥ २ ॥

घमृगांच्चन्तमेसे यञ्च पराञ्चवच नाहं पादलुरीयं वात्स्रा त्रिष्टुभि पाष्ठे च दीर्घे स्वरे घा गी दान्तोद्रौ इति चतुर्थे तौ च धोगवे स्तावसिष्ठे प्रत्यक्रामति सर्वत्र चमं योनौ पर्यूषु विशस्त्वा रिक्वं चान्न द्विपदाख्याय मायिन्द्रा सोमाभिधाने तृतीये वार्द्धतन्वा रातामतांदन्थायां त्वां धां मध्ये माग्नौ च मा गायती पहिताततुविशुद्धी यौदलयोर्द्वारं वाचःसाम्नि सिं ते थे द्वितीय मायास्थ आंन्धान्तोसंयोगे इगतोऽभिगीताद् वभाच प्रसोमप्राञ्चयोस्तवैमध्यमायाञ्च तृतीये बृहत्योहा वाथाः परे षष्ठ मत्तरं क्रुष्यते त्वमग्न आद्यायाञ्च मध्यमायां तृतीय मुत्तमायां चतुर्थ मनुष्टुप् प्रथमायाञ्च श्येनोत्तरयोर्द्वितीये सप्तमद्धिमितपूर्वयोस्तत्र मध्यमायाञ्च गीश्रृङ्गे द्वादशविंशेष्टुभिष्टुभि त्रीयतृतीयेन्नामायिन्द्रादिः सोमः प्राष्टमभिवन्नौ च पजूरम्य पूर्वस्तोमतेषु न योनौ ऊर्वन्तद्दिषा योनौ द्विन्व विशीये तायिष्यामादियोनौ च स्वासु शनै द्वितीय मन्त्रायाञ्चान्यस्य गीथोपान्ते नोषु बोधा येन यानि नौ प्रधाञ्चाञ्चोपायद्वितीयञ्चावे योनौ सिष्ठे च दारद्वितीये नदेपुरोजित्या हविषे च सवाज्यचायाए अर्ध्ये च नौ रम्य चोत्तमाया माय छन्मायां

तृतीय मायायां बोधीये प्रवाज्यायोगीथे तृतीयं द्विः क्रुष्टश्चतुर्थं मन्तायां वाशे ध्यमपादयोरन्त्यानि त्रीणि चत्वारि पिबन्तमंयन्तु न्हि वैच्छन्दसेकामश्रवे वनिहो-जितक्ष्मै हशन्यी: संभ्ने भि: कृष्टानि दीर्घे व्रात्याग्निष्टु-तोगीथद्वितीयसप्तमे क्रुष्टे स्वासु द्वितीयषष्ठे प्रस्तो तृतीयं मर्मृ-चतुर्थं यमोद्ध द्वितीयं त्रीये सर्वत्र कंकुभि चतुर्थं योनौ वैयश्वेसप्तमं पञ्चम मुत्तरयोरेकार्चेष्टमक्षीयचतुर्थं च ॥ ३

तरे हारादिरनुत्तरयोः स्वासु नवे गीथादिर्योनौ शोके. मान्तायोर्विच्छन्दःसाग्नेये काकुभे च योनौ सामराजे च पदार्ध्ये आभ्या पदादौ च दीर्घे म जाग्रत्त्रिर्देवस्य आश्विवात्समारुसूरिकारिदाशुपीतीरा-जने चाद्ययोरतृतीये जगतीषु च वाराहे प्रत्ययोश्चान्त्ये-षु श्यैते गीथषष्ठन्त्रिष्टुप्सु दशमं मध्यमायां द्वादशानि गोथषष्ठ रू पञ्चम कूल्याथाङ्गीथादिर्वामाग्गासो-मस्पतिः सेधे द्वा द्वितीये यथर्षं भ्रपत्यंषिणोदनः सर्व च पादतृतोयतुरीय वृषमत्याश्यावृत्तं धृत्तं च तृतीय विश्वासां विश्वास्ते मरायश्चान्धानन्दे अनुपादं नन्दा-याश्याने मागायतापरिदुहाश्रकुपुरः सखातन्दुदश्वा-दिषु च नन्दा पर मेकाञ्च वच्च मिन्द्रनावेकनीच भासु

सचन्द्रस्वरान्तं हित मनाकारान्तं स्वंसुश्चैकं स्तं श्व-श्चैके ॥ ४

अथ स्तोभगतागत मगतिः स्तोमस्य स्वरे प्रत्यये सन्धौ गतिर्विरते क्वचिद्विरतेव्यगतिर्व्यञ्जने प्रत्यये गतिरगतिश्च तत्र स्वरव्यञ्जनयोः प्रत्यययोरगतिमन्तः स्तोभा ये तान् वक्ष्यामः । आवबहुल्याद्याम्याावसतौ पूर्वं कल्पश्चादिन्द्रेत्यं त्वादन्नेकाराभ्यासस्य विकल्पो न गतागतस्य मध्यमस्यागतः सत्वन्नउवावृषस्वपुमा नद्वितीयायाश्चद्विप्रत्ययेयम्प्रूषायाए सर्वासु पूर्वं जुनिवेत्यस्य स्तोभस्यागतिर्यस्य द्वितेत्यन्तान्तरस्यापि गतिर्वाक्के होइस्तोभस्योत्तरस्यागतिरभिसोमाद्याया माध्यः स्तोभः स यतिप्राप्तो लुप्तगतिर्भवति क्रौञ्चयोः पर्याकूपारे चागतः स्तोभः पुरोजितीत्यस्मिन्श्छन्दे गतिर्भवति न गतिमान्पूर्वः स्तोभः सोभरे सनोयुवा तवेत्यदिन्द्रियायाए सर्वासु तवेदस्माद्यायाञ्चोत्तरस्त्वगतिमान् भद्रा इन्द्रस्य मदत्यनुमादेववाहव्यंप्रेमछ्वराय ॥ ५ ॥

अतः परं मगतिमन्तः स्तोभा ये तान् वक्ष्यामो व्यञ्जने प्रत्यये स्वरे तु गतिर्भवति शाक्त्र प्रथमायाए सर्वउत्तरयोश्चक्रमासत्यस्त्वएँहिरण्ययुस्व काचे सर्वे नेन्द्रए-

सुत॰ इन्द्रश्रोभिरायाग मन्नियमते घृतन्निधनेन्त्यः सर्वासु मधुनिधनेन्त्यं गन्देवोदाश्वारयोर्यीर्कावो स्वधाप्रत्ययो माधुच्छन्दस उपस्वसरं च याभूषन्ति सुषा-वसो पुनानःसो वृष्टन्ते स्वादिष्ठाय्यंयोरन्त्यगा मदृगे प्रत्नञ्रोतमेन्त्यो वैष्ठन्ते वय मन्त्रः सर्वासु करावेभिः प्रत्न सधस्तोवीयान्ते न जातमाविश्वाशीविस्तोचीयान्ते यदिन्द्रयानपायत्वादेवानाश्वेन्दुरिन्द्रार्यविश्वसेशाम-हस्तधावाचःसाम्नःसोप्रियन्देवाय विकोश हारिवर्ण-उलोकक्रमन्दान्नस्तै रथे प्रत्नाम्रतस्याभोशवे पुरुगा घृणाश्रोणान्तः समुद्रस्य पुनानायांमाव्नः सर्वासु स्वः-पृष्ठे सर्वे नाभिंसोमाध्यास्यायां विचे प्रत्नये पृश्निनि ज्येष्ठं यदिन्द्रन्त शुहस्तेनसुषादव्यः सुघृणां प्रत्न पुरु-स्याताषादीये सर्वे रथ्येयोश्च सर्वे नोत्तरे वृषां अचि वाजजिति सर्वे न रयिं मचिकृम वरुणसाक्ति नर्या स्सुमदा धरुणं वेनोय इन्द्रे सत्तु ददिशतिरनाधृष्टा-भिर्मधुपर्षिपृथुप्रगामोर्भ्यानभवद्वादचेन्द्धातुष्टिमेम-ध्यश्राविष्णु गौयतीवृतानि हिन्वन्नृताभक्तयर्मयोजतउ-दुस्त्रियाभ्रर्थंथसजूरभ्योयन्तालागोदयिर्माश्वपरि-क्षणवन्तिपूर्वपूर्वयोहुम्भाहिन्वविशोथान्तरयोरन्त्यो बो-नौ चान्त्यः ॥ ६

इत्त्विधने गोषातिरिन्द्रायद्रोणे कार्षयशी सर्वे न तु विवसेः साम सुम्ने साकमश्वमुत्तमाया माधः सर्वास्त्वन्यत्र प्रथमतृतीयपञ्चमा न मध्ये स तृतीयो लम्बे सोममिन्द्रायशुष्णः इहे हारायणे मध्यवमानस्य वरुणसाममङ्गिरोजुनी वैयश्वे पुनानायां मन्त्रो भासे कुतुविते नापवञ्चमस्त्विषः सितेन्त्रः क्रोशे भितृतीयाया मुभौ सोभाविन्द्राय पूषाद्ययोः स्वादिप्रथमायाश्चोत्तरस्तः सखायः परिस्तुः रक्षः सैन्धुक्षिते तिस्रोवाचोत्तमाया मन्त्रः प्रवस्वद्यायाश्च मन्त्रे प्रत्न पवमानगोभिः सुष्णादृत्यो दुश्मानोदावसुनिधने त्वःसोमात्तः सर्वासु मदेषु गोषातिर्ना विष्कृते त्वःसोमाद्यन्तयोः स्वादिप्रथमायाश्चोत्तःसौयवन्सुतायामुत्तरयोर्मैधेच्छापूत्यये ॥ ७

सामराजे पवित्राया मंनाक्रुष्टा गौपूलर्य वामरुताम्नेनौ सर्वे त्वाष्ट्रीसाम्नोश्च सर्वे न हरि वत्स प्रवमान वाचस्पतिः सोमस्पतिः सखेन्द्रस्य पुरः सखायोर्वाचीनं यज्ञं च ब्रह्मोदश युञ्जाद्यया गिरां ब्रह्मदाम्येयैन्ता यज्ञे सोमसाम्नि गोषातिस्तरे जनित्रे पुरउत्तरयोरन्तः स्वर्वन्निधनवृन्दाय स सुनुच्छन्दे सुतस्येन्द्रस्य यशस्यानुक्तो वैश्वामित्रे सरज्मार आनि-

धने तु प्रत्यये पूर्वयोश्चाभिगीते प्रत्यथ उद्वत्याज्ञापत्ये सर्वे न त्वभिः शैखण्डिने सर्वे नयेत्वायदीपविवशी-पतिः क्रन्दे शूर इन्द्रस्या उवाभीके सर्वत्र न सुवा-इन्द्रायाच्छ्राज्ञोरूपसन्तनिपार्थानामाउवा सर्वत्र नतालव्याद्यात्पर मतिहार मेके विरते गतिलोपः न सन्धौ रूचाहराड् १ उवार ३ विणी २३४ योरूचाहाराऽ २ १ उवार ३ णो २३४ ऽ क्रतिमिप्रीतोत्तरयोः ऋायन्तः सर्वासु वक्रासु सप्तास्व भिज्यांकाः पर्वसाध्यंबोराजुष्णा-नस्यातीषष्ठ्पवस्वाध्ययोः सिम्मसु च छन्दसीष्टाघायां यस्य हरे संयोगे प्रत्यये वृष्णि सर्वं न वशिप्रत्यये न वशिप्रत्यये ॥ ८

वादौमन्त्र मोचैः पुनाप्रतंस्त्र्यसुषापाहिपरिधौं-दुहेमण्शक्येपुनानायां प्रान्त्ययोः ष्टम्भे वयं प्रत्न-राय भासुतादण्ड्र चानिन्द्रं तवांत्वारं पर्यां प्रान्त्ययोः मीये विश्व्यु सुचितेष्टुभ्र राय: सण्हिष्टोयासितयोर यमस्याहरिश्रीलीये याभिसुतादिवःपीविश्वाकृशुष्टीये मिद गिरिम्पुरोजिप्रत्नाष्ट्राव सुतं च प्रान्त्ययोराग्नेये पुरोज्यग्निमाशुनाभ्वतप्रेसासनःपव चाप्रेसाधूम शुभ्र-मुम्नैनायदश्वसपश्चितयोः स्वादिमाक्रोसण्ब्रदाभ्यस्ति-श्चयं न पञ्चन्ते तृचयोर्व पुना चं सेभे पुनापरितवाम-

न्तवत् प्रतं प्रपिबाभिसो द्वे श्रीसम्राने यंद्रासे प्रासिते पञ्चद् ऋचे म मंन्तवदुक्थे प्रहिन्वोऋ: शक्न्यस्य-प्येप्र सर्वं स्वयवाश्वेपनकाार्वं श्येत द्वे ग्रौवाविन्द्रक्लायां च परमज्या: स्वाद्दोर्नोत्वपुराजोमार्वंल्के ति सर्वं: पुरो जिगिरिं जनिंच आर्षभं श्येनयो: प्रान्तरे वायोर्वंक्ते ति वास्रे भिसो द्वे मान्धल लोशे गोविच्छोमवद्‌साविमान्वरे स्वपीलाकाश्नौति नवे मद्वाभिमत्वसुषामम्रे चानुस्मारा-जरंधोत्तरवांजजिन्तियानावेन९ हंवद्ध्ये पुरानदे पुनायामे पुरायञ्चात्वलीरापारिष्टे प्रथेनावय पूपुर: क्रौञ्चे सार्मामिक आयांस्य नुत्मस्लवकावरंथन्तरयो: सर्व-चो प्रोक्तं ॥ ९

थेषूत्ते द्वे साव्यामर्योर्वैयत्वे जय उतो न: शनेन्द्र: वालेषां प्राभ्ययोराकूहविषघृतनिधनाश्वसाध्यानां द्वे सम्रान्ये यंद्रासे च कौत्मलाम्बीकावाभीकसेमर्षभमरुतां र्योनौ प्रमरुतां च चत्वारोन्द्रमलीये प्रवाहें सृषान्ति देव मपां न काकुभे स्वर सर्वं उयं वद्दाभत्वद्‌ग्यहृषाकेरयि मिन्द्रासंवेर्वौभियोभरेस्थूरमेवासवेर्योनौ परे च त्रजिगे प्रपश्च सोमवृकृषाश्वारे योनावाव्योर्मरुद्दे वाना मृती दिविषु मासिचे दिविषु मास द्वे पृश्निन्येकर्से सुमानायां मन्तावत्पर्याग्नेलयोर्दैर्घे चैव मभिसोमयोर्नौमान्ते यज्ञा

सञ्ञे चित्रे चामदाय कावबृहत्यपौत्तमं चाद्वाद्य पादाय्यं रहस्ये च बृहत्यविष्टपति छन्दसोः साहो-यन्नेतवं सर्वा त्रिच्छन्दःसु च वशासु योनौ च प्रशनवा-र्ययोरन्ते स्मग्रहणाद्से च न सोमस्त्रीयत्सु विशोधि-प्रक्रोशोपगवोत्तरवैशावैकर्चत्रैचहवद्धिष्यवरुणायवंवाजी-यस्दारचूच्छ्बीयपदनिधनचितषङ्घयवयामानां विप-र्ययो यथा योनौ ॥ १०

ग्रहणानि श्येते योनौ प्रेवाहि शृङ्गे वत्सायां कामश्वे च पूर्वे हरति चायोनौ धःसमनिनि पूर्वे उउत्तुवाद्र गूर्ह. उत सुम्नावलीये मरुद्विषवलाप्सासृते सु-मार्गीद्वितीये प्रसोमास्थ च त्वं सर्वाण्यिन्द्रक्रमध्य-मायां च श्रौष्टउत्तमास्वय. प्रद्वोमशीये ब्रह्मायूथे गिरां-मोठमानवयोस्तृतीयो दावसुनिधनपूर्वः निवजम्भशु-द्धीयविशीयवैश्यावैकर्चैकचयोकानिधनेषु च नौ गौजी च नवे च तृतीये तृतीये तुरीय मर्षापोशिश्व-मानो गवे तृतीयोनलदर्षाकरेभिमरे वैयश्वे नौच्छ-श्वैकि नीचैः पृश्निनि पृता च हविषेद्रिभिरित्यभि-गीत मेकेदंष्ट्र उत्तरे विकृतस्तावेोत्तरे पार्थ एकं ह जिवे च जनितेति ह चीये वयमूर्जस्तं सिश्वमात-धीतिं वारे वाघाच्यावसंधमासूर्य्यसवनाजनगृहताम-

स्थायिकारान्द् वृष्ट धानोनाजायेरोष सम्निसिन्यन्त-माश्वत्थारस्तमसो यौनौ द्वौ द्वावृत्तरावच्च नैमोर्जी महस्ते मंक्षा चान्त्या प्रयभृतवनिस्थाने मह्रादेवे पुरुदा-न्ना सृतौ प्रष्ठश्च प्रयति पादादौ द्वे मध्ये चेन्दुर्युवम-न्दोशैक मन्यव सप्तहे त्वसंयुक्तपादादौ द्वे मध्ये योनि-त्वत्रऽथ्यं मैक मन्यत्र गाष्ठमतोादपुष्पधर्म्मविधर्म्मपा-र्श्वसन्तश्चवाजंऽसदोविनरे परमज्याः पुवस्य मत्सरा-सोसौमित्रसंकृतिवात्सपदऽष्ठान्तरभ्राजकौतायशः सऽ-सर्वभद्रश्रेष्ठोश्वत्रैतैक वृषाभ्र रूरक्षवानां पादादिर्यथवं लवाश्चोत्तरेच्छिद्ररयिष्ठयोश्वानश्यासने मरिश्वस्थानयो-श्वामीढ्वां न हि रिचे न हारेरसराराय श्राकुदेवानम्निऽ-स्तोभांनाश्वावक्रातविमायाविनउच्चा चैकि भासे चौनांसन् पुरःसुतापरियस्तोचै वैरिय श्वेगांवर्त्तसत्यवौ सब्रवर्णो सधर्म्मोन: सौमैधेहरिऽ द्वितीये वने च रम्यो हरे श्वमागोतमे षष्ठे द्रु कृते च नकि: स्तगो-ष्ठार्कपुष्पयोर्न वरुणासाम्नि गावन् वृस्यत्ये द्विपदासु च वाजजिति त्रिकसे चातिच्छन्दःसु च देव्ये पांवृतयो-र्गवाश्व पूर्वे लेये योश्वादिर्यस्याच्छोत्तरयो: परि-प्रलायाञ्च ॥ ११

नीचात्पर: ष: षधमैधदैर्घवैयश्वपृश्निकौत्समंद्रग-

स्थामेषु सिविहत मस८हित पृश्निदैर्घ्ययोर्जितिभिया-
सितस्वयानमापुरुसुतमूमदोविशीयाष्टेडरूपेषु क्रौञ्च-
ष्टम्भतमच्छन्दसबैयत्वाष्ट्रसोमोद्वेडश्च तसाध्राणां यश-
श्च स्तृतीयोदादिरश्रुष्टश्रारत्नधानश्चनोरत्नधावैयश्च वाभ्रे
चापुनामान्त्ययोरुभय प्रान्त्ययोः षूक्ते चापरिप्रि वृषा
मोश्वाय्ययोर्वादिर्णीथादिर्धनादिश्च रूपे धसे वैकृष्टा-
न्निस्तोमुद्रोजिष्ठश्च श्रवाज्योरिन्नरोजिनदे च तुरे बभ्रः
षष्ठ पयं तुरे धारया द्विमन्द्रावासदेवकया च द्विनीचा
सोमसाम्नि च लेये रयानौ सध्वरेवतीषु पयसि परि-
नोयिषिवसन्तोकथयोर्वैद्रिदश्च पासिते समीमस्तुचे
हव्ये हारद्वितीय मपुरोजिश्यान्त्ययोर्नितृ पुरीजिमध्य-
सायाऽ शैत्ते च ये त्रिष्टुप् प्रान्त्ययोर्नैपे गीथद्वतीयं
चतुर्थं वष्ठोह्याद्यं च पञ्चम च साम्नि न द्वतीय न
द्वे वऽसंक्रतियशसा वृण्वादिः कमेश्वे नोत्तरयोः
स्वासु षश्च देव्ये विष्टम्भ्यासे मनाज्ये वादिरापिरान-
यज्ये च हरे द्वितीयो दादिरवरुणान्ति विधमायास्व
स्वामोनिनवत्त्रिष्टुप्सु यप्रे दादयः पुराजिं चाग्नो
वैराजे न्नाभ्यासोहश्च नौ चासवांभहक्ताभीशवयोर-
हक्ताभीशवयोः ॥ १९

॥ इति पञ्चमः प्रपाठकः ॥

अःकारो वृषः पदगीतः प्रादान्ते घोषाकारयोः प्रत्यययोः पुरो३ १हाइताथेवादाइवा२इदार२हाइया एवञ्जातीयानि सन्धगीत वत्स्यामो मदः शब्दः प्रथमः स्वरः पवस्वशक्रद्वितीयायां मत्स्यबृहति यतमद्रिवो यदिन्द्रचित्रायां वसिष्ठप्रिये रथीतरो नकिष्टद्रथायां भासिते हिषस्वे सामयौधे पथीजो जनायां वाभ्रे रसः स्वासु तमसार्के गुरोनः प्रेङ इत्यत्र मराये ॥ १

भक्रान्तः पदगीतः सर्वत्र सन्धगीतं वत्स्यामः क्रौञ्चाष्टमिके प्रक्षो विभावगत उपसोभिमि स्वरनसे हैगते पुनानायां मुत्सोजिगतवस्ते पूतायां क्रौञ्चाष्टमिके मानऊर्ज इत्येतो शब्दो मोधसे गेन्दः कद्रुवेदायां माष्कारगोधने कारवे महोदिव इत्येतो शब्दौ प्रत्न प्रीयूषायां क्रैधे प्रत्नवाजेषु नत्वाध्वर्यवः सुवविद इत्येतौ शब्दावार्षविभित्यवौशन इन्द्रः शूरश्च महानाम्नीषु यत्र रथिरं बोधीये वारेथादुव एहू-इतीयायां तुमद्रिवश्च वर्हिश्च तन्ना मंदायायाः सिषासन्तः श्रुधीहवायां देवराधः सदुद्रुवायाः रजः सूयो विते मत्स्तवानो बृहद्रथन्तरे पविश्ववन्त इति देवासश्च वान्ते त्वाष्ट्रीसाम्नि ॥ २

भक्तिमध्यः पादमध्यस्थ स्तोभे प्रत्यये पदगीतः सर्वत्र सम्ध्यगीतं वच्यामोऽधेदिन्द्रः बारे वसुरुच उत्सेधे तुवस्वारयोस्त्वाष्ट्रीसामोः रजः सूर्य्यस्य पूर्वे देवो धौतो मत्सरासोऽस्य जम्भे वृषामदः स्वरे बृहन्निधने वयः स्वासु वत्सास्त्वभिच्च्यावने पांसास्थं प्रवृत्समधुमायां चेन्द्रः श्येवः सन्तनिनि सोमो वाम्रे चन्द्रो वाम्रे राधः, कौत्से मयो भरे स्तोटभ्यो वारे देवः पुनाभिसामयो-मैधष्टम्भयोः स्तावे मत्सरासश्च ॥ ३

भक्तिमध्यः पादमध्यस्थ स्तोभे प्रत्यये सम्ध्यगीतः सर्वत्र पदगीतं वच्यामो देवः प्रत्युदक्रान्त ऐडयास्त-द्वितीयायां जिगत्नवस्ते पूतायां वाङ्निधने क्रौञ्चे जारः प्रसुन्वान-द्वितीयायां विते होषोस्वर. उत्सस्त्रिणिध-नायास्ये धृतव्रतस्तैशोके भरन्तः सौभरसियोः पुरो-जिनर दूतेरतो शब्दो मरावे ध्रुवःय. वृमाउत्सायाए श्यैते श्वः कार्त्तयशोदेस्त्यवेषु श्येनः सम्मिसाायाए सएहिते जातो वाचःसाम्नि प्रियन्देवायान्दधन्वाए ङ्गः सर्वत्र दस्तमूरावर्के शार्गे च, सक्सयुजो भारद्वाजे पुरां दर्मे यामन्द्रेरित्यंसाभिनिधने कावे मर्त्तो यायए सहोतायां कामप्रे स्वायन्तोभित्वाशूरायां कावंतरे-ऽधेदिन्द्रस्यभित्वापूर्वायाए सुष्टुतयो प्रष्टायां बृहति

रुषउद्यस्त बृत्यत्र वाजीये द्विथो रथन्तरबृहति रोध-
स्तन्नो वीङ्क विधतोभद्राइन्द्रायाए सौभरे भरमाणो-
भ्यभिहि यौधे मृजानः सं वाज्यचायां बौधीये
बौधीये ॥ ४

आकारो त्वम्पाशब्दः प्रकाव्यायां पार्थवाराहकुत्स-
रथीयेष्विन्द्रायेन्दविति क्रौञ्चे पूर्वयोः स्तोत्रीययोर्वा-
हाइस्तोभे प्रत्यये जसा वैश्वमनसे वृधा बृहद्वारे पूर्वथा
कण्वतरे हिता सुम्नाने दिवत्मा प्रत्नम्पीयूष मित्यत्र
जयामहौवोत्मेधेषूच्चैनैटत एकारे प्रत्यये आर्यः कालेय
आसाहन्तीयोत्तमे जेथा मामेधे हव्या विशीय इन्द्रावो
कावार्षौहरे गौथेभ्यासे प्रत्यये दुहा सखा मरत्व प्रत्यये
वैराज आःकारो त्वंमदाः सुतासोमायां बृहद्रथन्तरयोः
स्तावे तमाः श्यावैश्वाश्वाउवायां प्रत्यये नित्यवत्साती-
षङ्गसिमास्विकारो त्वमिवोमेधे दुहानायां प्रतीनि
द्विहिङ्कादेव्ये र्षसि कण्वतरे डिन उत्तरयोरास्तोभे
प्रत्यय ओकारो त्वन्नदंव ओसधंस्तोभ ओस्तोभे च मंहा-
मिन्दवेकारौकारयोरवंमौध्य महे त्रीयेऽकारो त्वन्नो
अर्षसि पुनानायाए साप्तमिकत्रिणिधनायास्ययोर्यौ-
धाजये च वृषो अचिक्नायां च त्रिणिधनेयम्पूषायांश्च
क्रौञ्चे वक्ष बृहति स्तावे परउत्सेधे दुहानासाम्पुरो

मत्स्वे प्रत्यये वैराजे पुरुषः शब्दः प्रथमस्वरो व्याहृतिषु कामे च सर्वस्तु मदभियंरुहशब्दा मध्यमे विकल्पे ॥५

वृद्ध मृवर्ण सर्व मार्भवति षकारस्पर्शयोः प्रत्यययोर्वृतो: का२३ षा का२४ ड्वी३ एवं जातीयानि हकारस्तु न सर्वेषु स्पर्शेष्वार्भवति यथा योजा३४रि-ट३भ्योमघवाञ्चो वित्२३४पा३ हकारस्तु षयोः प्रत्यययोरार्भवति ता३ र्णा ३यामंधिरोता३ षाणा२३४श्री ऋकारो हकारो धकारः स्त्रिकारे शुगा२३ हा२या३रुचदुषसः पार्श्निरग्रा३या२३ यामे चायङ्गारिति न क्त प्रत्यय उत्तस्त्वभ्यासादौ व्यञ्जनलोपः खानेका३ख्वोन-का२३ यदुक्तं पुरस्तात्षकारस्पर्शयोः प्रत्यययोरार्भवतीति तत्राप्रवादाः ससृग्मवाहृध्वा च नामेधे चक्रमा शात्रा एतदेवोदाहरणं यूथादानायां कौल्मकंगवबहतोः संगमातून कूल्येनाकूपारे मर्मू स्वासु दैर्घ एतदेवोदाहरणमभिक्रन्दायां धेनुवरुणयोर्गिरस्तु इन्दायाञ्च संहिते नभ्र प्रसुन्वानायां गौतमसाम्यां वासोदलाकूपारदासवैश्वामित्रेस्वारकौत्सस्वतस्तोहतरेषु त्वभिः प्रतं सधस्थमित्यत्र डैयास्यगोङ्गवीयषेधाभीशाष्कार-सोमवरुणतमतरजम्भेष्वेतदेवोदाहरणं ॥ मभिसा-

माध्यास्यायांॐहदुक्थाग्नेस्त्रिणिधनहम्मनेषु धर्त्तायां चौयक्कावाभिक्रन्देष्ववधुतानायां च तमसोकें कक्रुत्नेमदायाॐ हारिभरवारैष्वे तदेवोदाहरणं मयस्पृनानायां चौग्रे तन्नामदायाञ्च सॐहिते प्रोष्ठवसासु च ॥ ६

सम्र वैशाके वृत्तवयकुत्वाया मभिन्निधने कावव वृषिार्येमानोर्वे ॐधीयद्रवोमहद्गुपत्वाजावारतृतीयाया मेतदेवोदाहरणं मयॐसूर्याया मामहीयवबोध्रीयत्वृषभपावमानाश्रुमार्गीसौम्यैटतसाकेष्वृषिकृक्रिशु देव्योवज्योतिषिषु तिसृभिः पाहि रैरवेस्वपुरुक्रुच्छ्गध्य हारमानत्रयोरुरुकृदुन्विदुनायां बोधीये पृथिवो प्रदेभान्तो बृहति च यज्ञायथीया मृधक्सोमदविचौर्ये वृष मप्पार्भवृति षभे थिवौ धृष्णु वृषा वृषन्चारे मृत्यधेनौ कृण्वते क्रोच्चे मुज्यकृण्वतरे कृन्तच्छेङ्कुनि माञ्जमानः सुहस्तियाइ निर्गा अकाए२ तदो२ तृम्पाया स्तेवर्षा प्रामॐ रेफः प्रथमस्वरायां वृद्धाया मपदिश्यते वा२३पा३रथन्तरे च वामदेव्यहदाम्नेययोर्क्ष्वर्णं प्राप्त मकारः क्रियते ना२३ वर्वना ॥ ७

कर्चि प्रश्लिष्टाः स्वरसन्धयः पादमध्ये सान्धि वि-

वृता के तान्‌वक्ष्यामो. मह्न वस इमाउवायां वारदिव्य रथबृहत्सु स्तुश्ये तु प्रश्लेषोभोन्द्र मभिवायु मित्यत्र पार्थे कितवः स्वासु मरुताङ्गभी महत्तत्सोमायाए सर्वत्र छन्दसि तु प्रश्लेषः प्रसुन्वानाय सर्वत्र पवस्वयस्ते मदायाए सर्वत्र सोमसामसाहीयशाक्वरदेषु प्रश्लेषः पुरो नः सर्वत्र माभिवासः सर्वतु स्वादिर्नीवी च पिबासोमाया मृषभे प्रस्तवाजेषु नः सर्वत्र रवोदुगीथे तु प्रश्लेषो नो अविभिः सुषावसोमायाए सर्वत्राष्टादंष्ट्राकंपुष्पसंकृतियशःसु प्रश्लेषः ॥ ८ ॥

सुतेचित्वानवे वृद्धाञ्च सर्वत्रायास्ये तु प्रश्लेषउदिन्द्र त्वए ह्योत्यत्र कगावृहति पूर्वकल्पे स्तावे च जम्भे प्रतिहारे कौल्मे स्तावे गायन्ता यूथादानायां कावबृहति जम्भे च तवाद्यायाए सह्यदैर्घमरायययोर्वैराजे च स्तावे तवद्वितीयायां माभीशवद्वैगतयो रहस्ये च बृहत्यरुषी ऋतिष्या सूनरी द्वितीयायाम्बोधीये देवाजर मातेअस्मद्धीमहीत्यत्र त्वन्नइन्द्रौपगवे चासाहन्तीयोत्तमतृतीयायां मापः गयोभेयादिन्द्रायाए प्रथमे स्वार्चतोवैराजर्षभे देवाङ्गसा हूहति महो नधारागो राजां च कावि पादाद्व्यात्परः स्वरो विकृष्यते यथानूषतावद्य ताना याए शाचिपूजन यतइन्द्र-

द्वितीयायां दैर्घ्याय विधर्मणि गर्भिष्ठानसंस्कृत मित्यक्ताशन एवञ्जातीयानि ॥ ९

अथापवादाः प्रश्लिष्टा अ-ओरित्यस्य शब्दस्यावृद्धापरस्य प्रश्लेषः सर्वत्रेह न यदिन्द्रचित्रायां वसिष्ठप्रियपक्षयोर्दिवस्पदे तपोष्पवित्रायां तृतीये मोषुत्वा पाप्वे श्रुधिश्र्दोर्भ्यासे धियोगर्भे भरामे जायामन्त्विषु सन्तनिर्जित्वचि मुष्वाणाया माम्भोगवे धसस्तम्बोदस्माधाया भार्थवंशसौभरयोः प्रत्यस्मै तृतीयायाञ्च रथन्तरे वासिजोरातय कुषितौ शब्दो प्रोषुवत्यासु युञ्जाणिरिलिषायां रौरवे बोधयोमहेनायां वाजीये डिते वसौ नैककुभे तमोपायां वर्षोचेतम्यिये व्रह्मयुञ्जा काले धसोद्रयो वाजप्र नदीधिमः आयंन्तायां सौभरे सेन्द्रासिवाइन्द्रिरसन्तनिनोवाहिनोऽग्नेविवस्वद्द्वितीयायां श्रुष्टि वृषउद्यस्यत बृत्यत्वाजीये धरंया सेधे धियोसेधे जमवत्तं चास्ले तमय कमर्भ्ने ततर्हि यो दैर्घश्रवस्यं वो देव्य श्रवस्यवो देव्य ॥ १०

यः संयोगो ग्रंवान्तः कुचित् संक्रुष्टः कुचिद्विक्रुष्टस्तत्र संक्रुष्टप्रकृत्या न्यर्यसाहीयपर्णवर्णामिश्रविलम्बेषु नैडे द्विध्य ज्यर्षसि यशः सप्तसर्पपुष्पेष्वापृच्छ्य मवृषं सर्वतं महेस्वाकूलीये जिह्व न कृत्यश्च तृतीयस्योद्गीथे

विश्वाच्यश्विनोर्त्रैतपर्याकूपारपुष्पमरायेषु नाभग्रासैव-द्र्यश्चैतेषु वैघने चामराये त्वमग्नये स्वासु दैर्घध्य-मायाः सूर्य्यस्याभिप्रियाणीत्यत्र स्वारकावन्नीययोरेष-एव शब्दः सूर्यवतोष्विनोराजद्वितीयायां चौशने ति-सूर्यं पुष्पमरायकीर्त्तंरष्विन्द्रः सूर्यः स्वानैपृकीर्त्थंष्विव सूर्य्यं कीर्त्त बरामद्धाः असौव्यत्र सूर्यशब्दः सर्वत्र वित-नैपयोस्त्वाद्यो षिक्रष्टः सूर्यं महर्तस्तोमायां वैश्वज्येति-षवास्प्रयोरामायामामूर्य्यः सर्वत्रास्यप्रतायां मयः सूर्य्यशब्दः सर्वत्रैव तृतीयायां नं सूर्यो भाजे सूर्य्यस्य न.ते गिर दूत्यत्र महि सूर्य्यः कीर्त्त. सःसूर्यस्येहवद्दामें. सूर्या वैरूपान्तरिक्षयोस्त्वः सूर्यः सोमिव सैमु सूर्यः, सन्तनिंनि यथचगीते पर्कणिष्ववितां दाशे महाया-न्नीयविशीयवारमहामिवतरेष्वेश्लोक. मञ्चे त्वामिद्धावि भरे त्वाय सर्वत्र. व्याभिन्नर्मिथे कुराबपाय्यः सर्वत्र. व्योमनीन्द्रमुतायां बःशीर्ये हिन्वन्त्वापसो हिहिङ्कार-गोङ्गवद्देगततरेषु रवतरे च पूर्वकाल्ये ॥ ११

ययोस्तन्वार्त्तीयाः हाविषमतसंन्तनिनोर्विभाषा प्रसुन्वान-द्वितीयायाः रयन्तर इदाद्यो मानवे सुरपमा च्छन्दमे पूर्वी वृषामती-द्वितीयायां न्नीये त्वामभि द्वः-ष्टोत्तरे मह्यं हिहिङ्कहारभारमानोस्तरीरतरेषुतस्य-

वैरूपान्तरिचं हूस्वासुवषणाा वैरूपे हर्यश्वपिबसोमहि-तीयायाप सहोदेघे मराये त्वाययोः स्यन्तमा मराये वि-द्वान् मरायवैराजर्षभयोस्त्वामिद्धरिहितायां मराये सहोदैर्घे त्वभ्यासो नप्तगोरौर्णायवयोः परिप्रियायां मा-र्गीयवे च त्वपछ्रेत्येतौ शब्दौ सौपर्णे पवित्रमत्ये त्तीये न-किष्ठ त्विते साव्यपशुः सर्वत्र न सन्तनिनि पार्ष्योः क्रौशि-श्वैश्य तैतक्रौशवाशेषु त्वापरिहत्वं यास्व गवांष्टेडसि-मासु त्व याप शुद्धीये सुहस्त्यरश्मोत्तरवरुणागोष्ठार्क-पुष्पेषु स्वानः परिस्वानायां वैदन्वतत्र्यावियमतरेवतीष्वेष एव शब्दोक्रान्त्वासिष्ठं परीताध्यास्यायां चानवमिहनि त्व कविर्भिर्द्वितीये दन्वते मित्राः स्वानाः सर्वत्र दग्ना-शिरो विते व्यद्रिभिर्यत्तीये त्वम्भातौपगवे वरेण्य प्रा-ध्यस्वातीषङ्गे त्यो गभस्त्योः स्वःशब्दश्च त्तीये स्वः कावाभि-क्रन्दयोरत्यौर्के त्योगभस्त्योः ष्यात्रिशत्येते शब्दास्त्रयः शार्गे क्रत्व्योनुमात्यो त्यो गभस्त्योः स्वःष्याविशत्यं ते शब्दाः षडष्टेडे ॥ १६

॥ इति षष्ठः प्रपाठकः ॥

देवेभ्यः संभारे नर्यः परीतायां माधुयांस्वभौशरी-रदपष्ट्रजम्भानूपंर्यौधत्वैगवतरस्थानसंक्रातिभर्गयशाथ-

वैराजतरेषु नवमे चाहनि सर्वत्र दैर्घवर्जं विभाषाक्षरा-
साम्नोरप्र एव शब्दः संक्रुष्टो गामन्नक्षत्रले च्यव्ययद्वास्या-
लोशे तमसोर्क्षे षावैव तृतीयाया मत्यः सर्वत्र न्यो:
जसा कौर्त्तयस्य कौत्सं काशीतद्दाबिष्कृतयोस्त्व शब्द:
सर्वासु त्वां देवासो रौत्या यं वृत्ययौ शब्दौ वैश्वमनस-
श्रुत्रयोरर्चन्तुवाहशौयवितथो: साम्बाकृता वंशीये भूय-
वशीयत्रियात्रतेषु पर्यूषान्धीगवसस्तोभयोस्तरध्यै वित
राज्यस्नौगवरेव्ययो: स नित्य: सर्वत्रात्रैव तृतीयायां
त्वाश देव्ये न्यायवन्द्वाध्य वृत्यैतौ शब्दौ भराय शेष्या
भारद्वाजे व्यस्थिरन् षड्डिडे वन्तास्यस्वारकावद्वीय-:
योस्त्वमिन्द्र त्व वृत्ताणीन्द्रस्य यशसि त्व वृहत्स्य त्यतौ
शब्दौ द्विहिङ्काद्ये त्वस्यन्ये यशसि हस्यभीवर्त्त-
श्वर्पिता लोशे त्वस्य सुवीर: श्यैने व्ये शब्द: शिशुन्द्रव्य-
ज्योतिषयो: पुत्रेभ्यो भारद्वाजे प्रत्यशब्दो नानतरयोर्यु-
ज्या विशोये व्रतान्यस्यश्यैतवाजीययो: पूर्वा मुत्सधे
स्यूकभि: प्राक्षे हरिश्या सप्तास्वेभिर्वसासु ॥ १

त्वेसोमाभाभ्रभिहोत्वे तौ शब्दौ दैर्घ्ये घृतानां शुभ्ये
पृणाध्वङ्करवतरे जातमार्यूषीये पाह्यस्वामिच्चरौरवे द्व-
म्निभिश्चरन्त्य स्नावे नैपे दुर्यन्तुगवता चान्धीगवे न्यै-
रयन्नीये त्वां दूतं श्नीये शम्भूरहारमानवयोस्त्व स्य हि

जम्भे त्वम्युरु कौल्मजम्भयोः प्रयत्यकौत्सयोः कालेये पूर्वाः सञ्जये वीर्यस्वयशस्य वारे श्रुधीहवायां माद्ये-पृष्ठे सख्ये स्रुध्यचैतयोस्तामाः पूर्वे व्यनड्वे क्रतु मित्येते शब्दाः श्येते पार्थे हर्यश्वच्च दैव्ये वाद्वधं न्यञ्च दैव्ये सवाच्यां नकिष्ठायोषत्या च वाग्मे सप्-सद्यत्व देवांदनागान् ह्युस्वस्यमन्ते त्वमङ्ग ककुभ व्यूषाः कांवे मंहरत्वासन्तनिनि वीरसेन्यः सन्तनिहरि-योराषधोष्यो चौये मत्सबृहति दधे वार्यांणि कमस्व स्वर्णज्योतिरुत्तरे कमभ्नं स्वशब्द एनाश्रुध्येदश्या बृहद्रथ-न्तरयोर्वहांलत् श्रुध्ये वृषावषट्कारणिधने कांव्य नाभ्यासे. त्वांहविन्द्रगामश्वमित्येते शब्दास्त्रयो वारे त्वामिन्वाङ्काष्ठासु प्रतिहारे बृहतित्वाः संप्राहेष्विन्द्र बृहत्तरे त्वां शब्दो पूर्वेष्विन्द्र च जम्भे जनित्राश्वे मे वीर्ये व्यबृहतोरचैव कांस्य दैव्ये सक्ये स्फिग्ये च रथन्तरे यामे व्यस्यत्सोवा रथन्तरे स्तोवा रथन्तरे ॥ २

आयिःकारस्य भें स्वरे प्रत्यये ग्रहणोर्विसर्गलोपः स्याभिर्यस्ते सुरूपे श्यतिरभिद्युम्नतृतीयायां वाचः-साभि भिः धासु विशोये शुचिः परिप्रियायां मार्गी-यवे रविः प्रसोमदायां कण्वतरे सुतिः पिबात्वस्याभि-निधने काण्वे सुभिर्ईदिरिन्द्रोमदायां बार्हद्गिरश्मयो

वैरूपे: स्वासु . रश्मे गिरेर्वृषिभाज्योतिः स्तावे प्रत्यु बृहति सोमस्पतिर्हं प्रत्यये सहस्रधारायां त्वाष्ट्रीसाम्नोः स्वर प्रथमे चारिष्टे चानाद्यावद्रिरभ्यासे प्रत्ययेक्रायां वैश्व-ज्योतिषत्वात्प्राकेषु नकिर्न्नकिष्टद्रश्रायाए स्वशब्दे प्रत्यये. गौरीवितासितयोः ॥ ३

उःकारस्यौहोवायां प्रत्यये ग्रहंगौर्विसर्गलोपः पृथुः सांवर्ते क्रतुः परीताध्याम्याया मांधास्ये त्रीणि वितायां वार्शे परिप्रियायाश्च मार्गीयवे क्रमुरिन्द्रक्रतु मित्यत्र इष्मश्च तनिते ष्विन्दुर्धर्त्तायां वासिष्ठे रहस्य च योधा बृहति वाजयुः सद्मोवनाया. मन्तरिक्षे सजूः रग्ने बृहति विसर्जनीयाकारो जौराः सैन्धुक्षिते निकामंवितशृङ्गयोर्ज्याकाः प्रोषुवत्वास्वःकारो गोमन्नः शुध्ये समुद्रः प्रथमः स्वर इमाउत्वाया श्यै तनोधसंयाः स्वः शब्दः पूर्वः पूर्वे यौक्ते स्वः शब्दस्यैवातिहारप्राप्त लोपः क्रियते सिष्ठवैशक्रियोश्च यौक्ते चोत्तरयोर्मरायेभ्यासे प्रत्यये विसर्जनीयस्य चालोप मेके बिरामे ॥ ४

तकारलोप उक्थ्यः पार्थुरश्मे यद्युदीराया मिलान्दे न वर्श्मे प्रत्यये परिमद्विषत्स्वासु हारायणे इढाचित्स्वासु वौक्थ्यासे प्रत्यये वांविश्वनइन्द्रायाए

सैाम्भित इन्द्रोमदाया मिच्छब्द: पार्थुरश्मइचिहिङ्कार-
त्तीययोस्त्वमिन्द्रपरिल्पयो: पुडैश्वामिवे प्रसुन्वाल-
द्वितीयायां तवेत् प्रत्यु-बृहति. मकारलोप उत्स नं
क्रन्दैर्घभ्यभिहीत्यत्र .माऽसूर्य माथास्ये साप्तमिके
तवायं मनीषां त्तोंद्रेषु संहोदैर्घमरायवैराजर्षभेषु
ससामैटतभ्यासे प्रत्यये सङ्ङ् क्किबृहति पप्रो यत्राबृ-
हत्युकारलोप उषदृगयऽसूर्याया मैटत उत विषाश्च
जनितायाऽ श्याश्वाप्रवे यकार: परिष्टोभन्त्येत्यस्मि-
न्छन्द्रे हवि-त्तीये वरु शब्द: सफे प्रियन्दे वायां
प्रथमतृतीययोर्विकल्पयोरकार: सनेमिलाया मदे
वऽ शुध्यन्नितश्र्वलिष्वघायोर्वारे प्रथमेभ्यस: चालका-
श्चोगवयोर्वृहादद्यरथैदन्वते. प्रथमे इयु: सिमास्व-
चरन्नवुवऽस्त्वाष्ट्राद्ये मन्ये त्तीय आकारस्तन्वावि-
प्राया. मिहवद्याम इकार: प्रसोमाप्रवे व्यञ्जन मप-
राङ्ग विरामे लुप्यतेभ्यासे च नोर्मयोर्वसाञ्जुन-
त्रभूस एवामृता चार्कं आकारोनुनासिको वृद्ध:
सर्वत्रारेव वैखानससन्तनिषु ॥ ५

आउवाव्यवहित माउ भवति सर्व पदान्त्य च
व्यञ्जनं लुप्यते यातार३ उवा३ भवा२ सियो३ वा
जा३ या३ उवा३ यमे महो२३४ वा३ यू३ जा३ उवा३

वाजेषु चो२३४ वा३ मघा३२ उवा२३ एवज्योती-
ष्यान्यनाउभावो भृगववतरे रेतः स्थेनेषु मनः संन्त-
निन्यशिश्रयुः प्रवर्ग्यार्गव श्रौष्ठयस्याङ्गःपदिको नाउ भवति
सर्वत्र यथा माइन्द्रो३ मा२३ द्रां३ यतो३२ आ१३
उवा३४५ औग्नो२ गो२ भिरू३गा३उवा२३ मरुद्ध
नं यशि त्रिणु सोमसाम्नि सीदन्कोना३४हा३इ ना३
या३उवा२ नाई मा३उवा३ सुनीतसौपर्ण ऊर्मिणावाम्-
मैधातिथयोर्वर्ण सदस्य पवदुक्थ्यामराजेषु स्पर्शोनाम-
लोपो यथायुम्ना२ निमा२ नृ३ षा२ गा३४ मा३उ
सहोस्रगा३ मा२उ घार्नजह्निया३४ मा२उवन्मधुमो३
म२ दीरिया३ मा३उतिरेभा२ नाउधृता२ वसाना३:
पा३ रिया३ सो३ निर्णिजा३ मा३उ अथ नोनयो२ नो३
श्चात्तवा३न्ता३ मा३ सदा३ दा३उ म तिष्टुप्शिशुमु-
इति सा३ मो२ वा३ इरा२३ जमनू२ रा२३ जनिष्ठा३
१उ रहस्ये च न सर्व माउ भवति व्यञ्जनं च न
लुप्यते यथा वाजीयनिर्त्यवन्नातीमुङ्गसिमासु यत्राउ-
भावो व्यञ्जनलोपश्च तद्वक्ष्यामः स्वरान्तःकाठ्यः सर्वत्र
त्रिणवे संहस्त्रिणा मिति यत्रावापत्ययोरङ्गोरैवतयोर्व्यं मः-
कारस्य रैवते सिमासु सर्वं माउ भवत्यन्तगन्तो छान्द-
सीषु दिशोवसोराणाङ्गोनाम्मन्तेषु चाचारिष्यस्य शब्दस्य

रेफलोपः स्वरघोषवत्सु प्रत्ययेषु ज्योङ्कः शब्दस्त्वो लवहे स-
कारलोपः अवतमः साम्रान् विश्वायाऌ सऌहिते सुश-
स्तिभिरिलान्दद्वितीयायां मानस्तरभिजमवर्त्त थादौ
लोपः पराङ्ग वा सुहस्ता स्तावे ज्ञोयस्य लोपः पराङ्ग
वेन्द्रायेन्दविति क्रौञ्चे वलोपः सन्धावुगतिर्विरते द्विय-
कारसंयुक्ते विकृष्टे पूर्वो यकारः प्लुत आकारः प्रसा-
र्यते रयिऌसासृश्रवा३आ३या३यि क्रौञ्चे निधनत्वात्
पावा२ माना२ श्रवा३४५ या२३४ पायाशब्दः क्रिगड-
पाय्योमहेनायां च प्रणपा२त् कुगडपा२या२३४५या२
सत्यश्रवसि वाय्य, अतृड्स्तोभात्पर इकारः सम्पद्यते
या३यि ऌसो३मश्रवो३हो३ वाहा३इ या२म्॥ ६

अनुस्वारः स्पर्शः स्ववर्गीये प्रत्यये रेफस्पर्शोष्मभिः
संयुक्त एते शब्दास्तद्वीत्तःपदिकाः स्तोभव्यवहिताः
सर्वत्रातिह्रियन्ते स्तोभान्ते विरते लोपः सन्धावलोपो
बर्हिषितलुरागापिभङ्गमोशानेकृदघशऌससराऌसिसऌ
हमऌहत्ये बञ्जातीयात्यतिहारप्राप्त व्यञ्जनं लुप्यत
आनऌश दवे ज्योतीऌषि वृषन्नदर्शि वारे वर्पसो-
दर्शतेलान्दिव्यसः स्यारे पश पशऌसन्ति विशो-
यास्वोगवयोर्हिन्वन्ति विशीये मन्दानङ्गोभिर्जनित्रे
धर्म्म दैवे बिन्दुः सिष्ठं इन्दव उदऌशीये कर्म्म वत्सा-

थर्वणे सर्वं तन्दुकार्त्तयशे स्वरान्त मेकं विसर्जनी-
यान्तं वा स्वासु भरे यन्तुरं लोपः पूर्वाङ्गं वा कश्चित्
पदान्तो लोपः प्राप्नोति ह्रियते कश्चित् पदान्तः पूर्वाङ्ग
प्राप्नोति ह्रियते वचनात्प्राक् स्तोभस्य स्वरान्तो विरामः
स्तोभान्ते विरते लोपः सन्धावलोपो शिष्टा अधयद्दि-
माभा० सुद्राविशीयोऽधयोत्मधयोः कुविरस्वासु मार्गी-
यवे चिकृदत्यवमानाभ्यर्षसीत्यत्र कण्वतरे पुरमजीजनो
हि देव्यं म दुरिताये दर्शत देव्य उषबुधोग्नेविवस्वद्देव्य
गिर्वणास्त्वयाभूषन्ति मानवे संत्पति मिन्द्रविश्वायां
लेये अग्ने च त्वामिद्धीत्यत्र मध्यमाउवाअवहित छिद्र
मेधाञ्जोरूपेष्वृतमाउवाउवाव्यवहित पार्श्वसन्ताच्छि-
द्रमेधाञ्जोरूपाग्ने स्त्विणिधनेषु ॥ ७

शवसः सञ्जये सरद्गोतमे निष्कृत० रुणासाम्नि
वृषो अचिक्राया वयु मपघ्नन् यवसायाद्वाच्चीवते ध्यम
मैषिरे मरुत्यदमानो रथीतमायां कृत्लीयसन्तनिषभेषु
दूराङ्गन्तोये प्रथमे रसं मार्गीयवे हयुत्व० संमासि शा-
म्मदे द्वि०स वह्नितायां वितृशृङ्गयो रुभय० वासु मैधा-
तिथे सं पवित्रायाः० सामराजे तद्यज्जायथा द्वितीयायां
बृहद्रथन्तरयोर्यच्छन्दस्तन्नं वङ्कहतोन्तरे प्रत्यस्मै-द्विती-
यायां धर्त्विषीमायाञ्च वत्सासूद्रप्रश०संयां त्रिशोक-

चौथयोश्चित्तदद्यायां वन्तीये महदकान्वासिद्धे रहस्यं च सामेम बृहत्यहि० स्वारे पर्णे घतः पार्श्वे मोषु चायां नप्तोः परिप्रियायाः० पृतीमायुवयोश्चीये चर्षणीयं- ओजिष्ठायां ज्योतिरौपगवे पवमानो अजीजनाया मवाङ्चिलोप मेके कौत्रे विते श्रुतिं युञ्चाहि केशिनाया मभयतः प्रभोः शैखण्डिने हरिं वोत्र शाक्षर्षभे भौके विपः स्वः सर्वत्र यथा स्वर्विदः शाङ्कुनि साहीये च स्वर्विदां नामधे न स्वे प्रत्यये सिष्टैशोकयोश्च सिष्ठ- वैशोकयोश्च ॥ ८

अवृद्धादियदान्तात्परे यकारो व्यवधीयत उप- दान्ताच्च वकारो विकर्षे सर्वत्र चालोपः सम्धौ विरते लोपो३ बोधिया३ चिवस्वयः० सुवस्तया एवञ्जातीया- नि न प्रतीनि वर्त्ते जठरेषूद्दल्कावबासिहाभिकून्दाकेषु पृषात्कु मत्तामितत्वाष्ट्रोतितेषु येत्वामृजन्ति लौशशैख- ण्डिनयोरदर्शि श्रुध्ये वृत्रेषु सप्तहे दान्तस्थपरे तु लोपो यथा काष्ठासुनरस्त्वा२ह्वा२ष्ठासु आ२३वेतः सोभ- व्यवहिते त्वलोपो दान्तस्थपरे यथा भौकषत्तयोरेटते त्वभ्यासे प्रत्ययं वृद्धात्परो यो लुप्तो तन्वा२गिरः सुष्टु- तयो२वाजया२३४त्वो३ आ२जिन्नगा३ह्रस्२रो३ आ२३४ ता३ष्याऽ एवञ्जातीयानि न भम्युचासंचारे स्वाय-

धाग्रे शिम्यूनां मरुताम्मनौ स्वाशौशने च स्वर्षा नौक्षष्ठ्यायां प्रियासितयोर्मदेष्वस्येन्द्रायएंष्कलदासियोर्यज्ञायसन्तु सर्वत्र बृहद्दालप्रवैराजपदनिधनशुद्धीयवर्जं नदीषु प्रियः सूनायां यौधाजयद्वैगतवृतरेषु वत्तीयाङ्गाङ्गवासिष्ठाभिक्रन्देषु संतेषु त्याभूषायां माधुच्छन्दसप्रुनवयोर्युग्नो प्रमएहिंष्ठीये वनेष्वर्षीसोमायाए शाकलवार्णसन्तनिवर्णहरेषु ॥ ८

पृच्छेषु सुज्ञानेस्वाध्यः सामाः मवन्तायां वितमधुत्रिधनाभ्यौगवषेधन्वीयेषु मंवरगेषु प्रवोयायां मवक्षाशःधिसौरथ्यपामौवसुसूनि पवमानरूचांयां विशोये मच्छेषुद्धनाय वार्यायां लेयग्रायन्त्रीययोः कविमिषायां चौशंने व्यग्नुहि संत्तारे पिबात्वस्यवर्त्तोभिनिधनयोरवन्त्यश्य सामराजे स्वस्तये दवि-ग्रीये दीयत्र-ज्ञीये स्वाहुतःसदुद्रवायां वारदेव्ययोर्बृहति च गौथे.दीर्घवृद्धोपहितद्रूपदान्त आद्भूताकाराकारयोः प्रत्यययोः सन्धौ यकार मापद्यते गतिर्विरतौ वा३यव्यद्रो२३ प्रवमानाभा३४याषी३४सा३ एवञ्जातीयामिं नाम्नसि पुनानायां यथा गौङ्गवाभौवर्त्तयोर्भवीयसी प्रमएहिंष्ठीयेर्च्चन्युद्गएश्रपुते विश्वान्यर्य्यआपर्णैटव्रबोधीयर्षभेष्विन्द्रायच्छन्तिसूचस्वरन्ति नैपे दधि-यज्ञीयकौञ्चयोः स्य-

भ्रिर्वनोवोधीयें धाह्यग्ने कमश्वे स्यंतमा मह्नोदैर्घ-र्षभायोर्वराग्नि ज्यीयस्यावाम्बयारेकारे च यकारं ग्रा-मोहतागतिमाᳩश्च पदान्तःसन्धौ. सलोपा विरते रम-ना३इ ये२३स्यापरा२३ये२३ बमता२३ये२२ एकारादः-काराच्च भोगः। क्वचिदिकारा दोवौकारयो रेकीभावे लोपः॥ १०

वृमन्तःपदे तालव्य मा भवति हान्दे स्ताभ प्रत्ययं प्रतिभागं न दा२२ हा३इ प्रप्नौ२२ वयमस्तच्चाता३२३ वा हुम्साइ महाहस्तीदचा२२हो२ एवञ्जातीयानि न-श्वित्विवद्यौरिन्द्रायाᳩ सौभरे चिक्रमृज्यमानायां रव्योत्तरवाजजिन्मन्तेष्विव दुहानायां पृश्निमन्तयोगीय त्रिलायां च त्वाष्ट्रीसाम्नि कनितिस्रोवाचायाᳩ सैन्धु-क्षितौशनयोः सᳩहिते ता भवति वारि सर्वान्तःपदन्ना-भवति स्वाखा भवति॰ निमर्त्तयाद्दने॰ विष्णवङ्गत्यतौ शब्दगवर्षासोमायाᳩ शाकले वरिवः सनदिन्द्रायां कौत्से पव्यध्वर्यो साके सवोरायां वैश्वामित्रे डिन-द्वितीयायां त्वाᳩरिहन्तोत्वत च त्वाष्ट्रीसाम्नि रभिसुषावसोमायाᳩ रैवते रहस्ये च संक्रतिनि गौशृङ्गे स्वर्विदः सुम्नेषु मानस्तरभीभीत्यत जमवत्त पिधयामांश्चित्वास प्रहिन्वान इति च पूर्वे त्वानिध गोभिरुत्तरे श्रीणा हविषे सवा-

ज्यदीयायां भवे जिपवमानस्य जिघ्नतायाश्च व्यधंयद्भिायया मुहसिधे ह्निन्वाभिसोमायान्निभीशवयांद्दीर्घनिषिधे पुरोजित्यां जम्भवरयोरनाभावस्तालव्यस्यान्तःपद्कस्थ, दीर्घशब्दस्त्वा भवति पुरोजित्यां जम्भे स्वरे चा भवति सहावाएइन्द्रेत्येष शब्द आनस्तेगन्मुम्नर इत्यत्रावग्रमध्या भवति जितोया दी-कोत्रे षि परीतायां माधु-छन्दसे वरिवः सन्इन्द्रायां मार्गीयवे जरि स्वारे पर्षे मदिन्तमदिष्टनोगि छाविष्कृते यितवे श्विनोर्व्रता-चरे॥ ११

पदान्तस्था भवति मातेंनितमध्यायां कमश्ववे धेनैं वारोत्तरे त्रयोर्यि स्यन्दते क्रावते चर्षणोरधीत्यषिंहाविष्कृते वरिवोधायां तु व्यमीनः कोत्स बृधेस्मान् पिबा-सुतायां पृष्ठजमवर्त्तयोः पवन्तेभिसोमायां मैधातिथे निष्कृतए रुक्सान्नि वृषो अचिक्रायां परीतायां च परिस्रवाधिसोम उष्वां वोम्ने सुष्वाणायां चाभीगवे भिग्नि-श्रीये चोक्तः क्रमे खासु नैपे विद्र इन्द्र-सुताया मुवएशौव्रे मधुनिधने त्वचिं सुत्ताणायां जि-तवे पुरोजित्यां प्रते श्रैखण्डिने पातवेना सएहिते शस्ययेतं तन्वामदायाए सएहिते गविष्टये भिद्रा च्यावने दिवे त्वाष्ट्रीसाम्नोः सहस्रधारायां मादेनो

वर्ती भवति-छ सायां महानाम्नीष्वभि ध्येति तद्दिदास तृतीयायाम् ॥ १२

॥ इति सप्तमः प्रपाठकः ॥

यकारे च प्रत्यये वृद्ध मन्तःपदे तालव्य मा भवति यच्च यकारसंयुक्त विकृष्ट ए स्तोरषेरमिंत्रमित्रप्रा२३४ याऽसो३मा२३ विश्वा२चा२३४या३ एवं जातोयानि न रथ्य महस्तवानायां कावहति रहस्य च बृहति नर्यःसमो हरीणाया मित्वैते वामे च परीताया मत्सो धर्त्ताया मुद्वर्गेव ईयतुस्त्वमिन्द्रप्रतृत्ति ष्वित्यत्राभी-वर्त्ते पीयन्त्राभ्रातृव्यद्वितीयायां मामहोयवे पीयत्वे मानइन्द्रायां वारे स्फिग्यं माभेम बृहति हीयमहे नेत्तरयोर्वाजीये तृतीयमृतस्य जिह्वायां ना भवति सर्वत्र जीये त्वा भवति पदान्तश्चा भवति शर्मणि प्रदे-च्चीयें कार्ये रन्त्याम्बरे च वियस्तावृद्ध मथा भवति प्रियः सनुर्वतरे ससील्ये जिह्व न कृत्यस्वाधिया-दहणाध्यैनौ वारे प्रथमे प्रवस्त्वा सुमानेङ्गोदा शकुनि विष्टया वाचःसाम्निं वयुना वासिष्ठे दिवि यज्ञायथोत्तमायां बृहति कृत्यस्तौरश्वत्से ॥ १

ओकौकारयोरनन्तरः स्वरनीचाययोः प्रत्यययोः

सर्वं वृङ्ग मा भवत्यन्तलोपश्च यथा भरनामेधैश्चवार्हनि-हूत्रसाम्रेषु न क्रुक्रौतविशीययो रथापवादा रागः स्वःपृष्ठनैपातिथरश्मेषु संगभा तून दूत्यचाकूपारे-दूरेदृविराट्सु देव्ये तकारः परिस्वानायां मेधवाचे मकारः कार्त्तयश मन्तयो रापृक्राए सिधे रथो नामेधे प्रायश्चित्तेषु पार्थुरश्मे स्वाखाःकारवर्जं मौकारः सखायः सो शाक्रोग मदाय तानर्वे वायुमारो भासि महाएश्चर्सि वाशे सूर्य्यमरा नैपे सुषावसो छन्दस-द्वैगतयो स्तोगो द्वैगते सोमसुत्रानै भुवनो टते पिन्नाबोत्सेध उवसं तु न सर्वत्रा भवति ग्रहणाद्धि भवत्युभः स्वासु मेधातिथे नःसू वारे प्रथमे प्रियः सूनुर्द्वैगतगौङ्गवयो रिन्द्रगौतमसाम्रयो रक् सिष्ठप्रिये यदिन्द्रचित्रायाए शिशु सर्वत्र ॥ २ ॥

ऋगन्तीयः स्पर्शः प्रथमस्वरो नामि विसर्जनीयश्च ना भवति तत्र चौहो शब्दः प्रथमात्क्रुष्यते सदादौ-२३४ ह्वियामौ२३४स्तियोरौ१२३४ एवं जातीयानि देव्ये त्वमृगन्तोयः स्पर्शः प्रथमस्वरो नाम्नि विसर्ज्जनीयश्च ना भवति तत्र चौहो शब्दः प्रथमात् क्रुष्यत आ२वि-तार२ जरा२ई तृणा३मौ२३४वा३हू२मिहिश्रवस्यवो२-प्रा१युभा३द्वारौ२३४ तुरीयन्त्वा भवति शिशुन्देव्ये स-

चमा१२न: समु२द्र २तु२रो२या३ औ३४होर२हाई २ हस्य लृगन्तीयश्चान्तगन्तीयश्च स्पर्श: प्रथमस्वरो नामि वि- सर्जनीयश्च ना भवत्यगन्ते त्वेव प्रथमक्रुष्टन्तोभवत्वान्त- द्वितीयायां तृतीयाद्विन्यामौहोवायां चतुर्थस्थो वृद्ध: पद्गान्त: सर्वत्रा भवति यथास्यशिशुमक्रान्नवासिष्ठेषु श्येतश्वारयेश्च तत्वापत्रादा रागोप्त बृहति मुख्यबृ- हति स्वर: प्रत्यबृहत्यपोग्न बृहति जुष्टो यत्राबृहत्य- र्जीये पूषा बृहति गाव: श्येनोत्त: सि४ वृषो वायास्ये वृषा२३४औ हावाइन्द्राचष:पेष्ठा३इन्द्रो२३४ औहो२३- इवर्गां तु न सर्वत्रा भवति ग्रहणादा भवन्तोन्द्- स्त्रिकबृहति शिशु७ सर्वत्र ॥ ३

आकारान्त:पदिको ग्रहणादा भवति नमोघो व्यञ्चा मा३इन्नगा२३४औहोवा३ तोमघा२४ औहोवा२ तालव्यं च द्वितीयात् क्रुष्ट तालव्य७ हाइशब्दश्चा- भवन्तोस्तोभे प्रथमादौ प्रत्यग्ने श्रिया२३४ ओ२३४ वाहा२७श्रो२४हा३४ओ२३हा३हाइ स्वासु नकार: आयन्तोये ट२नाया२चो३ ऊ ३दया३श्रा२३४५ वा२ शुकारमकारो च वृश्चिात्सिवाखर७ सर्व मा भवति या-स्तोभे प्रत्यगे वच स्व मादभन्नित्य वाश्वतीयानि मा२इ तत्व वा२श्या२३४ औहोवा३चा३नादभा१२या१-

३४५ औहो२वा. और्णायवयोस्त्वो भवति कविक्रतेर२३ या२३४ औहोवा३ ऋतावृधो२ या१२३४ औ१ हो२. वा१ पनिष्टयो३ या२३४ औ२ हो२ वा२ चरेवारेहत्या० सर्वं० श्रुधीहवाया० स्तोभ्यश्चौकारोन्त्यःपदिको ग्रहणादा. भवत्येकारहकारयोः प्रत्यययोः काव्ययामवाम्नसोम-सामसु नामह्ता२३ इ यमधिरा०३ दुरिता३ सा२३४ ए३ सुषा३ हो२३इ वसाहो२३ श्येनाइ नाया२३४ हा३ अग्निगवित्यवान्त्य मौकारे प्रत्यये रयिष्ठे ब्रूव० सर्व मा भवत्योहोस्तोभे स्वरे. प्रत्यये रेवतीर्न्नां औहो माथाभिश्या औहो सा औहो मेन्द्रस्ते सोनहितेपूविश्व-स्वदूज्योतिष्कृणांचोदेया० सूरागश्च पुशब्दश्च सान्दे रथ-न्तरे सर्व मा भवति स्पर्शगमस्तोर्वर्ज्ज मोस्तोभे प्रत्यये-श्विनोर्व्रतपूर्वं च तालव्य० शाक्वरर्षभे त्वोष्ठास्पर्शवर्ज मे स्तोभे प्रत्यये वृषाासर्वं मा भवत्योवाया मनन्तार-स्वरनीचार्थायां प्रत्यये प्रत्यये ॥ ४

ऊहगाने योनिवरस्वराः स्तोभाभ्यांसविरामा मनः-भ्यासस्तुतच्छन्दसां विकारा हि प्रत्यक्षपरोक्षादयस्त षा मुक्तो नियमोऽतोऽन्ये ऽनियमाश्रयाः. पैकाश्रयाश्च तेषां नियमाश्रयाणां यथैतच्च तुर्थमन्द्रातिस्वार्य्याणा०. स्वरा-णां ह्यन्तर मुच मुच मृदूष्मो दीर्घकर्षणस्य वृद्धिर्नन्दायाः

त्विन्यकर्षणाद्गतिरेकारभावमाप्नाया एकारनिवृत्तिः स्तो-भानां मुद्वारो गणगीतानां मन्ते निधन मेवमाद्यो नियमाश्रया अथ पर्वाश्रयाः कृतस्वराणि पर्वाणि परिमिताक्षराणि छन्दसि तेषां मूहे ज्यायसि छन्दसि यथान्याय मावापः कनीयस्यादिति लोपः पर्वणाए सङ्घातानां च शुमंहाय्यास्तु उत्तरायां उपाद्यलोपो वारे स्वेयप्रस्तावसदृशेष्व विकारो गायन्त्यादायामा-ध्कारणिधनवदित्याया द्वात्तरयोर्वयमुत्वावत्काचीवत-उच्चावद्व्य आकाराकारयकाराभ्यास एनातंवोग्नि मिति निधने त्र नित्य मोत्वङ्गौषूक्तै तूचातायामृषा-शब्दाभ्यासात्सम्प्राप्तिः क्रौञ्चे च हिशब्दाभ्यासाद्वत्ते चेकाराभ्यासात्माहीयगृहंपुत्रेषु चासः पर पर्वविका-रान् वक्ष्यामो यदधिकृतए स्वरतः पर्व तद्यथा योनि-स्वरविकाराद्यदन्यत् पर्वापद्यते तत्तेनैवोपदेक्ष्याम श्राम-हीयवमध्यमायां मुग्ए शर्मा रश्मिनाए श्रासु काम-श्रोत्तरयोरेभिर्वर्द्धा प्रवद्गन्द्रा माद्यः पुमध्यमायां तु मरा मंस्निष्टन्नोधर्ष ध्यमायां सांगायत्ताभ्याञ्चास्वरोत्प-तिश्च प्राक् प्रस्तुधसायाः श्यैतधसत्तीयायां चानुष्टुप्सु वायिश्यतातयां कावे श्रासु शिशब्दादकारागम उद्-पम्नाधां च वाशब्दे च नित्य मोत्व पोरुह-

म्नने सोत्रामनगायताञ्जास्वरोत्पत्तिश्च प्राक्कंधता याः ॥ ५

पृश्निनि तृतीयपादन्तं च दक्षसा पतिः कवीः पृतातूतद्विषां पतिः कव्युत्तमे च जमवत्तं ध्यमायाए रनोनुमा चदक्षसां पुव उत्तरयोर्न्नेमिस्त्वन्नां यग्रसुत्तमाया मुतरा तयानन्दनमयन्दासोमरयोर्जरिसङ्घातं कार्स्यग्रवसोत्तरयोर्जुषे जनात्सदावृधां मार्गीयवे मागायता प्रथमोच्च प्रसोमप्रथमाया मैत्स्यन्दायोश्च वृषाजिगप्रथमायां च घृतनिश्चने च्छतानुवमित्यत्र स्वरागमो हविवं शब्दस्य चोडाव इदए सङ्घातस्त्रिष्टुप्सु पार्थवाराहवासिष्ठकुत्सरथीयादिषु वाराहे शुचिं वावृधन्ता तरंतां पार्थं तु वृण्याद्यं चौषीं प्रकृतावूहे द्वितीय मनुष्टुप्सु त्वभु सङ्घात माज्यदोहयौतानयोर्जुहूसंङ्घातं विच्छन्दःसु च वैराजर्षभारिष्टयोर्वाशिष्यमपार्योश्च दक्षसोतद्विषामतं हि मन्द्र प्रथमोच्चस्य चतुरक्षरं मार्घ पिबासोमा पर योनिश्चत्यष्टौ हात्तरयोर्वृष्ण्यौ तद्विविष्टां प्रम हि द्वितीयायां वाघाङ्गीयोदेवा तद्विविष्टावृषोमङ्गा वोत्सप्रे वृधन्तादेः कर्षेषोजाप्रेष्याकर्षणमूर्त एका च द्वितीयमभ्यासश्च चौद्रे तु हणी प्रथम मपरोज्य त एकायाश्च वाचरए साभ्यासं मानवयोः

पूर्वे च दक्षसा पतिः कवीं शर्मदा चैकार्चे लुप्तो-
पान्त्यां तरे चैतस्या मेवान्यत्र शुर्मदाया: पूर्वस्या
उपान्त्यं नीचं प्राप्तलाष्टीसाम्नोश्च दक्षसा पतिः
कवीं रश्मोत्तरे शुर्मदोत्तरयोर्ज्जातिः पृष्ठाम् ॥ ६

यने प्रेष्ठवाजुष्टासामयोनावुष्णिक्षु च कूलीये
वैश्वामनसे राथीतमासव्यश्चश्वदूर्न्दां वश्रीये गायन्त्या-
याया मन्द्राश्वतारं व्यो चतुरक्षरश्च: परयोस्तत्तरे
ऽक्षा पश्चात्तरे होता त्वरे चान्यत्र सुप्तानि निधन
मेकिने स्वर वाचःसाम्नि स्वासूत्तमाया तृतीय-
पादादौ च दक्षसीतक्षिप्रां सौभयो: पूर्वे वारवन्ता-
नुविशुष्मा मुत्तरे चतुर्थीश्च द्वितीयं दूरवारूपयोश्च तथा
भार्गे तृतीयाश्च प्रवे वारवन्तास्त्रिस्तृतीये पादे द्वि-
तीये तूष्णिक्षु चतुरक्षरा प्रथमा द्यक्षरे परे पूर्वे
अग्निं च दक्षसीतक्षिप्रा मतंत्रस्तृतीयायां तवमाण्डव-
द्वादावासिष्ठे चानैव तृतीयाष्टमं वृष प्रथमायां कया-
साम्नि च घृतवत्या तिस्रे च योन्नावायं शुष्यमानवयोश्च
द्वितीयं विशोघे ऽधयन्दिमायां भे भवये प्रथमोक्षान्तस्य
वृष्णितक्षिप्रांतिः कविं सौहोये यता द्वितीयं सक्ष-
र्षास्तथा सर्वत्र स न्यायो मन्द्रश्चतुर्थ मयोन्नावैडकौत्से
च वसुरुचाया मोवादास्य लोपो वाशब्दे च नित्य

मोत्त्व .चिते च हाशब्दे मेधे चायोनौ बौधीये वच्यन्ते वा मित्यत्र स्वरागमो मात्रस्य राग दैविशीये स्वावहारोपात्यावान्तां द्वौ पूर्वौ हान्तौ ॥ ७

क्षीयचु विशीयाध्यायां तर्दिविड्डा वृणीमह्व वैच्छन्दसे समन्ते दिवा नक्ता प्रथमं दान्तास्य वृद्धिर्विष्टारपंक्त्यां किमिलिकमुहद्द्व्ययोर्वृणी प्रथम स्विसो दैर्घं परांङ्ग निश्रमाचार्यनियमात् पूर्वांगस्य वृदेव च पूर्वकल्पः शङ्कुन्ये षस्यध्यमाया मैकाराभ्यासोग्निर्वोवाजीयद्वितीयायां चैकारि च नित्य दीर्घत्वाऽ शङ्कुनि कौत्से हिशब्दो वृद्धः प्रकृतावृहे दीर्घः सर्वत्र संयोगी रुहस्वो वाशे भिद्रोणायऽशर्मामिषक्षौकाद्यान्तद्विविड्डा आणाः संवासु मनाज्ये तुसूतयावायोरनौ मुत्तरयोर्यज्ञामहामित्रोत्तरयोश्चतुरचरायां विधायां वाजीवाजांपिवासोमासु तरे जनित्र पुरोजित्या मुद्गौद्याद्यस्य दीर्घत्व इन्वते प्रथमर्क्षध्ये वमिया मुत्तरयोर्वार्त्रतुरे गौशाद्य प्रथमोत्र मागायतां द्वितीये च पादे सान्त्वातत्वाज्योतिर्बर्हंणासामाध्यान्तयोस्तृतीयोञ्चोत् परं तमु तृतीयायां तु भिंभांक् चतुर्थी मध्ये निधनानि निगदवृणीनि प्रयोगवत्त्वाधायाये गिरागिरा प्रप्रमयंऽसिष तस्य षष्ठ्यनुन्नाह्मणाऽ स्वाध्याये देवता-

नामधेयान्यथ निरुक्तोष्विके यथादेशं च कालंवत्त्विना मपि प्रवचनविहित: स्वर: स्वाध्याये तथा शाट्यायनिनाम् समानोदर्कोपूदर्कयोहार: पूर्वयो: स्तोत्री-यायोर्मंहनायां तूपांत्यं पदम्प्रतिस्तोत्रीयं वाजीये सङ्घातैकत्वात्तथाविच्छन्द:सु नित्यत्रस्तासु त्रिकबृहति च पर्वैकवादिम् स्तोमसमन्ते च द्यक्षरं पदम् संक्रष्टत्वात्.॥ ८

प्रतिस्तोत्रीय मार्ज्जिकानि निधनानि स्तोभाङ्गभूतानि च पर्वाङ्गभूतानि च तथा हायिकारस्वार: पदानुस्वाराणां मन्त्र:सामिकानि च स्तोभिकानि सामान्तिकानि सामान्ते सर्वत्रान्यत्र गणगीतिभ्य: प्रतिस्तोत्रीयं बोधीयधुराक्रमश्रयो: काखबृहति च निधनोपायान्ता: स्तोत्रीया: सर्वत्रेडाभिरेडाना मिड़ान्ता: श्रुधियान्ता: श्रुध्यन्तक्रमा: पगवयोरभ्यस्तान्ता: पुष्पादारयिष्ठयोरुगव्यन्ता: प्रवदुहसामराजेष्वेकारान्ता: सुमाने स्तोभश्च सामाद्य: सामान्ते यथाम्नायम् रैहत्ये तूहारस्तस्य लक्षणोद्देश: पूर्वाङ्गभूतस्यानुद्वारस्थिकृतस्य सामाद्यावाद्यं वचनं यथा भद्रस्येयोरिष्ट्याकारर्षभवाशिरामर्कसप्तहैकवषाणाम् श्रेयसि तु हाशब्दस्य लोप: जम्भान्तरसंस्तोभाङ्गीरूपाणाम् सामान्तिम्य वचनम् संक्र-

तीनि. स्तोभार्थं वचनं प्रतिस्तोत्रीय मुक्तिबलभिदो:
पूर्वस्यादौ परस्यान्ते भर्गस्य सामादौ स्तोभान्त्यं पदं
वैराजर्षभे त्वन्त्यांस्त्वान्तं. वचनं यज्ञायज्ञीयपत्येयोर्यथा ग्रामे.
वैराज इत्यादिः स्तोत्रीयान्तसर्वासु. स्तोत्रीयाद्ये चाक्षर-
मरस्वसंयुक्तं ॥ ९

आज्यदोहानि प्रतिलोमानि तेषां मौक्षस्य सामा
दावाद्यं वचनं साथर्वणादेवस्थानस्वरान्तरितत्वात्। अव
साना मविकारः सर्वाद्वारोऽतोन्यश्च वैरूपे तु देवताना
मनुद्वारः. प्रयोगसिद्ध्यर्थं मिडाद्येडागमाद्वैकवृषे च देव-
तानां निधनं तु सामान्ते सर्वत्र. यज्ञीयोयो गुरुषु
निधनैकदेशस्त्विरुक्तानां मन्त्यं वचनं मृषभे तु निरुक्त
देवस्थानंपूर्वयोर्निधनाद्यं पदं मक्रायाएं सर्वन्दिवा-
कीर्त्ये वैराजम्भाड् विकर्षष्टास्वरम्भासं. शंत मादिय-
ग्रसि समहे त्वाद्यं वचनं सामेः पूर्वस्योपग्रहाद्य
पद मपांव्रते च गर्भं. व्रते च क्रवान्तं प्रथमं मन्थि-
नोर्व्रतपूर्वकूकारेतिक्रान्तो वैरूपशाक्वरर्षभपूर्वयोरव-
ड़ासामान्ते ध्वर्ग्राव्रते. हौ-हु-ह्वा-हौ-हान्तेषु चत्वारः
सोमा वा श्रीहावाश्विवाज्योतिः प्रथमोच्च.मेकारा-
दिकष्ट मेवं पदायस्तोभाः परासु विधासु ज्योतिर्भाः
शिशुर्वांगिराख्यो मेध्य इति मादगीतिस्तुल्यापरयोरुकारः

सामान्ते निधनाय स्तोभाः स्वर्वत इति निधन मुप-
ग्रहादिर्व्याहृतिसामानि पञ्च भूर्भुवःस्व सत्यम्पुरुष
इत्येतासु पृथगग्निरिन्द्रता प्रस्तावो मन्द्रे सोमस्विदन्त
आनीकयां तृतीयः स्वर्ज्योतिर्निधन मकारैकाराद्ये वं
सर्वेषा मेष विकारविधिरेतेन प्रदेशेनोह्यः सामगणः
कल्पयितव्यः कल्पयितव्यः ॥ १०

॥ इति अष्टमः प्रपाठकः ॥

अथ विकल्पो रथन्तरमतिर्मदमदोधनकामे पुरःसाम
त्तरयोस्वारङ्गमानदेष्टे उरक्षियोर्हिनादीरिहिस्वर -
मातृाद्वयक्षमिन्द्रो ध्यमषष्ठं न्वमाच दीर्घे परयो-
र्दीर्घापरं नोचैर्गीतृतीयदशमं क्रुष्ट ं सर्वत्र धर्मविध
र्मयोः पञ्चाद्वयो धनानि स्तावे हविष उत्तरयोः प्रथमे
विराट्पर्यू च देव्यं गोयस्तदादिर्नवे निहोतातिधातु-
वाराल सो दैर्वे गकारः शमे राजन् भवत आसोक
तृतीयाया मृते न यानिवन् मध्ये जाम्न तं प्राञ्चयोर्व-
लोपश्चाद्य उच्चैस्तकारो यजिवाह इहायां भवते यशस्त-
त्तरयो रग्निन्द्रूसां प्रस्तावे करावत्रहन्त्यु दा वा इति गतिः
षभे काम्या त्वन्ना वारे पुना सवहति प्रसोस्वतरे
पुनाभिसो अभ्भे चोत्तरयोः ककुभोर्विकल्पाः ॥ १

अथ भावान् प्रवक्ष्यामः प्रगाणां यैर्विधीयते । आर्चिकं स्तौभिकञ्चैव पदं विक्रियते तु यैः । आयित्वं प्रकृतिश्चैव वृद्धश्चावृद्ध मेव च । गतागतं च स्तोभानामुच्चनीचं तथैव च । सन्धिवत्पदवन्नान मत्व माभावमेव च । प्रश्लेषाश्चाथ विश्लेषां जहि त्वेव निबोधत । संक्रुष्टं च विक्रुष्टं च व्यञ्जनं लुप्त मतिहृतमी । आभावाएश्च विकारा एश्च भावानूहेभिलक्षयेत् । एतैर्भावैस्तु गायन्ति सर्वाः शाखाः पृथक् पृथक् । पञ्चस्वेव तु गायन्ति भूयिष्ठानि स्वरेषु तु । सामानि षट्सु चान्यानि सप्तसु द्वे तु कौथुमाः । ऊनाना मन्यथा गीतिः पादाना मधिकाश्च ये । योनिदृष्टाः समा य्येन्ये पादास्त्वक्षरशः स्मृताः । आयेभावश्च नेदानीं दीर्घं यश्चैव क्रुष्यते । कर्षणे तु निवर्त्तेत त्वायिकाया मुपद्रवे । ओभावो दृश्यते साम्नैराभावश्च यथाक्रमम् । अभ्युद्धृहेन सर्वत्रोहे गीतौ रहस्यवत् । स्वादिपर्वणि तिस्राभ्यां तथैवान्येषु सामसु । आर्चिक निधनं न्याये स्तौभिकं वा यदक्षरम् । क्रुष्टाकृष्टम्भवेत् स्वार्य मन्तोदात्त त्वधे स्वरम् । मणाज्ञनएसदृह्वोना माविशासिविदेसुंजित् । त्वनाद्वयूएश्रियेतिभी रयिम्प्रियमभिष्टिता । जसावसन्तमत्वम्म त्सुतवडाः षिभिर्श्रयन् । न्यायादेतान्यपेतानि

श्नवत एके द्वधे स्वरम् । स्त्रीभासपौष्कलाष्टेडरयिष्ठाच्छि-द्रधर्म्मसु । श्रैताश्ववतयोस्ताभ्यौचतु:षडिडयोस्तथा ।
षड्भासे पौष्कले सप्त स्त्रीग्यष्टेडे पृथक् द्वचे । रयिष्ठोक्ते तथास्तोभे द्वे द्वे न्यायविरोधिनी । अश्वाभ्यौगवयो: स्तोभःधर्म्माच्छिद्रेषु पञ्चसु ॥ २

तृतीयाद्यान्त्यं हि स्तोभे दोर्घीभवति न वाभ्रं स्पर्शान्त्य च कौत्से चेकारोकारौ नश्वाश्वयवमध्यमायाः सनद्वन्द्रायां चौद्रे च क्रते चापदान्तो विशोये त्र पूर्वे शूष-त्रिणिधने चायास्ये सैधे षिशोदन: क्रामे च प्रथमकल्पे सर्वासु सौमे स्तावे कात्ते च पर्य्यश्विनोर्ब्रतोत्तरे शङ्कुन्येकार ऋषभे च शाक्वरे सम्मील्ये लघुविभते त्व कालेये महामहीयवे च क्रौञ्चाभिनिधनसप्तहपयउत्तरधर्त्तोर्ह्नासदस्यवेषु द्व-ष्ट्यार्द्दिजितोश्च पूर्वं. संयोगे मपोत्तरे स्तोभे क्रौञ्चे त्व-संयोगे नान्वाविनेमि: कौत्से हि-शब्द: प्रवद्भार्गवे वृष्टादस्थावकार: स्वारे च पर्शौ हाराद् योनौ त्वं-श्च-प्रथमायाञ्च द्वितीयं सन्त: ष जनित्रे रथ-न्तरवृषाश्विनोर्ब्रतेष्वोस्तोभे द्वैगं व्रात्योत्तरयोश्च येला-न्दतीययोस्तेष्वोकारे स्तावाद्यं कावतरे वैधने कृष्ट-वृषयोर्मध्ये रैवते च वृष्याद्दि: साहीये च शतायास्ता

वात्सप्रे द्वितीयान्तः सूर्य्यस्य ऋभिसामाद्यायां मध्य-
स्थान्त्यम्बौधीये मघोना मेके देव्ये द्वीधीं स्वा-
वितदेव्ययोः त्साशुब्दः स्वरयोः काकुभे ह्यः श्येवे
नद्दू दीर्घत्वम् ॥ ३ ॥

शाक्त्य ह्रीष्यन्तो वृद्धो शतप्लवे वारान्तोषतयश्च च-
देव्वते चाविप्रोहितिस्तावाद्स्वरान्तो मगशूग्रेधामले च
त्वाष्ट्रीसाम्नि ह्रारादियौनौ नषपूर्वपजूरुणसाममशोक-
पृश्निषु च नौदे दिरित्ते शब्दा अरिष्टे च ये वी
इत्येतौ शब्दौ समुद्रच्छन्दसि चोत्तायां द्वितीयस्थसरप-
विराजे स्तावाद् गेष्णादिरवृद्धः संज्ञारवैश्वज्यो-
तिषगोराङ्गिरसेषु नियं तौदे ज्यवे व्यं द्विस्लेजयविणि-
धनसाप्तमिकेषु चथे सावादिरदेवः सिष्ठे तद्विङ्गायां
अन्तो योनौ रुणसाम्नि चरूपदौ विशीयश्टेडेषूर्मिणा-
ङ्गावो जम्भे च तृतीयो दादि निंत्ने च पूर्वं दैवि-
शीये हारादिरस्याः भृङ्ग च कौत्से वे सूष्वा-म्तुर्थं
मेकोना मन्ते राधाया अन्त्यानि वर्द्धन्ते स्यत्योत्तरयोश्च
तिरोवत्यां योनिवदाद्यायां मन्त्र सर्वासु घृतनिधना-
यायां च शूवत्या मन्तवद्वान्त्ये हापरे हे श्याविचोनाया
माध्यएं सङ्कर्षोद्वितीय मन्यस्यां वारे च नो रहे नौ
तृतीये दे वृधन्ता तरुताएं श्रीवासिष्ठउतद्विषाम्यतिः

कवीमयन्दासोत्तरयोस्तृतीयोच्चाक्षतोत्यक्तिष्कक्षिजस्वर उपशिक्षायां प्राक् प्रहूयसाया: क्रोथायाश्च पुनान इत्यत्र सोमः सोदे वृष्ठे धौ चेन्द्रमच्छायां अच्चराया मादिसौढे मोच नीच दुच पितापवमानामाशिवांसश्च जयसितश्च्यै तेषु भ्रपेव धतुर्थेव वपा मन्द्रे ॥ ४

आदिह्वोदा तस्याहदुवायरूपयोद्वितीयञ्च प्रत्युक्रान्तं प्रम चाभिगीतं भौशवगतश्चैताजिगोत्तरनिचखारयामैषिरवाश्ववार्षाह्वरवाच:सामहत्कप्रियेष्वग्रमिन्निहृन्वन्नपोचाश्वाबोधीये सर्वमयोनौ निते च हविषि च गौथि न प्रवाञ्युत्तरयोखेयानिधनयोरभिहितपौष्कलहव्यगारमानववन्नीयभरपञ्चयासमु ॥ ५

अथो स्थभावो वृष्ट माउ यत्पक्वत्थी तस्य वचन मःपदान्त: समान्न चनरवे विकल्पे प्रियावसु सिसीदतु भूरितेवसु न सन्निनिनि निधनत्वात् सोम्य मधु श्योकार: पादमध्ये येन्दो बभ्रौ देतर वसो वसूनि दाति यज्ञो धिगो स्तावे मिन्द्रवौकार उरा विमौ.मधौ मतौ तस्यौ योनौ चाभे ॥ ६

रथन्तरे स्तावाद्य मायायां वृष्वत रवतरे तुरीयं नीचः सर्वत्र च मन्नजातोदश्च: सुदेवो वः षिधे च तृतीयचतुर्थे दे दुरितावसतश्चाजावितोत्तरयोरेन्द्रयाहि-

पूर्वयोः पर्युषु चोपान्त्याच्चां प्रतिगिरांसिते च द्वैवाख्ययोस्तृतीयोपान्त्या मन्नि मी सेधे चाभिसोमा-ययोः पिबासु चाध्याय्यां वनदे च स्वास्वाययोर्डिने चतु-र्थीच्चांनि यथा योनावाद्य द्वितीयायां प्रथमे निघात्या-न्मन्द्रे तृतीयायां चप्र तृतीययोः कौत्समृष्टासिक्रणुषा-माशुभार्गवे त्वेचरोहा प्रत्नावरोत्रायायोर्नीनिवदस्य ध्यमायां मातृनाकूपारे चाद्यायां द्यचरोत्तरयोरच्छिद्रै-कर्चेणो नीचः सेतःशब्दश्चावृद्धो विचे प्रत्यये वृवः सिते वृण्यन्तः चोवते द्वितीयपादान्त्या मन्नितीयस्वर विशीये मोचादिनीचो नावहिलन्ति सर्वासु चोयचतुर्थ्यायां चोय-दृच्यदुच्च सक्ष्ट च तृतीय नौ द्वितीय मुत्तरयोरेका-चरणिधने च जये शता द्वितीयम् ॥ ७

गूर्ह उत्तरयोर्हीता यचा मृतुष्ठा चोयवत्तौरे प्रस्तावो योनौ प्रत्नसधस्थायां यजिसङ्गातवत्पूर्वार्क-पुष्परयिष्ठयोः स्तौभिकं मर्वानुपाद सामान्ते सर्वा-ण्यार्चिक मक्रष्ट मर्वनायोनौ वैधृते नौधे रे च द्वितीय वाम्ने चायोनौ च्छिद्रे भिसोमायायां नीचं ध्यभ्यासे चोयचतु विशीयान्तायाय सोमान्माभयोर-कत्वान्माभा संपूर्यते दृस्वरे विराम मेके सवबृहति च प्रत्नान्माभयोरच्चोरूप ध्यमाया मुस्थ माउवायां वि-

रामशिडनतृतीयायाए स्तावे भ्यासार्भवमेके रथोषे वा विसर्जनीय आम्नायसिद्धत्वात्तृती-कौत्से तृतीये पादे तृतीयोच मभीवर्त्तवद्द्रागात्तृतीयायां च रघाग-तृस्पृष्वे पतिः कवीषु चान्तस्थाचरस्याभ्यासः सर्वा-स्तृतीये दे क्रुष्टद्वयोर्म्भ ध्येगीत लुप्यते कौत्सेय-शःसएसर्पेषु वान्तेयतिशब्दो नीचावरो च यत्सर्व-तासूर्यए-शौरते हुम्भान्नीथत्रज्जारादिषु गीशृङ्गे सञ्ज-याभीशववैयश्वसाधादिषु लचणासिद्धत्वाद् द्रव्यान्तर एकं पर्वं भवति नमसा लेयवच्छायन्तीये मराये ह्यउवान्तः क्रुष्टे वैराजे चायोनो विनतप्रतिषेधो वैरूपे तु देवतापदं देवतापदं निधने ॥ ८

अग्नखिणिधन उष्णायां द्वितीयपादद्वितीयः द्यत्प्रमातगेवत्वाच्चानीकयायामाय नुष्मि च श्रोके प्रस्वरे थाउत्तरे दए्ष्टे साशब्दो दासे दुकथे भिगीत-कमयोरद्वर्यमेधे हायिस्तोभात् तृतीय मयोनो क्वावे गेयषष्ठए सर्वत्राञ्चनपञ्चमं प्रोच्चयास्ताए सप्तमं त्वान्दुतादंपसयोश्च वैराजे प्रसभप्दावृवद् वैराजे प्रस-शब्दावृवत् ॥ ९ ॥

॥ इति नवमः प्रपाठकः ॥

नकारस्य भवति सन्ध्यगीतः कुविन्सु नायाश्वी-
घीय दूहवदूहे वीदासे चोत्तमाया मप्रथमः स्वासु साहीये
चोत्तमाया मभिसैम्माध्यासायाए. सर्वंच योनौ हीडि.
धर्त्ता द्व्यक्षरं पर्व दीर्घोद्वातपरत्वादेकाक्षर मून म-
धिकपर्वत्वाच्च प्रथमस्वरे प्रत्यये क्रुष्यति भिप्रि त्र्यक्ष-
रीणि सर्वासु न. द्वितीयचतुर्थे पादे मराये भ्यास-
एकाक्षरस्त्रिरुक्तः ; पादान्ते सर्वत्रापुरीनः पा-
दमध्ये च हिशब्दस्याभ्यासः प्रेङ्खाया मग्नेटी-
दिहि ॥ १

गूहे त्वं भवत्यकारोग्निप्रत्यये वादौ. हिशब्दः
सौभरामहीयवकौत्मानां दासे च कावपर्णकूलीयाम्ना
मो भवति साहीये च भिशब्दो नुतं कावे नाध्वत्वत्य-
पर्णवीधीये च वाचि सर्वं मोभवत्यनुस्वं मो वा परा-
यान्त्वो भवत्यन्ता तृतीय क्रुष्ट. मप्रत्युरक्रान्त मा चतुर्थ-
कृष्टन्तु पादान्ते मन्द्रकृष्टस्वामन्द्रलोष्टस्य त्वधन्यञ्जनानाए
स नित्य द्वत्येभ्यः परोभ्यासस्य देव्य औशायवयो रो
भवति यकारे सानी शब्दस्य सर्वत्राकारे वीधीय-
निधने च घोषे ॥ २

वीकौश्वप्रमशाक्तत्रसञ्जयभरक्रन्दाभिकार्णश्रवस्यै-
ताकूपविशोविभीशकंकुभत्वार्पर्णरश्मादिष्वायास्य —

द्विनिकारावकार्तीयवच्छावाश्वयच्छेषु च श्रेयासध्वंसमन्विता न निधनं९ होषोषु या सामसु ॥ ३

अथैते तृतीयादिन्या श्रोहोवायाः पर तृतीय नीचं न तद्विप्रान्तयोर्बृहति च द्रासा द्वितीये का९ सर्वत्रादर्श्यम प्रथमतृतीयद्वयं योसूचाकुत्तावतृतीयं नोच मायाया माच्च छमायान्तमसे चाग्राद्वितीय नेका९ सर्वत्र यानो प्रथमे दे स्तोभे चोत्तरे वकार श्रो भवत्यन्ते द्विष्ठीयगवसितेषु स च पवृत्सर्वत्रान्त्र सयोनो वसुच द्वितीयादसुतिथे च तृतीये प्रथम योनो जग्रे च स्तावान्तर मयोनो ॥ ४

क्रौन्दे दे च मातप्रथमोच्चमसूरासीये च तृतीयाद् गेष्णात् तृतीय न प्रसोश्रवसश्राङ्न्द्रान्त्राञ्जनिलोप उतद्विषायायाश्वा९ श्रवायाश्च सेघे तु ष्ठलम्पीयूषाश्चा यारु सवाद्यस्य लोपः कृतिनि तृतीये दे सर्वत्र रस्यतेनुष्टुप् द्वितीये च षभे च प्राक् च तुष्ट्वयोनावो मिति च नीचः श्वे तृतीये पतृषट्वर एकचे द्वे दसे श्रीये हाराद् योनिवदविशोत्तमायाए सोमाघयोश्चाग्नेयं जास्वर वृन्नविच्छन्दःसु प्रहूयसाथाश्च बच्चर सवद्धादिस्तनिणाप्वयोर्यश्च: सर्वचास्तावद्धारयोरवश्ये द्विस्तोमसु मराग्मरजीचभेचाकारान्तकान्तम-

योनावुदूहः सर्वत्रामीढे गतेष्व कनीयस्य त्वमोकारस्य क्षैतलेयं त्व पदगीतस्त्वसित्वात् ॥ ५ ॥

श्रुध्ये स्तावे तुरीये प्यते सर्वत्र संवत्सरायां तु तृतीये गोमन्त्रस्य मरुता मिन्द्राए स्वासूत्तमायां धर्मे चतुर्थाद्य योनिवद् ध्यमायाए स्तावे द्वितीयक्षातं ए कृष्णसाम्न ग्रद्यान्तायोस्तु विकारो नामधे धुाद्याद्ययोः पाद्युपा मापद्यत्यथमोत्ते प्रभङ्गविमज्जने च भुलंविः स्मिन्नि च वसपृश्निश्चैतमदृगेषु ष्टम्भे चौशसूपे शीये च नाक्रदृएं ह्यशसि क्रुष्टादेक ध्यमायां मकारो द्वितीयए सम्मिश्रः सुरूपे पदगीत ओष्ठेऽ इकारे च ककारश्चौ भवति मराये इमालः ष्ठेष्यःकारस्तरायेषु प्यते नौ च कृष्णसाम्नि द्वितीये लान्देथः मोच्च मकुति चतुर्थे तु कृणीजास्वरए सर्वत्र कास्याचयतेनयताविमित्तिरे च दे दे यांविधाः सर्वचायोनौ जास्वरए प्रवमनसे च द्विषः प्रवमनसे च द्विषः ॥ ६ ॥

प्सु षडन्ते रत्नाध्वरगाधनवदुप्रान्त्ये भिरायवान्यत्र सुताद्यलुप्तापस्त्रोत्तरस्वाभ्यासः क्रयाएराजे ध्यमायां माष्ठद्दाध्याया चान्त्यस्य तमसे स्वासूत्तरयोर्वर्णोक्त इति चतुरक्षरे नाभ्यासे मरायें हाउवा द्वितीयायां क्रुष्टादान्त्याविधाः सर्वत्र स्वासूत्तमायां प्रथमे

दे मूर्द्धन्या एव दन्त्याः स्वरोपधोयाश्वयोर्हितिहारी स्यादविकृतपूर्वपदवत्परिष्कृते चागमो लोप्यः ॥ ७

कार्मांश्रवसोत्तरयोर्व्यैः स्वदयासदावृधादस्मऽसुराक्रौञ्चेसभानह्विवामग्निवीवाजीय उपान्त्यं क्रुष्टऽ सर्वासु त्रिकवत्सायां चाद्ययोः प्रथमायां चतुर्थ मुत्तरयोः पञ्चमऽ स्वासु वैराजे तृतीये प्रथमान्त्य ह्यः आप्रसंमार्ग्गे द्वितीयायाऽ राधायां तृतीय मयोनौ कौत्सदऽष्ट्रोत्तराकूपारश्यपग्निमानवीद्यवगाधेधूलवासिष्ठतिथकुभनिवेषु चनोतिषड्ग्शाक्वरयोरान्धान्त्यो योनौ सिन्धौ वारे रिपिन्नरपि शाके मातृगोभिस्त्रिणिधने सौहविषरथ्योत्तरयोर्गोभिलान्दे साम्यात्व मुपान्त्य मयोनौ ॥ ८

यस्ते हरे च श्येने दानाध्वरां प्रावाराहश्रोताकयस्थिरां द्वितीय कर्षणं धर्त्तासाविसीचसमु सफे समदा त्वाचरान्देर्व्य प्रह द्वितीयं मन्यतां वैराजे योनावन्त्ययोर्न्नत वैश्वमनसि त्वीत् स्तोभार्चिकसम्धर्ग्रहणात्सप्रे. द्वितीयान्ते शैत्तमीया माद्ये शोके चाद्ययोः शोके च सुषश्रीगापरतऽ रुणसाम्नोलाम्दे हीषीप्रभृत्युद्धारान्त्याया मनुद्धारस्तमसाके शोनावाद्ययोर्मागायतोद्घातनिघातौ ॥ ९

अथाहगीतीनां प्रस्तावोद्देशः स्तोभः पुरस्ता-
दन्तर्वा प्रस्तोतुरन्ते चाविधाय उद्गातुस्तु काण्वर्षभ-
स्ववमानजनित्राणाम् हुवादिर्वासिष्ठे पद्यो नादशे
द्व्यक्षरो वा संकृतिस्वरद्च्युतयोश्चतुरक्षरो वा सुरूपा-
जिगैडसाकमश्वानाम् सदेवतीर्या राजनशाक्वरर्ष-
भयोर्हिंपाश्वञ्जयनानदगौशृङ्गरातिदैवोदासानां का-
वश्रौतकण्वार्षभश्यावाश्वायास्यैडोद्वाणारस्यैडसौपर्णमौक्षमा-
गौयवजराबोधीयर्यद्वाहिष्ठीयोत्सेधषाम्दस्वारसामराजि-
पौरुमीढपूर्वारवन्तीयश्वार्चतुरयगवैरूपहस्वाबृहदा-
पश्यामहादिवाकीर्त्यानां वान्तःक्रुष्टाद् कृष्णाग्निर्वार-
वन्तीये आत्मनि च महादिवाकीर्त्ये यात्रो दाशः
स्थ्यत्यभासशाम्मदगायत्रांसितानां जारान्तो वीङ्कष-
सिष्ठप्रियपज्राणां वारान्तं वैश्वामित्रे हाउकारान्तः
सन्तनिजमदग्न्यभवीत्तं कात्तयशाकारन्तंत्वाष्ट्रीसाम्ना
जाराग्निन्द्रतापक्रमाणान्तं एवाविभाग्यानाम् ॥१०॥

यैत्ताश्वैडयास्यवैशांकक्रोशश्रौष्टोद्धशपुवदैर्घतम-
ससिमानांमिषेधवैराजानां द्व्यक्षराभ्यस्ता द्व्यक्षर आनू-
पैटतंसौहविषत्रैषांत्वोत्तुरपयोन्तःस्वराणामग्निन्द्राभ्य-
स्तामध्यमंक्रौञ्चस्य पादोभ्यस्तो वषडन्ताभ्यस्ताकूपार-
राजनपयसां द्वादशाक्षराणि च रैवतर्षभे वाचुरा

बृहत्के सोमसामगार्थवीकौत्सवैरूपौदलगायत्रगौशन-
सैन्धुक्षितमैधातिथरौहितकूलीयेद्ववदैर्घवाहेन्द्रस्यय-
शःकाण्वबृहत्त्वैष्टुभश्यावाश्वशौनवार्षाहरवाजभृत्काः-
र्धप्रवसानां चत्वारि द्वे वान्त्ययोः शङ्कुवार्हतवा-
जजित्स्वाररौहितकूलीयासितयौक्तस्रुचाना मष्टावौ-
र्णायजागतसामसाम्नोरेकादशोत्तरे जनित्रे द्वादश
हारिश्रीयते स्तोभ उपायन्त्यःपदनिधनेषु निधनस्य
तद्गुणश्च स्याद् द्विरेकवृषे चिर्वा पदस्तोभेष्विलान्दाद्यं
त्रिरुक्तं यथोक्त मितरेष्वन्त्या वा द्वाधरे महानाम्नीषु
द्विपदासु प्रस्तावः शाक्वरप्रथमेष्वध्यासपुरीषेषु च
ग्रन्थोपदिष्टं वैच्छन्दसेषु गीतं प्रास्ताविक मेव स्याव-
श्वादीना मप्रस्ताव्या उत्तराः प्रस्ताव्ये वा सन्तनिनः
प्रस्ताव्ये वा सन्तनिनः॥ १.१ ॥

॥ इति दशमः प्रपाठकः ॥

॥ इति सामप्रातिशाख्यं समाप्तम ॥

॥ अथ निदानसूत्रम् ॥

(सामवेदीयम्)

॥ ऋषिप्रोक्तमिदम् ॥



श्रीसत्यव्रतसामश्रमिणा सम्पादितम् ।



कलिकाता,—सत्ययन्त्रतः
(१९—३, घोषेस् लेन)
संवत् १९५९, श्रीमहेन्द्रनाथसरकारेण मुद्रितम् ।
प्रकाशितश्चैतत् एव सम्पादकेन ।

॥ अथ निदानसूत्रम् ॥

॥ अथ प्रथमः प्रपाठकः ॥

॥ ॐ ॥ अथातश्छन्दसां विचयं व्याख्यास्यामस्त्रयश्छन्दःपादा भवन्त्यष्टाक्षर एकादशाक्षरो द्वादशाक्षर इति नतु मिश्रं दशाक्षरोऽष्टाक्षर आ पञ्चाक्षरताया प्रति क्रामति विश्वेषां हित इत्या चतुरक्षरताया इत्येक आ दशाक्षरताया अभि क्रामति वयं तदस्य सम्भृतं वस्वित्येकादशाक्षर आ नवाक्षरतायाः प्रति क्रामति यदि वा दधि यदि वा नेत्याऽष्टाक्षरताया इत्येक आ पञ्चदशाक्षरताया अभि क्रामति सचा दधानमप्रतिष्कुतं शवांसि भूरीति द्वादशाक्षरस्त्र्यक्षरतायाः प्रति क्रामति अनूपे गोमान् गोभिरक्षारित्यष्टाक्षरताया इत्येक आ षोडशाक्षरताया अभि क्रामति त्रिकद्रुकेषु त्वं वृत्राणि हंसि अ प्रतीत्येक इन्द्राग्नी त्याऽष्टादशाक्षरताया इत्येके ऽर्चामि सत्यसवं रत्नधामभि प्रियं मतिं कविमित्यथा नो वृत्त्यप्रदेशो यत्र ह्रस्वमक्षरमपी-

समं प्रादृत्य ** सा जागती वृत्तिर्यत्र दीर्घं सा त्रैष्टुभी क्स्वाक्षरखोपरिष्टाद् व्यञ्जनसन्निपाते ऽपि गौरव मष्टाक्षरद्वादशाक्षरौ लघुवृत्तौ दशाक्षरैकादशाक्षरौ गुरुवृत्तौ कृष्येतैः खलु छन्दांसि वर्त्तन्ते पथ्यान्येवाग्रे सप्त चतुरुत्तराणि व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥

चतुर्विंशत्यक्षरा गायत्री त्रिपादा ऽष्टाक्षरपादा ऽप्यासि चतुःपादा भवति षडक्षरपादा तत्रापि पञ्चाला उदाहरन्ति पेटी पालकं ते पेटा पिपिटकं ते तत्र ककुप् ***** परेहीत्यष्टाविंशत्यक्षरा त्रिभिस्त्रिपदैः पूर्वावष्टाक्षरावुत्तमो द्वादशाक्षरो ऽथ यत्र मध्ये द्वादशाक्षरः सा ककुब् यत्र प्रथमः सा पुरउष्णिगथापि चत्वारः सप्ताक्षरा इत्युदाहरन्ति नदं व ओदतीना मिति द्वात्रिंशदक्षरानुष्टुप् चतुःपादा ऽष्टाक्षरपादा ऽथापि त्रिपदा भवति मध्ये ऽष्टाक्षरो ऽभितो द्वादशाक्षरौ ता: पिपीलिकमध्येत्याचक्षते मध्येज्योतिरिति बह्वृचा एवं पादो यतो यतः परिक्रामेत् तज्ज्योतिष मेतां ब्रुवीत पुरतोज्योतिर्मध्येज्योति रुपरिष्टाज्ज्योतिरिति षट्त्रिंशदक्षरा बृहती चतुःपादैव यस्यो ऽष्टाक्षरा द्वादशश्च उपोत्तमो द्वादशाक्षरस्तां पथ्येत्याचक्षते ऽपि च स्कन्धोग्रीवे-

त्वथ यत्र प्रथमो द्वादशाक्षरः सा पुरस्ताद्बृहती यत्र द्वितीयः सोरोबृहती सैव न्यङ्कुसारिणी यत्रो-त्तमः सोपरिष्टाद्बृहत्यथापि चत्वारो नवाक्षरा इत्युदाहरन्त्युपेद मुप पर्चन मित्यथापि त्रिपदा भवति द्वादशाक्षरपादाः प्रत्नं पीयूषं पूर्व्यं यदुक्थ्यं मिति ताᳬं सतोबृहत्याचक्षते बार्हत मपि तृचᳬं सतोबृहत्य इत्येवाचक्षते यथा वयं घ त्वा सुतावन्त इति ॥ २ ॥

चत्वारिᳬंशदक्षरा पङ्क्तिः पञ्चपदा ऽष्टाक्षरपादा अथापि चतुःपादा भवति द्वादशाक्षरो ऽष्टाक्षर इति व्यत्यासं ताᳬं सिद्धा विष्टारपङ्क्तिरित्याचक्षते पर्यासे विपरीता सैवाथ यत्र पूर्वावष्टाक्षरावुत्तरौ द्वादशा-क्षरौ सा ऽऽस्तारपङ्क्तिराप्तभेणविवैतौ पङ्क्तिपादावि-त्यथ यत्र पूर्वौ द्वादशाक्षरावुत्तरावष्टाक्षरौ सा प्रस्ता-रपङ्क्तिः प्रस्तीर्णविवैतौ पङ्क्तिपादावित्यथ यत्र मध्ये ऽष्टाक्षरौ भवत्यभितो द्वादशाक्षरौ सᳬंस्तारपङ्क्तिः सᳬंस्तीर्णाविवैतौ पङ्क्तिपादावित्यथ यत्र मध्ये द्वाद-शाक्षरौ भवत्यभितो ऽष्टाक्षरौ सा विष्टारपङ्क्ति-र्विमृष्टपादाविवैतौ पङ्क्तिपादाविति तद्यच्च सिद्धा विष्टारपङ्क्तिर्बृहत्या वा ककुभो वोत्तरा भवति

तां प्रगाथां इत्याचक्षते अनुष्टुभा अपि प्रगाथा भवन्तीत्येके अनुष्टुप् प्रथमा गायत्र्यावुत्तरे यथा पुरो जितो वो अन्धस आ त्वा रथं यथोतये विश्वो विश्वो वो अतिथिं पान्त मा वो अन्धस इत्यथाक्षरपङ्क्ति र्या विंशत्यक्षराश्चतुःपदा पञ्चाक्षरा द्विपदा एनां एके प्रतिजानते पञ्चविंशत्यक्षरा भवति पञ्चपदा पञ्चाक्षरपादा तां पदपङ्क्तिरित्याचक्षते ॥ ३ ॥

चतुश्चत्वारिंशदक्षरा त्रिष्टुप् चतुःपदैकादशाक्षरपादा अथ यत्रोत्तमो ऽष्टाक्षरस्तां ज्योतिष्मतीत्याचक्षते पञ्चपदापि भवति चत्वारो ऽष्टाक्षरा एको द्वादशाक्षरो ऽष्टाचत्वारिंशदक्षरा जगती चतुःपदैव द्वादशाक्षरपादा ऽथ यत्रोत्तमो ऽष्टाक्षरस्तां ज्योतिष्मतीत्येवाचक्षते पञ्चपदापि भवति त्रयोऽष्टाक्षरा द्वौ द्वादशाक्षरौ स एष समासश्चाष्टपदतायाः क्रमते सैषैवं सती विष्टारपङ्क्तेः अवृद्धपदा षट्पदापि भवत्यष्टाक्षरपादा उभे यदिन्द्र रोदसी इत्येतानि खलु सप्त चतुरुत्तराणि छन्दांसि व्याख्यातानि प्रथमं प्रथमं त्वेवात्र न्यायं पथ्यं विद्यादेतासामेव द्विपदा भवन्ति यत्र द्वावष्टा-

क्षरी सा गायत्री यत्र द्वादशाक्षराष्टाक्षरी सा विष्टारपङ्क्तिर्यत्रैकादशाक्षरी सा त्रिष्टुभो यत्र द्वादशाक्षरी सा जगती विषमपादा शम्मदं प्र व इन्द्राय विश्वस्तेमा नु कमिति। नवाक्षरचतुर्दशाक्षरावेकादशाक्षरत्रयोदशाक्षरी षड्क्षरदशाक्षरावेकादशाक्षराष्टाक्षरी दशाक्षरपादा विराज एकपदा प्रभृतयश्चतुःपदाश्च एकादशाक्षरपादा अपि त्रिपदा विराज इत्यवोच्यते यथाग्निन्नर इति यथाग्निन्नर इति ॥ ४ ॥

ऊर्द्धं जगत्या अतिच्छन्दसो द्वापञ्चाशदक्षरप्रभृतयश्चतुरुत्तरा द्वौ सप्तापवर्गौ चतुःशताक्षराणां पराध्यां तासां नामधेयानि विधृतिः शक्रयष्टिरत्यष्टिर्मण्हनासरित्सम्पेति पूर्वस्य सिन्धुः सलिलमम्भो गहनमर्णव आपः समुद्र इत्युत्तरस्य तान्येतानि सर्वाणि कृतच्छन्दाᳩसि भवन्त्यथ प्राग्वि गायत्र्याः पञ्चकृतच्छन्दाᳩसि कृतिश्चतुरक्षरा प्रकृतिरष्टाक्षरा संकृति द्वादशाक्षरा विकृतिः षोडशाक्षरा अभिकृतिर्विᳩशत्यक्षरैः तासां मन्त्रप्यन्तस्था छन्दाᳩसि द्वाविᳩशताक्षरप्रभृतयश्चतुरुत्तरास्त्रयः सप्तवर्गा द्विशताक्षराणां पराध्यां तासां नामधेयानि

द्वाट् संम्राट् विराट् स्वराट् स्ववशिनी परमेष्ठा-न्तस्थेति पथ्यस्य मलं चामृतं च वृषा च जीवं च, टम्नं च रसस्य शुक्र मित्युत्तरतार्णश्चाम्भश्चाप्यस्चाम्बु वार्यपि उदक मित्युत्तरस्य तान्येतानि सर्वाणि द्वापरंच्छन्दांꣳसि भवन्त्यथ प्राञ्चि द्वाविꣳशत्य-क्षराया; पञ्चानूच्या छन्दांꣳसि द्व्यक्षरप्रभृतीनि त्वतुरुत्तराणि ह्वषीका सर्षीका सप्रीका सर्वमात्रा विराट्कामेति ॥ ५ ॥

अथ निचृद्भुरिजौ या एकेनाक्षरेणोनास्ता निचृतो ऽथ या एकेन ज्यायस्यस्ता भुरिजस्तान्येतानि सर्वाणि त्रेताकलिच्छन्दांꣳसि भवन्ति तद्यत् त्रेतास्थानं ता निचृतो ऽथ यत् कलिस्थानं ता भुरिजश्चतुष्टयेन छन्दो जिज्ञासेत पदैरक्षरैर्वृत्त्या स्थानेनेति तेषा मेकै-कस्मिन् वृत्तिविशेषेणात्र.जिर्जतनदुष्टस्य छन्दसो नोन-वृत्तेर्वर्ग मस्तीति.विद्यादथ दैवासुरच्छन्दाꣳस्येकाक्षर-प्रभृतीन्येकोत्तराणि रौहीणि देवच्छन्दांꣳसि सप्ता-क्षरा जगत्यष्टाक्षरातिच्छन्दाः पञ्चदशाक्षरप्रभृतीन्ये-कावाञ्चि प्रत्यवरोहीण्यासुरच्छन्दांꣳसि नवाक्षरा जगत्यष्टाक्षरैवातिच्छन्दा. अथ प्रजापतेश्छन्दांस्यष्टा-क्षरप्रभृतीनि चतुरुत्तराणि रोहिणी द्वाचिꣳशदक्षरा

जगती। षट्त्रिंशदक्षरातिच्छन्दांस्तेषां त्रयं त्रयं समेत्यैकैकमृषिच्छन्दो भवति तदेष श्लोकः कश्चित् स्वरो द्वाचत्वारिंशदक्षरमेकविंशतिः सप्त भूर्त्वानु भवति कर्मभिः पञ्चाशतः पञ्च नपुंसकानां द्वे चाधिके बिभर्ति त्र्यक्षराणामिति देवासुराणां छन्दोभिरात्मनश्च प्रजापतिः सप्तवर्गञ्चकारैकं छन्दसां यश्ववोढवे यस्य कस्य च छन्दसः सम्पदं कश्चिदिच्छति चतुर्थं तस्य सङ्ख्याय तावतीराहरेदृचो यट्तच्छन्द आहरेत्तन्यदस्य सम्पदे। चतुर्थं तस्य सङ्ख्याय विद्यात् तास्तावतीरृचः ॥ ६ ॥

अथावसानान्येकपदद्विपदानामन्ततोऽवसानं त्रिपदाप्रभृतीनां द्वावुक्ता शेषमाह षट्पदाभ्यो भवति तत् त्रिपदायामन्ततोऽवसानं दुहीयन्मित्रधितय इति तथा चतुष्पदायां त्रिष्टुभो वयो वयः श्राय मिति तथा पञ्चपदायां युञ्जे यममित्यथापि द्वौ द्वावथैकमभि न इत्वा यूथस्य मातेत्यथापि द्वावुक्ता ऽथैकमथ द्वौ तव त्यं नर्यं नृतममिति षट्पदायां द्वयोर्द्वयोरवसानमुभे यदिन्द्र रोदसी इत्यथापि त्रिष्वपि वृषपुराणवदिति सप्तपदायां त्रीनुक्ता द्वौ द्वावग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तमित्यथापि द्वौ द्वावथ त्रीन्

प्रोष्ठस्त्वे पुरो रथ मित्यष्टपदाप्रभृतीनां न मध्यात मवसानं विद्यते, तत्र मध्य एव पदस्य नावस्येदर्था-भिप्रायणान् न्यूनीभावो अर्थाभिप्रायणा दतिरेको ऽथ यत्रैतदक्षर मागच्छति ता मिति वा तदुतो नीक-रीतौ काक्षरीभाविनो वा सम्यय स्तदर्थेतौ श्लोकौ भव-तश्चत्वार्यपि सन्धिजातानि येश्छन्दो ह्रसते न च प्रश्लिष्ट मभिनिश्चितं क्षिप्र मथ प्रद्रुत मेतानि सन्धि-जातानि मिमाजश्छन्दो अक्षरैरेधं कुर्यात् सम्पूर्णेन पूर्णं किञ्चन नेङ्गयेदिति छन्दसां विचयं जानन् यः शरीराद्विमुच्यते छन्दसा मेति सालोक्य मानन्त्यांय श्नुते: श्रिय मिति ॥ ७ ॥

अथात: स्तोमान् व्याख्यास्यामस्तेष्वर्था भवन्ति युग्मतश्चायुजश्च तेषां विवेक एकप्रभृतयो द्व्युत्तरा अयुजो द्विकप्रभृतयो द्व्युत्तरा युग्मत उभये सन्तो द्वया भवन्ति समाश्च विषमाश्च यस्तेषं व्युह्यमानः समाः पर्याया भवन्ति स समो ऽतोऽन्ये विषमा विषमो द्वया भवन्त्येकाधिशय्यो द्व्यधिशयश्च य एकया समता मेति क्रामति स एकाधिशयो यो द्वाभ्यां स द्व्यधिशय-स्त्रिकप्रभृतयः षडुत्तरास्तेषां समाः पर्यायक्रमयस्त्रयः पर्यायाः पर्यायास्त्रिविष्टुत्याः प्रथमे पर्याये प्रथमा तृच-

भागां सा मेव पर्यायभागेत्याचक्षते मध्यमावाप उत्तमां परिचरा मध्यमा तृचभागोत्तमावाप उत्तमे पर्याये प्रथमावापो मध्यमा परिचरोत्तमा तृचभागां सैषा विष्टावकृतिरेकविंशतिप्रभृतिषु स्ताधिष्ठमुपपद्यते एकिप्रभृतयः षडुत्तरा एकाधिशया स्तेषां पर्यायकृतिः समपर्यायैर्विषमा वर्त्तते पर्याया हि ते भवन्ति यावभितः समा वयुजौ तयोः पर्यायान्तसंहरेत्पूर्वस्यैक मुत्तरस्य द्वाविति युग्मताञ्च द्व्याधिशयानां युग्मायुक्पर्यायाणां सता मेष एव न्यायो ऽथ युक्पर्यायाणां पूर्वस्य द्वावुत्तरस्यैक मिति यथा युग्मतां द्व्याधिशयानां युक्पर्यायाणा मेव मयुजा मेकाधिशयानां युग्मायुक्पर्यायाणां पञ्चप्रभृतयः षडुत्तरा द्व्याधिशयास्तेषां पर्यायकृतिः समपर्यायैर्विषमा वर्त्तते पर्याया हि ते भवन्ति यावभितः समावयुजौ तयोः पर्यायान्तसंहरेत्पूर्वस्य द्वावुत्तरस्यैक मिति युग्मतां चैकाधिशयानां युग्मायुक्पर्यायाणां सता मेष एव न्यायो ऽथ युक्पर्यायाणां पूर्वस्यैक मुत्तरस्य द्वाविति यथा युग्मता मेकाधिशयानां युक्पर्यायाणा मेव युजां द्व्याधिशयानां युग्मायुक्पर्यायाणा मित्थयुजः ॥ ८ ॥

अथ युग्मान्तो त्रिकप्रभृतयः षडुत्तरा द्व्यधिश्रयाश्चतुष्कप्रभृतयः षडुत्तरा एकाधिश्रयाः षट्कप्रभृतयः षडुत्तराः समास्तेषां पञ्च प्रकृतिर्व्याख्याताथ धानां विवेक एकप्रभृतयश्चतुरुत्तराः कलिस्तोमास्त्रिकप्रभृतयश्चतुरुत्तरास्त्रेतास्तोमा द्विकप्रभृतयश्चतुरुत्तरा द्वापरस्तोमा श्चतुष्कप्रभृतयश्चतुरुत्तरा कृतस्तोमा अथ येषु समविषमाणां विवेक एकप्रभृतयो द्वादशोत्तरा एकाधिश्रयाः कलिस्तोमाः पञ्चप्रभृतयो द्वादशोत्तरा द्व्यधिश्रयाः कलिस्तोमास्त्रिवृत्प्रभृतयो द्वादशोत्तराः समाः कलिस्तोमास्त्रिकप्रभृतयो द्वादशोत्तराः समास्त्रेतास्तोमाः सप्तप्रभृतयो द्वादशोत्तरा एकाधिश्रयास्त्रेतास्तोमा एकादशप्रभृतयो द्वादशोत्तरा द्व्यधिश्रयास्त्रेतास्तोमा द्विकप्रभृतयो द्वादशोत्तरा द्व्यधिश्रया द्वापरस्तोमाः षष्ठप्रभृतयो द्वादशोत्तराः समा द्वापरस्तोमा दशप्रभृतयो द्वादशोत्तरा एकाधिश्रया द्वापरस्तोमाश्चतुष्कप्रभृतयो द्वादशोत्तरा एकाधिश्रयाः कृतस्तोमा अष्टप्रभृतयो द्वादशोत्तरा द्व्यधिश्रयाः कृतस्तोमा द्वादशप्रभृतयो द्वादशोत्तराः समाः कृतस्तोमा अथोऽन्त एषां तज्जातीयविवेक एकप्रभृतयस्त्र्युत्तरा उभयेषा

मेकाधिश्रया द्विकप्रभृतयोस्तूत्तरा उभयेषां द्व्यधि-श्रयास्त्रिकप्रभृतयस्तूत्तरा उभयेषाꣳ समा व्यत्यासं वर्तते ॥ ९ ॥

अथ कतमे सप्तच्छन्दसाꣳ स्तोमा इति त्रिवृत्पञ्चदशः सप्तदश एकविꣳशः पञ्चविꣳशस्त्रिणवस्त्रयस्त्रिꣳश इत्यथ खल्वाह सानुष्टुप् चतुरुत्तराणि छन्दाꣳस्यसृजन्त षडुत्तरान्स्तोमान्सप्तदश इति सप्तदशात् त्रिकं मुद्धृत्य पुरस्तात् त्रिवृतो निदध्या-च्चतुर्दशानि शिष्यन्ते ताः पञ्चविꣳश उपदध्यादेव-मेतान् षडुत्तरान् ब्रुवते ऽथ कतमे भागस्तोमा इति त्रिवृत्पञ्चदशः सप्तदश एकविꣳशेति त्रिकृतः पथ्यायां विवदत उद्गाती पथ्या मन्य इति गौतमः सा हि पथ्या स्थाने तिष्ठतीति प्रक्लिष्टिनी मिति धानञ्जय्यः सा हि विष्टुती न्यायतरेण कृता भव-तीत्यथाप्यवर्षुकस्तु पर्जन्यो भवतीत्युदित्यां निन्दा मवादीदित्यथ यत्र सꣳह्रियमाणाः पर्याया यथास्थानं भवन्ति ता मविदुष्टपर्यायेत्याचक्षते न्यायथास्थानं तां विदुष्टपर्यायेत्यथ यत्र समा स्तोत्रता पर्यायाणां भवन्ति ताꣳ समास मित्याचक्षते ऽथ यत्र प्रत्यवरो-हिणस्तत्प्रत्यान्याय इत्याचक्षते प्रत्यवरूढपर्यायेति

चास्य यत्र सꣳस्तुतस्य स्तोमस्य प्रथमा भूयिष्ठभाग् भवति तां ब्रह्मायतनीयेत्याचक्षतेऽथ यत्र मध्यमा तां क्षत्रायतनीयेति च गर्भिणीति चाथ यत्रोत्तमा तां विडायतनीयेति स खलु पर्यायान्त्सꣳहरन् मस्त्वान्यायं विडायतनीयाभिः प्रथमां पर्याय विशेष मिति वर्ज्जयन्त्समान्त्समा मेव चिकीर्षेदिति ॥ १० ॥

अथातो विधिशेषान् व्याख्यास्यामो नोपवसथ्ये ऽहनि न समामनेरन्वागाथायिनी प्रयुज्येतेत्यथैताः कुशा उपकल्पयत औदुम्बरीर्वा पालाशीर्वा यो वान्यो यज्ञियो वृक्षः प्रादेशमात्रीः कुशपृष्टास्त्वक्ताः सगा मज्जतो ऽङ्गुष्ठपर्वपृथुमात्रीः प्रज्ञातायाः कारयित्वा गन्धैः प्रलिप्य सर्पिषा सत्रेषु खादिरी दीर्घसत्रेषु वेष्टुतेन वसनेन परिवेष्टौदुम्बरी मध्याधिक्रमसंयेत् क्षौमꣳ शाणं कार्पास मिति वसनविकल्पा औदुम्बरी मुपृत्य न विसृजेदाच्छदिषोऽध्यूहनाच्छ्रीभूत एनाः मूलाग्रैः कुशैर्वेष्टयित्वैवंजातीयेनैवोद्दशेन वसनेन प्रदक्षिणं परिवेष्टा स्पृष्टो ऽनपसृत उद्गायेदिति गौतमो धिष्णो ऽयं भवति न धिष्ण्यम् मासादयेदिति धृष्ट मपश्ययेतेति धानञ्जय्यो पशुयशार्थेयं भवतीति साऽप्य औदुम्बरी मङ्गलायैवोभुक्त

उदकसेवी बहुपलाशो नातीवाफलो भवतीति प्राक्समासं वोदक्समासं वोपरिदश माध्यमीयं प्रस्तोता विष्टुतीर्विदध्यादुदग्राभिः प्रथमं विष्टावे प्राक्संस्थं प्रत्यक्संस्थमित्येके पश्चात्प्रथमस्य त्रिष्टावस्य प्राग्ग्राभिरुदक्संस्थं द्वितीयं प्रत्यगग्राभिरित्येके पश्चाद्वास्य मध्यमस्य त्रिष्टावस्योदगग्राभिः प्रत्यक्संस्थं तृतीय मेतयावृताः पर्यायान्विदध्यादृच्छिष्टार्थं प्रथम मनुपूर्व मुदीचः संहृतान् विष्टावपर्यायान् विदध्यादितरैश्छिन्नतरैणा शिरसि कुशानु विधीयेरन्नित्येके पराङ्मुखादावर्त्यद्भावा तु विधीयेरन्नेतेन सुप्त्विक्ता स्त्रिवृत उद्गात्या विधाने विप्रतिपद्यते यथैकः पर्याय इत्येके तृचभागा स्थानेषु पर्यायाणां पर्यायाः स्युरित्येक एतेनैकजातीया व्याख्याना व्याख्याताः ॥११॥

अथातः सामान्तानां चत्वारो भागाः समाख्याः स्वरो निधन मिडा वाक्यानि स्वराण्याग्नेयानि तानि गायत्रतया वायव्यानि वा यानि निधनवन्त्यैन्द्राणि तानि त्रैष्टुभतया यान्यैडानि वैश्वदेवानि तानि जागततया यानि वाङ्निधनानि प्राजापत्यानि तान्यानुष्टुभतया ऽव खल्वस्य सर्वश्छन्दसो निधनार्थेय मृक्तं भवन्त्यथेमौ स्वरौ सन्तौ निध-

नेषु समाम्नायेते इकारोकारौ कस्य हेतोरिति यान्यन्यानि स्वराण्यसिद्धोपायानि तानि भवन्त्यच एव तेषां मध्यं व्यवस्वरणं भवत्ययमौ सिद्धोपायौ भवतो वागुपायावित्यथापि निधनस्थानेषु युज्येते स्वरैश्च सनिए तत्तो निधनवादस्तैनयोर्भवति तं वैराजस्य निधने नाहᳲहन्नित्यथाप्येनौ वाक्यविलोपके वाहुरिहेति वेद मिति वा सदो विलुप्त ईकार ऊर्द्ध मिति वा विपरीतिना सदो विलुप्त ऊकारस्ताव- प्यनुनासिक्यौ भवते वाक्यविलोपत्वादेव तद्यच्च च्चैते सामान्ता भवन्ति स्वरो निधन मिडेति तदे- तान् प्रकृष्टा इत्याचक्षते ऽथ यत्र समानसामान्ते सन्निपततस्तज्जरमीत्याचक्षते समानपृष्ठे वा अहनी समानभक्तिनी च खलु नानात्वप्रक्रान्तेष्वेवाजामि भवत्यथ यत्र समान मभ्यस्यते साम वाऽहर्वा जाम्येव तद्भवति सामान्यान्नसामान्नैर्नानत्वः संयुजामि भवति ॥ १२ ॥

अथैतान्यन्तरेण व्यवयन्त्यजामिकरणानि भवन्ति सोमो वषट्कारः भक्ष मवयवो ऽथ यत्रान्तरेण सामानि गीयथातिच्छन्दसं परिमाद इति तत्राथ यत्रैक सार्वत्र्निस्थानं नना सामानि समवयन्ति यथा

व्रत ऐकसाम्न स्थान मिति तत्राचाथ यत्र समासान्ता
न्यत्यन्ते यथा विश्वजिति तत्त्राथ यत्र समान-
सामान्ते सन्निपतन्तो मध्ये निधनेन तत्र यत्रो मध्ये
निधनेनान्नैः पृथगिति तत्तत्र यत्रो न विद्यतेऽर्थः
सन्निपतति त मर्थो ऽजामिकरण इति तत्तत्र सर्वत्र
रथन्तरसन्निपाते जामि भवति तथा बृहत्संन्निपाते
तचैतान्यजामिकरणानि सौभरं प्लवत्यो बृहदि-
त्येषोऽभिव्याहारो वार्कजम्भ बृहन्निधनानीत्युक्तं
रथन्तरसन्निपातेषु कण्वरथन्तरं मभि भवति रथ-
न्तरणिधनानीति बृहत्संन्निपातेष्वेतावता खलु
जामि कृन्य समन्वीचेत नदस्तिखित्साम्नश्छन्दो
देवता नास्तीति नास्तीति धानञ्जय्यः किं स्वरस्य
छन्दो भविष्यति का देवता मितानुरो भवतीत्याश्व-
तरगौतमौ यच्छन्दस्यायां मृचि गीयते तदस्य छन्दो
यद्दैवत्यायां साम्न देवता तद्विजानीमो यत्स्वयोन्यः
स्वयोनिनापचिततरं भवत्यथाप्यैन्द्रेन्ध्य. ऋत ऐन्द्रं
सामेति द्रजेति ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे प्रथमः प्रपाठकः ॥

॥ अथ द्वितीयः प्रपाठकः ॥

ऋषिकृतस्यूहा३ अनृषिकृत इति वै खल्वाहु-र्यद्यविरता एकोहनाम्नो एव मार्षेयो भवत्यथाप्यूह इत्येव माचक्षते कर्त्तव्य इतीवेतद्भवत्यथापि याज्ञिका विप्रतिपद्यन्ते यज्ञार्थः खलु पुनरूहो भवत्यथापि वृत्तियोनिरिति गायन्ति किमु खलु स्मृती वृत्यां किं योन्यां भविष्यतीत्यथापि नात्यन्तं गायन्ति तत्र यदगीतं कर्त्तव्य मित्येवापन्ना भवत्यथापन्नसंहृतस्य संहिता भवेत्त्रो गायन्ति तदेतत्स्मृती नोपपद्येत इत्यृषिकृत इत्यपरं कथ मेव बहूनार्षं यज्ञे क्रियेता ऽथापि बृहदुत्तरयोर्नाभिपश्यामीति भरद्वाज स्तपो ऽतप्यत रथन्तर मुत्तरयोरिति वसिष्ठो विद्यमानस्यैवोहस्याभिवादो भवत्यनेनैव वासिष्ठभरद्वाज मित्याचक्षते ऽथाप्याचार्यस्मृतीनां वक्ता न मतिशङ्कमानः सर्वत्रैवातिशङ्कता ऽथापि योनिप्रतिषेधादस्मृत मन्येतापि नूनं समर्च मेवाप यज्ञ मस्मृतं मन्येत यज्ञे ह्यपि विप्रतिषिद्धा भवन्तीति यद्येतदद्यापि रता एवोहनादित्यगीतोहास्ते भवन्त्यप्रमाणा मु खल्वनधीयानो यद्येतदूह इत्येन माचक्षत इति भवन्त्ययथार्थं

नामधेयानि यद्येतद्याज्ञिका विप्रतिपद्यन्त इत्याचार्यकल्पे याज्ञिका विप्रतिपद्यन्ते स एव विस्मृतः स्याद् ब्राह्मणविप्रतिपत्त्या च यज्ञमथ स्मृतं मन्येत यद्येतद्वृत्तियोनिरिति गायत्रीति छन्दस्याधीच्छका वृत्तियोनी कल्पन्ते भवन्ति वापेत्य वृत्तियोनिभ्यामाचार्यप्रोतानि यथा पार्थ-लौश-शार्ङ्गाणि यद्येतन्नात्यन्तं गायन्तीति कल्पा अप्रानत्यन्ता भवन्ति यथावाप्रवानेकाहः श्रीलोमा उत्तरा तरतिरनुब्राह्मणिनामिति यद्येतदन्यसंहितस्य संहिता मवेत्य गायन्तीति छन्दस्यपि वृत्तिज्ञोऽन्यसंहितस्य संहिता मवेत्य गायेन्न तावता छन्दो ऽस्मृतं मन्येताथापि य उपवादादस्मृतं मन्येतापि नूनं संमर्ज्ञा मेवापिनं त्रयीविद्या मस्मृतां मन्येत तां ह्येक उपवदन्तीति ॥ १ ॥

एकर्चदृष्टीनि खितं सामानी३ तृचदृष्टीनीत्येकर्चदृष्टीनीति शाण्डिल्यायनस्त्विदानीमश्छान्दसेनाध्यायेनैकर्चान् भूयिष्ठांश्छन्दास्वधीमहे ऽथापि नो यज्ञ उपदृष्टिः प्राह यदन्नं धृष्णोत्येकर्चान्कर्तु मथाप्येकर्चैः स्तोमान्त्समिमत एकर्चान् ह वय मधीमहे नाध्वर्यवश्चचा उत्तरे अभिजानन्तीति तृच मदृष्टीनीति

धानस्तथ्यं तद्विजानीमश्छान्दसिनैवाध्यायेनैकर्चानधी-
त्य तृच मुत्तम मधीमहे निदर्शनार्थो वै स भवत्येव
मेवातः प्रागित्यथापि नायन्न एवोऽपदृष्टिः प्रश्नो काम
एवार्धेकर्चान् कर्तीत्यथापि न ऋचः पूर्वा स्तोत्रियाणि
प्राहुर्द्वितीयायां चाथ तृतीयायां चर्चि लक्षणं
भवति यद्यार्षेयं तत्साम भवतीति यथाकूपार मैषिर-
मग्नीत्कन्मन मित्यथापि छिन्न मिव वा एतद्द्वे-
कर्चा इति ब्राह्मणवादः परिचष्टे ऽथापि जनुषै-
कर्चौ नामाधीमहे तृचदृष्टित्वादेवाथाप्यधुनैव दैव-
त्वादे यस्तृचापन्नं छन्दोऽनुजगावु ।वचदृष्टीनीति शा-
ण्डिल्योऽप्यन्तर्षिर्यथादैवतान्यपेरकार्णे यथासामीत्ये-
तान्यपेरकर्चां यथाभूयिष्ठान्यपि द्वयोर्यथातीषङ्ग
अपि तिसृषु यैथा सन्तनीत्यपि चतसृषु यथेलान्द
मपि भूयसीषु यथा पुरुषव्रतं कश्यपव्रत मादित्यव्रत
मित्यपि दैवतान्येके सामसूक्तानीत्याचक्षत इत्या-
चक्षत इति ॥ २ ॥

अथ इमानि सामानीति प्रदिशन्ति यान्यपुर-
स्तात्स्तोभानि पदनिधनानि लघुगीतीनि तानि
राथन्तराणि यानि पुरस्तात्स्तोभानि बहिर्णिधनानि
गुरुगीतीनि (उपान्तपञ्चम्यां पञ्चिपञ्चकं गच्छन्तं तानि

राथन्तराणि यानि गुरुगीतीनि बार्हतानीति *)
(तानि बार्हतानि अथान्यतरतो राथन्तराणि चान्यतरतो बार्हतानि चाप्युरस्तात्स्तोभानि च बहिर्णिधनानि च पुरस्तात्स्तोभानि च पदनिधनान्यथोभयतो बार्हतानि च पुरस्तात्स्तोभानि च पदनिधनानि गुरुगीतीनि पुरस्तात्स्तोभानि बहिर्णिधनानि लघुगीतीन्येतानि विजिज्ञासितेति शाण्डिल्यायनो यानि लघुगीतीनि राथन्तराणि यानि गुरुगीतीनि बार्हतान्यपि यान्युदात्तगीतीनि तानि राथन्तराणि यान्यनुदात्तगीतीनि तानि बार्हतानीति †)
कल्पेनैव यज्ञकामा व्याख्याता यथैतत् स्वर्गकामो यज्ञः पशुकामो यज्ञः प्रजापतिकामो यज्ञोऽभिचरणीय इत्यप्याहुरुद्गार्थ एव खल्वयं भवति खल्वर्थे स्वेभ्योऽन्येभ्यो अन्ववयन्तीत्याप्तकामास्त्विहैवा स्युरन्ता३ अनाप्तकामा इत्यनाप्तकामा इति वै खल्वाहुः को ह्याप्तकामस्य स्तुत्या कः प्रत्यर्थी भविष्यतीत्यथाप्याहुः अप्रकृतं ह्याप्तकामा एव भवन्ति तमस्यवादेन जानीमो यस्मै देवाः कामयन्ते तस्मै समर्धयन्ति कुतोऽनाप्तकामाः समर्धयिष्यन्नित्यथापीहैव पश्याम आप्तका-

* एतावानंशः ख पुस्तके नास्ति । † एतावानंशः ख पुस्तके नास्ति ।

मतराणा ममग्नकामैरीप्सां यथैतद्राज्ञा मित्यथापरत्वंक मवदायाह विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहेति कुतो ऽनाग्नकामान् प्रति भविष्यदित्यथापराहुर्द्विस्थाना देवा भवन्ति न्यून मन्यत् स्थानं सम्पूर्ण मन्यद्यदु ह न्यूनं तद्दितः प्रत्तैः प्रति विभवन्ति यदु सम्पूर्णं तत्स्वाशिषः समर्द्धयन्तीति ॥ ०३ ॥

कथ नु खल्वङ्गकामा इति विद्यन्त इत्येके श्रुतिप्रमाणा अङ्गे श्रूयमाणां कथं क्रतौ प्रतीयामेत्यथापि योऽङ्गकामं क्रतुं कामयेतापि नूनं सोऽङ्गे दृष्टे सर्व मेवापि क्रतुं दृष्टं मन्येताथापि पृष्ठहोमं सर्वेषां स्तोत्राणां मन्येतेति क्रतुकाम इत्यपरं क्रतुः खल्वधिक्रतोऽङ्गैश्च कामैश्च भवत्यथापि न आर्षेयकल्पो दर्शयति यज्जातीया प्रतिपद्भवति तज्जातीयानि द्रव्याणि कल्पयति यथा ज्योमामयाविनो वर्षकामस्य जग्ध्या माविधित्समानस्येत्यथापि योऽङ्गकामं मन्येतापि ननं स तदेवाङ्गं कृत्वा विरमेत्तस्मिन् हि स कामो भवतीति यदेतदङ्गदोषात् क्रतुदोष इति विषये खलु दोषो भवति न तथाकामो यदेतत्पृष्ठहोमं सर्वेषां स्तोत्राणां मन्येतेति भवन्ति वा अङ्गधर्मा यथा युग्यस्य घासदान मचस्योपाञ्जन

मिति सम्भूय तु खल्वर्थान्साधयन्तीति कथ मु ब्रह्म-
साम्नि कामागान मिति यथाकामी कामाना
मित्येक आहुरंशादेशे कि मन्यद्याथाकाम्यात्प्रतो-
यामीथाथि रद्देवंब्राह्मणो दर्शयति याथाकामी
कामाना मिति क्रतुकाम इत्यपर मेषोऽधिकृतोऽथापि
यः क्रतुकामेऽधिकृते सत्यन्यं काम मुत्पादयेदपि
नूनꣳ स पशुना तृतीयसवने चरन्तीत्यन्यंपशु मुत्पा-
दयेदो मिति सति समायादपेयादाद्वा वै त मेव
प्रतीयाद्यः प्रतिसवने सदृशं व्याहन्यादेतदनादेश
इत्यादेशजातिरेषा भवति तदाऽदेधिकारो यदेतद्ब्र-
ह्मब्राह्मणो दर्शयतीत्ति सर्वाभिप्राय एतदुपपद्यते
कथ मु खल्वाशीः समृद्धिरुपसरणानीति सर्वस्तोत्रे-
ष्वित्येक आहु स्तोत्रशब्देन च न हि स्तावयत्यपि चाह
निर्देशे किमर्थो ऽवयवं प्रतीयादिति ब्रह्मसाम्नीत्यपरं
ब्रह्मसाम ह्याशीर्द्वान मित्यथापि य स्तोत्रशब्दानां-
स्तोत्रे प्रतीयादाशीःशब्दादपि स नाब्रह्मसाम्नि
प्रत्येतु मर्हतीति ॥ ४ ॥

अथातो यज्ञस्थानान्यपि च सन्धियज्ञा इत्या-
चक्षते ऽहोरात्राभोज्याग्निहोत्रꣳ सायमाहुत्या
रात्रि मभियजते सा यत्र क्व च पुरोदयाज्जुहुयेत स्वे

स्थाने जुहोमीत्ति विद्यात्मातराऊत्याहः सा यत्र क्व च पुरास्तमयाहूयेत स्वे स्थाने जुहोतीति विद्यात् ते तु यदादौ निदधाति प्राप्तस्य होमकालोऽपि चैनं कृत्स्ने अहोरात्रे अभीष्टे भवत इति पूर्वपक्षापरपक्षाभीज्या* दर्शपौर्णमासौ पौर्णमासेन हविषाऽपरपक्ष मभियजति स यत्र क्व च पुरा ऽऽमावास्या यजेत स्वे स्थाने यजत इति विद्यादामावास्येन पूर्वपक्षꣳ स यत्र क्व च पुरा °पौर्णमास्या यजेत स्वे स्थाने यजत इति विद्यात्तौ तु यदादौ निदधाति प्राप्तस्य यज्ञकालोऽपि † वैधं कृत्स्नौ पक्षावभीष्टौ भवत इत्युक्ताभीष्टा ‡ चातुर्मास्यान्योषधिभक्ताभीज्याग्रयणेष्टी उदगयन-दक्षिणायनयोः पशुसमस्तस्य संवत्सरस्याभीज्या सुत्येति तत्खल्वेतत्सकृत्प्रयुक्त माहिताग्नेः कुशलेन यदग्निहोत्रं दर्शपूर्णमासौ चातुर्मास्यान्याग्रयणेष्टी (पशु सोम इति वै ‡°) सर्वं य देवं न करोति ग्लायदिज्याꣳ स्यादित्यननुभूतिजꣳ स्यादिति सिद्धिदर्शी वा स्यान्मूलिपुरोडाशेनाप्नोत्याज्येन च पयसा च प्राणीत्यथाप्याहुरादित्यस्य वावं खलु चन्द्रमाग्नि-

* क-पुस्तकेऽत्र पूर्वत्रापरत्र च सर्वत्रैव "०भीष्टा"-इति पाठः।

† "होमकालोऽपि"-इति ख। ‡ नास्त्ययमंशः ख-पुस्तके।

स्येमानि पर्वाणि कुर्वाणौ ययोरियं मभीज्या भवती-त्यग्निहोत्रेणादित्यस्येज्या मभियजते दर्शपूर्णमासा-भ्यां चन्द्रमसस्तदग्निहोत्रꣳ सायमाहुत्या प्रयुज्यते प्रातराहुत्याभितिष्ठते सोऽपि नाहुत्वा प्रातराहुति मन्यं यज्ञ मुपक्रमते कथं पूर्वस्मिन्ननिष्ठितेऽन्य मुप-क्रामेतेति पौर्णमासेन हविषा दर्शपौर्णमासौ प्रयु-ज्येते आमावास्येन निस्तिष्ठेते सोऽपि नानिष्ट्वामा-वास्येन हविषान्यं यज्ञ मुपक्रमते कथं पूर्वस्मिन्ननि-ष्ठितेऽन्य मुपक्रामेतेति ॥ ५ ॥

तदपरपक्षे प्रायणं परिजिहीर्षितं भवति रात्रौ वा यज्ञविलोपो विसꣳस्थितेऽपि च नो हि तमस एव स्म इयादिति तच्चेदपरपक्षे प्रायणꣳ शङ्केत यावत्यो ऽपरपक्षस्यातिशिष्टा रात्रयः स्युस्तासाꣳ सायं प्रात-राहुतीः प्रतिसङ्ख्याय हुत्वा प्रत्याहुत्या ऽऽमावास्येन हविषेष्ट्वा समापयेयुरेव मयज्ञविलोप इति पूर्वपक्षे चेद्रात्रौ प्रातराहुति मेव पुरस्तादाहवनीयꣳ हरेयुः पश्चाद्गार्हपत्यं दक्षिणतो दक्षिणाग्निं मध्ये शरीरं तं दक्षिणाशिरसं चितस्याहितं यज्ञपात्रैः कल्पये-दध्वर्युः शिरसि कपालानि युञ्ज्यात्समन्तधानं च चमसं ललाटे प्राशित्रहरणं नासिकयोः स्रुचौ कर्ण-

योर्वाद्ये ह्रिरश्मा मंवधांयानुस्तरणिक्वा गोवंपुया मुखं प्रच्छाद्य तत्राग्निहोत्रहवणीं तिरश्चीं दक्षिणे पाणौ जुहूᳫं सव्य उपभृतं पार्श्वयोः स्फ्यमोपवेषौ तथा वक्षौ ध्रुवाश्व मुरसिं ध्रुवा मुदरं पात्री मुपस्थे कृष्णाजिन मन्तरेणं सक्थिनी शम्या दृषदुपले यच्च नादेच्यामोः दक्षिणस्योपस्य दक्षिणत उलूखल मनुसक्थि मुसलं पादयोः शकटशूर्पे सर्वाण्युत्तानान्यासेचनवन्ति पृषदाज्येन पूरयित्वाथैनं यथास्थानं युगपदग्निभिरुपस्जेरसार्वस्थानिकं परिमाणᳫं स एष यज्ञायुधी यजमानः स्वर्गं लोक मेतीति ब्राह्मणं भवत्याङ्कविं जुहोति पुत्रो भ्रातायो वान्यो यज्ञियो ब्राह्मणस्त्वस्मात्त्व मधिजातो ऽसि त्वदयं जायतं पुनरसौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहेति शान्तिर्वामि देव्यᳫं शान्तिर्वामदेव्यम् ॥ ६ ॥

एकहिङ्कारं बहिष्पवमानᳫं साम्नस्सेकत्वाच्छन्दसस्सेत्याचार्याः साम्ना मनु नानात्व मुत्तरयोः पवमानयोः पृथग्घिङ्कारा भवन्ति पर्यायाणा मनु नानात्व मावर्त्तिषु सन्धौ * विप्रतिपद्यन्त एकहिङ्कार इत्येके यथा बहिष्पवमानं विराचार्या हिं

* "माहभिसन्धौ"–इति क पाठः

कुर्वन्ति देवतानामनु नानात्वं विश्वजितो वा अपि वाद्देवतं बहिष्पवमान मथात्र सङ्कृद्धिङ्करोति सङ्कृद्धिं-कृतोत्पादत्वाद् बहिष्पवमानस्येत्याचार्या अथ यज्ञा-यज्ञीयानुरूपे कथं हिङ्कार इति यथोत्तरयोः पव-मानयोरित्येके ऽस्ति हि सामनानात्वं यथा वा विश्व-जिति नानादेवते सति सकृद्धिङ्करोति सकृद्धिङ्कृतो-त्पादत्वाद्बहिष्पवमानस्य तथा वा स्यादित्यथ योनौ यज्ञं लब्धानस्य कथन्तरे तस्या रथन्तरवर्णा स्याता मित्युभे यथास्थानं स्यातामिति बहिष्पवमाने चोत्पन्ने भवतो न चापि निवर्त्तेयातां यथापि यथा गायत्रं यज्ञायज्ञीयधर्मान् प्रतिपद्येत एव अपि यज्ञा-यज्ञीयं गायत्रधर्मान् प्रतिपद्येत गायत्रस्य बहि-ष्पवमान एष धर्मो भवतीत्यपरं वान्यत्र गायत्रान्न चान्यत्र बहिष्पवमानादिति ॥ ७ ॥

गायत्रस्य काम्याः सामान्ता यावन्निगदं स्युरि-ति के स्वरस्येमे प्रत्याम्नाया भवन्ति तं च किमर्थोऽवयवं प्रतीयादित्यथाप्येव मव्याहृतं गायत्रं भवत्यथापि याथाकाम्यस्याविप्रयोगस्तत्कुशल मथाप्येष प्रयोगाणां धर्मो येन प्रक्रमस्तेन समाप्तिरिति बहिष्पवमान इत्यपर मेतद्गायत्रस्य हिङ्कारस्थानं मथापेतद्गुरां

सामान्तां नातियन्त्यथापेरव मजामि भवत्यथापेरवं यथाभूयिष्ठं भवतीति प्रथमाया मिति वार्षगण्य एतद्बहिष्पवमानस्याशीर्द्दान मन्त्रं हिं काम्याः प्रतिष्टो भवन्तीति रथन्तरवर्णाया मित्यपर मेषा च विकृततमापि च पथ्यप्रक्रमं पथ्यावसानं भविष्यतीति ब्रह्मण आज्य इत्यपरं ब्रह्मसाम स्याशीर्द्दान मित्युत्तरयोः पवमानयोरित्यपर मेतदेतेषाᳫं सामान्तानां स्थान मथापेरवᳫं रोहो भवत्यपि वान्ताख्यानि कर्माणीति यद्येतज्जामीत्यजामि वा कल्पयेतार्थोऽजामिकरण इति वापि तितिचेतानृच्येके गायच्च गायन्ति कस्य हेतोरिति स्वरायैतत्स्थानं कुर्वते स न इत्थं केवलः स्वरो गीतो भविष्यतीति तथा प्रच्छिप्रस्तुत्यानृचि गायन्तः प्रतिहारस्य चानुत्साद मनुप्रायाच्च निधनस्य चानिधनं स्वरित्वा निधन मृत्सीदेदित्याचार्याः ॥ ८ ॥

अथ बृहद्रथन्तरयोर्वदति तयोः समानं निधन मासीत्तस्मिन्नातिष्ठेता मिति किन्निधन मित्यहरिति * कौत्सो ऽकार मेवान्ये सकारोपसृष्टं सकार मेवाह मनयोः समानं निधनं मन्य इति धानञ्जय्यः

* 'मति हरिति"-इति ख ।

स स्तुभयन्न दृश्यत इति निधनब्राह्मणम् । मेधाइ मिदं मन्य इति वार्षगण्यो द्वे खल्विमे पृष्ठे भवत एकं पृष्ठस्थानं तस्मिन्नस्यारभूथा महं पूर्वताया इत्यथैतेषु पुरस्ताज्जपेषु वा इत्येतदुदस्येदित्येक आहुरेतानि मनसान्वोच्योद्गायेदिति हि भवतीत्यन्यदिदं तेभ्यो भवतीति यथाधीत मित्याचार्या न चोदासो विज्ञायते ऽपिवार्थः स्वाङ्गयंक मथापि सशंस्ये लोपो लोपान्यायतर इति कथं पवमानगतयोरिति कर्त्तव्या इत्येके सामसंयुक्ता हि भवन्त्यकर्त्तव्या इत्यपरं स्थानसंयुक्ता हि भवन्त्यथापि पवमानसामनी प्रधानभूते भवत इत्यथापि यद्यु हैतात्पुरस्तात्स्तोत्रादकरिष्यद् द्वाविताबृन्यैः सामभिरभविष्यन् यद् द्वानन्तरान्स्तोत्रव्यवायो ऽभविष्यदेतेन वामदेव्ययज्ञायज्ञीये व्याख्याते बृहतः स्तोत्रोत्तमायां ब्राह्मणोक्तानां रोहाणा मुत्तमं न रोहेदित्याचार्या अप्रथमायैवं स्याद् बृहतो रोहा बृणी महा मदायिषु वान्तौ पूर्वौ वृद्धे निधनोपाये च द्वितीय मक्षरं वर्द्धयेत्स तृतीयं तदुपरिष्टात्स्तोत्रस्य प्रत्यवरोहेदेवं हि स युवान मृत्विज मनूचान मेत माहुर्यद्वैतेन मप्रत्यवरूढं परावधीदिति ॥ ८ ॥

अथ यज्ञायज्ञीयस्योत्तरयोर्द्यचयोः प्रमीति यथा

बृहद्रथन्तरयोस्तदपि प्रश्नब्राह्मणं भवति तानि ह वा एतानि द्वादशाक्षरप्रस्तावानि ककुबुत्तराणि सामानि बृहद्रथन्तरे यज्ञायज्ञीयं चेत्यथ खल्वाह यदग्निष्टोमयाज्यनृतं माह तदन्वस्य यज्ञः सवत्य-क्षरेणान्ततः प्रतिष्ठाप्य मिति किं मनृतं किं मक्षर मिति देवत्येतदक्षरं वकारादि राकारो गकारान्त इत्येक आहुस्तस्य गकारलोपं ब्राह्मणं क्षिपतीति तदपि त मुपेयुरेवं कृत्स्नेनाक्षरेण यज्ञस्य छिद्र मपि दधातीत्यार्चिक मेवैतदक्षर मित्यपर मेतस्मिन्हा-ऽक्षरशब्दात्प्रतियन्त्यष्टाक्षरेण प्रथमाया ऋचः प्रस्तौ-ति द्वाक्षरेणोत्तरयोश्चतुरक्षरेण बृहतः प्रतिहर-तीति न स्तोभिकैः सहोपपद्यते तस्माद्यदेवान्त्य मक्षरं तन्निधन मुपेयुर्यथाधीत मित्याचार्याः स्वर-तन्त्वदण्यक्षराणि भवन्ति स्वरान्ततां मेवाक्षरस्यैतद् ब्राह्मण मेव मवच्य दित्यथापि बह्वलैषां छन्दसी वृत्तिर्बाह्निधनानि चैनान्याचक्षते वागुपायामीति च यदेतदार्चिक मक्षर मिति यथाधिकार मेत-द्भवति स्तौभिकस्येहाधिकारो विज्ञायते ऽथापि संशये प्रकृतिसविध मेव प्रत्येतव्य मिति प्रत्येतव्य मिति ॥ १० ॥

अथ द्रव्यसमुद्देशो राथन्तराणि रथन्तरपृष्ठेऽभिरूपाणि बार्हतानि बृहत्पृष्ठेषूभयविधावुभयसाम्नि प्रवदितानि रथन्तरपृष्ठ ऊर्ध्वेडानि बृहत्पृष्ठेऽथ यत्र रथन्तरपृष्ठे बार्हतानि क्रियेरन् बृहद्वैरूपया तानि विद्यादेव मेव बृहत्पृष्ठेन राथन्तराणि स्वयोनीनि सर्वत्राभिरूपतराण्यस्वयोनिभ्यः सामन्यासु ऋचाम सामन्याभ्यश्छान्दसी प्रथमाः सामन्या इत्याचक्षतेऽथ या यज्ञप्रवादाः मन्त्रप्रवादाः क्रतुप्रवादाः सोमप्रवादाः सर्वत्र ता अभिरूपाः शुक्रवत्योऽप्रवादाः पूर्वयोः पवमानयोर्होत्रप्रवादं हविष्प्रवादं समिद्वद्भीतुराज्यं हूतवन्ति पीतवन्ति तृप्तवन्त्युत्तराणि मरुत्वत्यो द्युप्रवादा ऋतवत्यो माध्यन्दिनीयाः परिवत्यः कोशवत्यो निषसवत्योमाध्यन्दिनीया गायत्र्यां वातस्त्रिष्टुभि वा मरुत्वच्चिकीर्षितं भवत्यथ खल्वाहु र्यानि सवनानां छिद्राणि तानि तेनापि धीयन्त इति कतमानि छिद्राणीति पवमाना यदेवं तास्तुतयास्तानि छिद्राणीत्यथाप्यन्तरेण पवमानांश्चावर्त्तीनि च हविर्भिः प्रचरन्ति तानि छिद्राणीति वामदेव्यं मैत्रावरुणसाम सर्वत्राभिरूपं तदपचारे तल्लिङ्गीयाश्चिकीर्षेदथैतानि तार्त्तीयसवनिकानि रूपाणि स्वादुमत्यो

मधुमत्यो मध्वस्वत्यो विशुवत्यश्विवन्नत्यः सूर्यवत्यो दक्षिणावद् . योनिदूतवच्च वृद्धवच्चोकथेष्वथ नार्मेध-स्तोत्रीये वदति ककुप् प्रथमा योषिणाथ पुर उष्णि-गनुष्टुबिति ककुबेव प्रथमोष्णिग्द्वितीया पुरउष्णिक् तृती . दाशतयेनाध्यायेन तां बह्वृचा अधीयते युञ्जन्ति हरी इषिरस्य गाथयोरौ रथ उरुयुगे इन्द्रवाहा वचो युजेति तत्र वयं चत्वार्यक्षराण्युपाहराम: स्वर्विदेति सानुष्टुब् भवत्युपरिष्टाज्ज्योतिः ॥ ११ ॥

कथ नु षोडशी ज्योतिष्टोम इत्यकर्त्तव्य इति गौतिवृत्तिरन्तरितः ब्राह्मणसंमाम्नायेनेति कर्त्तव्य इति गौतमः षोडशिनः स्तोत्रे दयेति हि भवतीत्य-थापि न आर्षेयकल्पो दर्शयति द्वादशाहस्य षोडशि-मन्तावंतिरात्रावित्यथापि मन्त्रवर्णो भवति त्रीणि ज्योतींष्यपि सचते स षोडशीति निरूपेतो द्वाद-शाहो भवतीति वैतद्भवति संख्या मप्यस्यैतां विद्यमानां मन्य इति गौतम एवं च रहस्यब्राह्मणे दर्शयत्यथ तेन षोडशिसंस्थेन यजेतेति नाहास्यैषा संस्था विद्यत इति शाण्डिल्यो ऽतिरात्रे तु कृताकृतो-भवत्येव मित्राध्वर्युब्राह्मणं भवति नोक्थ्यो ग्राह्यो *

* "नोपग्राह्यो"—इति क ।

ऽतिरात्रो ग्राह्य इति सन्धी इमौ भवत इति धान-ञ्जय्य उदयसन्धिरसावस्तमयसन्धिरपोतस्माद्यः कश्चा-तिरात्रः षोडशिमानेव स कुशलेनेति तस्यैता ऋचः पञ्चविꣳशत्यक्षराः पञ्चपदाः पञ्चाक्षरपादा नवो-पसर्गाक्षराश्चादितस्त्रयाणां पादानां त्रीणि त्रीण्यु-पसर्गाक्षराणि प्रादान्तेषु भवन्ति ते ऽष्टाक्षराः सम्पद्यन्ते पञ्चाक्षरावुत्तरौ दशाक्षरावेकस्तास्चतु-स्त्रिꣳश दक्षराः सम्पद्यन्ते न स्या उपसृष्टाः कनो विद्या मे तीर्थꣳ ह्येव वय मधीमहे तथा बह्वृचा इति ब्राह्मणेनेत्याहुस्चतुस्त्रिꣳशदक्षराः सꣳस्तुतो भवती-त्यनुपसृष्टः कनीयानितीवैतद्भवत्यथाप्युप्रोयमाणेषू-सर्गाक्षरेषु नेवार्थो हीयते न वृत्तिदुष्यत्यथापि शश्-देना अनुपसृष्टा आथर्वणिका अधीयतेऽथापि जिह्वा-रिताना मुपसर्गाक्षराणां वदत्यꣳ वा एता एकपद्या स्त्र्यक्षरा विष्णोश्छन्दो भुरिजः शक्वर्य इति चाक्षरा ह्यपि भुरिजो भवन्तीति तस्यैतद्गौरिवीतं गायत्री सामाभ्यासानुष्टुभꣳ राचा समानभागः समान-भणो भवतीति स यद्गौरिवीत्य इमा ऋचो ऽस्वयोनिं कुर्वत ऋषिः स्वयोनिर्भविष्यन्तीत्येतेन सौभरना-मधे व्याख्याते रेवतीषु च वारवन्तीयम् ॥ १२ ॥

ज्योतिष्टोमोत्पाद मेव षोडशिनं ब्रुवते तच्च चास्य ब्राह्मण मधीयते ऽथापि कथ मेवं कृत्स्नं कर्मान्त मन्तारयिष्यदिति चतुर्थोत्पाद वयं तच्च चास्य ब्राह्मण मधीमहे ऽथाप्याहैकविंशायतनो वा एष यत्षोडशीति तदेकविंश मह्नर्भवत्यथा प्याह द्वाशन्तय्य ऋचो चातुरुत्तरं छन्दःक्रमे वा एवंविध मुत्पद्यते न प्रथमकृतावित्यङ्गो भवतीत् . रात्रेरित्यङ्गो भवतीत्याहुरहवर्जं चास्य हविर्भवत्यथापि नियुक्तधर्मा भवति निवर्त्याङ्क्लिप्तवांग्रहवान्यथाहरेवं रात्रेरित्यपरं रात्र्या समानभागः समानभक्तो भवतीति तौ खल्विमौ द्वौ सम्यौ भवतस्तयोरसौ नित्यः कृताकृतोऽयं कस्य हेतोरिति साह्न तेन रात्रिः पञ्चदशविधतां लभते.कृतं पञ्चदशविध मह्नरित्यथापि न त मुहृत्य पराक् स्तोत्रं रात्रावलप्स्यत कृतान्यचैन्द्राण्यथापि विद्यते तस्य कालस्य स्तुतिर्नास्य विद्यते कस्मात्तु तस्य न विद्यते पराङ्तस्यां वेलायां सादित्यो भवति नोपरां न स्तुतिर्विद्यत उदाहरन्ति त्वेव परां च स्तुतिं हिरण्यस्तूपे भवत्यस्यारेवः प्रति दोषं गृणान इत्यथ खल्वाहं शक्करीषु षोडशिना स्तुधीतेति तच्चैके महानाम्नीः प्रति-

यन्त्येताः शक्वर्यो भवन्तीत्येतास्वेव शक्वरीप्रवादो भव-तीत्यपर मेतास्वाधिकृता भवन्तीत्योङ्कारो विशेषः श्रुतः सर्वसामसु आदित्वेके स वाचा रथंन्तरेण निर्वर्त्तेत यथा त्र्यंस्त्रिᳪशं तृतीयसवन मित्यभि-परीत्य प्रत्यपकर्षस्तादृश मेतद्भवति समुच्चयो वा नानार्थत्वात्प्रस्तावशान्त्यर्थो हि वागुद्गीथादिशान्त्यर्थ ॐकारो वाक्पूर्वा स्यादेवं यथान्तरप्रत्यासत्तिरुत्तरा साजघन्यविधेराचाराच्च ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे द्वितीयः प्रपाठकः ॥

॥ अथ तृतीयः प्रपाठकः ॥

अथ का प्रथमा सᳪस्थेत्यग्निष्टोमो प्रथमा मन्य इति शाण्डिल्यः प्रथमाᳪ ह्यत्र स्थानं भवत्यथापि प्रथमं मधीमहेऽथाप्यग्निप्रमुखानि भूतानि भवन्ति परोव-रीयाᳪसंथाप्याह यज्ञमुखं मग्निष्टोम इत्यथाप्येतया सᳪस्थया चरत्यथाप्येषा समारब्धतमा भवतीत्यथापि नाग्निष्टोम मकृत्वापरे सᳪस्थे करोति न ह्यनु-

पादाय प्रथमा मुत्तरयोः सिद्धिरस्त्वनुपादाय, उत्तरे प्रथमां सिध्यतीत्यथाप्याह प्रजापतिर्वा एषा सᳲ-स्थानां यदग्निष्टोमस्तां यदकृत्वाथान्यां कुर्यात्प्रजापतिरस्य हिᳲसितः स्यादिति यावदादेश मुत्तरे सर्वत्राथाप्यूर्ध्वाना मेव सᳲस्थानां कृतानां वदति देवा वा अग्निष्टोम मभिजित्योक्थानि नाशक्नु-वन्नभिजेतुं देवा वा उक्थान्यभिजित्य रात्रिं नाशक्नु-वन्नभिजेतु मित्यथापि नैतद्देवताः प्राहू राका सिनी-वाली सरस्वती विष्णुरिति सौविष्टकृतं खल्वेतत् सोमस्य स्थानं यदाग्निमारुतं स योऽयं देवताः शᳲ-शिषस्ता अपातिरात्रे सती हैव प्र व्याहृत्य शᳲसती-त्युक्थं तां प्रथमां मन्य इति गौतम एवं प्राप्नाह-र्मासासमानि सवनान्यपुरोद्रियन्त आभिवच्छन्दाᳲस्यनु विधीयन्ते प्रस्थितग्राह्या ग्रहैश्च शस्त्रैश्चापाह मेत मेव मार्गूस्तिन मिव मन्ये यो ऽग्निष्टोमयाजीति ध्रुव मनु द्वादशस्तोत्रात्पूर्वं तत्प्रस्थितयाज्याभिर्वि-जानीम इति ॥ १॥

अतिरात्रीं प्रथमां मन्य इति धानञ्जय्यः कृत्स्नं पूर्वं कर्मापरोपान्दायाः इत्यथापि स मिमीत एषा वा अग्निष्टोमस्य सम्मा यद्वात्रिरेषा वा उक्थ्यस्य सम्मा

यद्रात्रिरिति कुतो दृष्टेन प्रमा स्यादित्यथापि वः स्तोमसमाम्नायः प्राहातिरात्रस्यैव स्तोमसमाम्नायो भवत्यथापि न उक्थ्यसमाम्नायः प्राहातिरात्रस्यैव प्रथमं मुक्थ्यानि समाम्नामोऽथापि न कर्मणो यज्ञ सन्धिं * प्राहुरुपरि सन्धिभवात् स्तोमविमोचन मधीमहे यन्नून मन्त्या प्रथमा संख्या भविष्यत्यान्तरं स्तोमविमोचनं समाम्नायदित्यथापि शश्वद् बह्वृचा अतिरात्री मेव प्रथमम मधीयते तासां काम्या का सर्वाभिप्रायेत्याग्निष्टोमौं चातिरात्रौं च ब्रुवते शौचिवृक्षाः सर्वाभिप्राये अनवधारितकामे भवत इत्येकस्मा अन्यो यज्ञः कामायाक्रियते सर्वेभ्यो ऽग्निष्टोम इति न काम मवधारयति ज्योतिष्टोमेनातिरात्रेणर्द्धिकामो यजेतेति नैव कामं मवधारयति पशुकाम उक्थेन स्तुवीतेति काम मवधारयति सोऽशिथिला परिसंस्थिता भवतीति सर्वाः सर्वाभिप्रायाः सर्वासु काम्यानि विद्यन्त इति शाण्डिल्यस्तथा गौतमधानञ्जय्यौ सर्वाभिप्रायः खल्वयं ज्योतिष्टोमः स सर्वाभिरेव संस्थाभिः सर्वाभिप्रायो भवतीति यद्वेतदवधारितकामेति पश्यामो वै वयं सर्वाभिप्रायेषु

* 'कर्मणी यज्ञषि''-इति ख।

काम मवधार्यमाणं यथोपवती ग्रामकामस्य प्रतिष्ठाकामस्य रथन्तरꣳ सन्निधास्यामीति॥ २ ॥

तस्य खल्वस्य ज्योतिष्टोमस्य षड् व्यञ्जनस्थानानि भवन्ति प्रतिपद् गायत्रं त्रिणिधनं विष्टुतिर्ब्रह्मसामोक्थ्यप्रगाथः सन्धिसामेति तेषां किं काम्यं किꣳ सर्वाभिप्राय मिति प्रतिपद्यात् खल्वस्य ज्योतिष्टोमस्य चरति तत्सर्वाभिप्राय मथ यत्काम्यं निवर्त्तते तत्कामप्रतिपत्सर्वाभिप्राया सर्वा ह्यवधारितकामा भवन्तीत्युपवतीत्याहुः प्रथमाञ्चैना मधीमहे ऽपि तां ग्रामकामस्य ह ग्रामः सर्वाभिप्रायो भवतीत्यथापरस्याश्चिरं दर्शयति ततश्चतुर्षु मासेषु शुनाशीर्यस्य लोके ज्योतिष्टोमोऽग्निष्टोम उपवती प्रतिपदित्येका रथन्तरपृष्ठे ऽग्रियवती बृहत्पृष्ठे ऽग्रियवद् बार्हतं ह्यप मुपवती रथन्तरे ऽग्रियवती बृहतीति च भाल्लविना मथापेरनाꣳ साह्नस्योत्तमे स्तोत्रीयस्योत्तमां दर्शयत्योभयसाम्यास्तां न प्रथमां ब्राह्मणेनैव तद्व्याख्यात मथापराह्णाभिषेचनीये यत्पञ्चस्य वाचो अग्रिय इति तेन यज्ञमुखान्नयन्तीति प्रकृत्या प्रग्रयं दर्शयति तदपि शश्वद् ब्राह्मणं भवतोते नाव प्रतिपदौ सर्वाभिप्राये यदुपवती चाग्रियवती च कामाय वा

इतरा आह्रियन्त इति स्वरो गायत्रीविधनानां प्रथमा(३*) विष्टुतीनां श्यैतनौधसे ब्रह्मसाम्नां षड्ढक्थानि सर्वाभिप्रायाणि भवन्ति साकमश्वं सौभरनार्मेधे हारिवर्णीद्धृश्रीये आष्टादंष्ट्र मिति तेषां कान्युक्थे कान्यतिरात्र इति सर्वेषां यथाकामीति शाण्डिल्यो हारिवर्णीद्धृश्रीये वा हारिवर्णाऽष्टादंष्ट्रे वोक्थान्ते कुर्यादिति गौतमो ऽतिरात्रे सौभरनार्मेधे तच्चर्यां जानीमो हारिवर्णीद्धृश्रीये वा हारिवर्णाष्टादंष्ट्रे वोक्थान्ते चैव कुर्यादतिरात्रे चेति धानञ्जय्यः सौभरनार्मेधे वोक्थान्ते न कुर्यादिति रथन्तरं सन्धिषाम्णाः सर्वाभिप्रायं तद्विचरति तत्र यानि कामावधारणानि सर्वाभिप्राये स्तुतानि भवन्ति तानि खल्वेतानि व्यञ्जनान्येकजातीयान्येव समादध्यादेवं चाव्याहतः क्रतुर्भवत्यपि चैव मार्षेयकल्पो दर्शयति ॥ ३ † ॥

अथानुष्टुभस्य भागस्य का छन्दोभक्तिरित्येकाक्षरां ब्रुवते शौचिवृक्षास्तद्विजानीमो बह्वक्षरप्रवादो भवत्येकाक्षरा वै वागक्षरेणान्ततः प्रतिष्ठाप्य मक्षरं क्षरतः मक्षिष्यत इति हि भवतीति सर्वैव

* पुस्तकेऽत्र छेदो नास्ति।

द्वात्रिंशदक्षरेति शाण्डिल्यस्तथा गौतमधानञ्जय्या-
वेता मनुष्टुबित्याचक्षते ऽथापेरना मनुष्टुबर्थे निधी-
यमानानां पश्यामो ऽथापि यस्तावदकुशलं छन्दसा
मौकथिक मनुष्टुभं पृच्छेदेता मेव द्वात्रिंशदक्षरा
माचक्षीत तत् खलु गायत्रं प्रातःसवनं त्रैष्टुभं माध्य-
न्दिनं सवनं जागतं तृतीयसवनं यदूर्ध्व मुकथेभ्य
आनुष्टुभः स भाग इति कथ मु द्वादशस्तोत्र-
आनुष्टुभो भागः स्यादिति सवनानि प्रति प्रविष्ट
इति गौतमो ऽष्टाक्षरा गायत्री हिङ्कारो नवम एका-
दशाक्षरा त्रिष्टुब् द्वादशाक्षरा जगती छन्दोभिरेवा-
नुष्टुभ माप्नोति यजमानस्यानवलोपायेत्यन्तस्यान
एष भाग इति शौचिवृक्षिरेकविंशस्तोमो वाक्सा-
मान्त एष नूनं द्वादशस्तोत्रस्यानुष्टुभो भागः
स्यादिति सर्वैव षड्विंशदक्षरेति शाण्डिल्यस्तत्रैव
यत्तत्त्वसर्यक्षराण्युपाहरति परोभौचिकीर्षन्निति षट्
प्रत्यवरोहं शौचादिरयो यथैतद् ब्राह्मणं द्वाद-
शाक्षर मेकादशाक्षर मष्टाक्षरं वागः द्वाविंशीत्यथ
पञ्चदशस्तोत्रे सवनानि प्रति प्रविष्ट इत्येव गौतमो
ऽच्छावाकस्तोत्रीये शौचिवृक्षा अथ षोडशिनि सर्वैव
चतुस्त्रिंशदक्षरेति शाण्डिल्यस्तत्र यद् द्वे अक्षरे

उपाहरति परोक्षीचिकीर्षन्निव्युपसर्गाक्षराणि शौचि-
वृक्षा दशाक्षरं पादं शौचाद्वितरेयो ऽथाग्निराचे
सर्वैव द्वौविंशदक्षरेति शाण्डिलास्तां यदभ्यासेन
करोति परोक्षीचिकीर्षन्निति वैतद्व्यस्तोचीये शौचि-
वृक्षाः ॥ ४ ॥

अथायं सन्धिरन्तर्भागं भवतीं३ बहिर्भाग मिति
बहिर्भाग मित्याहुः समाम्नेषु भागेष्वागच्छत्यथा पश्चा
छन्दसा भक्षयति बहिर्भाग मिवैव स तत इत्यन्तर्भाग
मित्यपरं का सा भक्तिर्या बहिर्भाग मितरथापि न
मुक्थैः सम्मिमीते ऽन्तर्भाग मुकथानि भवन्त्यन्तर्भागः
सन् किम्भागः स्यादिति गायत्र इत्याहुः समाम्नेषु
भागेषु पुनरुपक्रमे कोऽन्यो गायत्रवान् स्यादिति सर्व-
भाग इत्याहुः सर्वभाग पृष्ठं ह्यत्र रथन्तर मित्यानु-
ष्टुभ इत्यपरं रात्रानुबन्धतयेति क्रमे भवतीं३
समास इति क्रमे भवतीत्याहुः समस्तेऽक्षरे रात्रि-
पर्यायाः क्रमे सन्धिरित्यपि वा क्रमे रात्रिपर्यायाः
समस्तेऽक्षरे सन्धिरिति नैतदिह विज्ञायत इति
शाण्डिलायनो ऽमुत्र खल्वेतद्दशरात्रे विज्ञायत इदं
पदस्य स्थाने मिद मक्षरक्रमस्येदं वृद्धेरिदं समासस्येति
तत्र हि द्विभागाः प्रकल्पयन्त इति विज्ञायत एवेति

वाज्ञाः षट्स्थान्यहस्सवनानि क्रमे षोडशी तं सप्पभिविहारं प्रसत्येत मेवाक्षरक्रम मनु चिख्यापयिषन् वृद्धौ रात्रिपर्यायास्तानपाभ्यसत्यथ्याद्यात्यसामानो हि छन्दोमा इति तदपुाभयोः सन्ध्योः सतोरेत मेव सन्धिरित्याचचते समासादित्येतेन सर्वैकाहेषु सामभागा व्याख्याताः ॥ ५ ॥

अथ दशरात्रे कथं भागा इति याथाकामी भागाना मित्येकं आक्षरसत्येतैकभागथ मस्ति सर्वभाग मपि तु त्र्याहःश एवं भागाः त्युर्गायत्रः प्रथमस्त्र्याहस्त्रैष्टुभो द्वितीयो जागतस्तृतीय आनुष्टुभः षोडश्यानुष्टुभं दशमं तदपरं व मिव ब्राह्मणं भवति प्रातस्सवनेनैव प्रथमस्त्रिरात्रः कल्पते माध्यन्दिनेन सवनेन द्वितीयस्तृतीयसवनेन तृतीयो ऽग्निष्टोमेन साम्नैव दशम महरित्यथापरं गायत्रं त्रैष्टुभं जागत मिति प्रथमस्त्र्याह एव मेव द्वितीय एवं तृतीय आनुष्टुभः षोडश्यानुष्टुभं दशम मथापरं गायत्रं त्रैष्टुभं जागत मिति प्रथमस्त्र्याह आनुष्टुभो द्वितीयो गायत्रं त्रैष्टुभं जागत मिति तृतीय आनुष्टुभः षोडश्यानुष्टुभं दशम मथापरं गायत्रं त्रैष्टुभं जागत मानुष्टुभ मिति प्रथमश्चतुरह एव मेव छन्दोमचतुरहो वहिर्भागं

पञ्चमषष्ठे इत्यथापरं पदस्थः प्रथमस्तोत्रो ऽन्तरस्तो द्वितीयो बृहद्विस्थस्तृतीय आनुष्टुभः षोडश्यानुष्टुभं दशमं ते खलु शश्वद्वाक्पविनो भक्षानन्नु व्यूहन्ति जगती प्रातस्सवन मागमं तत्र जागतच्छन्दसा भक्ष-यिष्याम इति न वय मनुव्यूहामः सवनभक्तिश्छात्त्रा एव भक्षेषु स्म इत्यथ संवत्सरे चतुर्विंशं लुब्धभाग मिति शौचिवृक्षिर्गायत्रं वा स्तोमच्छात्त्रेण त्रैष्टुभं वा स्थानेन सर्वभागं वैकाह्यादित्यभाभिप्लवा ऐका-हिका वा स्तोमच्छात्त्रेण षाडहिका वा तन्त्रच्छात्त्रेण त्र्यहभागात्स्वरसाम्ना मानुष्टुभो विषुवाच्चातुर्थ्या-न्सर्वभागो वैकाह्यादिति ॥ ६ ॥

अथाहीनेषु द्विरात्राणां गायत्रं पूर्व महस्त्रिभाग मुत्तरं यत्प्राग् ब्रह्मसाम्नस्तत् त्रैष्टुभं ब्रह्मसामप्रभृति जागत माषोडशिनः षोडशिप्रभृति पर मानुष्टुभं त्रिरात्राणां गायत्रं प्रथम महर्जागतं द्वितीयं त्रैष्टुभं तृतीयं वैदत्रिरात्रे सर्वभागान्यहानि चतूरात्राणां गायत्रं त्रैष्टुभं जागत मिति त्र्यहे ऽन्तराहरे चतुर्थ मिति शौचिवृक्षिः समस्ते ऽन्तर इति गौतमः पञ्चरात्रे-ष्वन्तरान्तर्योरेव चतुर्थपञ्चमे इति शौचिवृक्षिः सम-स्तेऽन्तर इत्येव गौतमः षड्रात्रप्रभृतिषु दाशरात्रिका

भागा यावद्यावदभिप्राप्नुयुरथ यत्राहीन एकाहैवं-र्तंत सर्वभागास्तत्रैकाहाः स्युरित्येक आहीनिक-भागा यथास्थान मित्यपर मेतेनाहीनेषूपधीयमाना व्याख्याता अथ यदूर्ध्वं दशरात्रादुपधीयेरन् ये वा मध्ये दशरात्रस्य भार्गपर्वणि सर्वभागा एव ते स्युरेतेन सत्रे-षूपधीयमाना व्याख्याता अहीनैकाहसमासा ह्यत्र सत्राणि भवन्ति ॥ ७ ॥

अथ सुब्रह्मण्यायां विचारयन्त्यृग् खल्वयं भवती३ सामेत्यृग्भवतीत्याहुर्ऋचि इवास्य नामधेयं सुब्रह्म-ण्येति सामेत्यपरं गीतं हि भवत्यथाप्याहुर्मन्त्र एव खल्वयं शिथिलो भवत्याह्वानार्थस्तस्येय मभ्यायियं स्यादित्यथाप्याहुर्नैवेय मृग् न साम सुब्रह्मैवेद मिति ब्रह्मणो भवती३ उद्गातुरिति ब्रह्मणो भवतीत्याज्ञ-रेतेन ह्यग्रे संयुज्यते ऽथापि ब्रह्मा सुब्रह्मण्य इति नामधेयसारूप्यादथाप्येवं सर्वाहोरात्रा वषट्कारि-ण्यो भवन्त्युद्गातुश्चाग्नीध्रः सम्पद्यत इत्युद्गातुरित्यपरं गीतकारी ह भवति स गच्छभक्तेभ्यः पुरास्य भक्तेभ्यः कर्म प्रवृज्यत इत्यथैतानागतत्वारकालादहीनेषु सत्रेषु याजमानान्नामग्राहः किमर्थं इत्युच्चावचचरणास्त्रियो भवन्ति स इह देवसाक्ष्ये च मनुष्यसाक्ष्ये च येषां

पुत्रो भविष्यामि याᳫँश्च पुत्रानन्वख्ये ते मे पुत्रा भवि-
ष्यन्तीति शाकटी मन्त्रवरुह्याह्वयेद्राज्ञो ऽप्रत्यारोहा-
यांप्रत्यारोहाय ॥ ६ ॥

अथातो दशरात्रस्तस्य ब्राह्मणमेव द्रव्यसमुद्देश
उक्तो यानि चैतानि ज्योतिष्टोमानि द्रव्याणि यानि
च पृष्ठैः समानरूपाणि यानि च दशरात्रेण समान-
सङ्ख्यानि यथैतत्प्रथमानि प्रथमद्वितीयानि द्वितीय
इति स्थानतोऽपि समानᳫँ द्रव्यᳫँ सम्पश्येदथैताः
सप्त नाम विभक्तयः स तं तेन तस्मै तस्मात् तस्य
तस्मिन्नित्यामन्त्रिता ऽष्टमी स खलु विभक्ति मामन्त्रितां
प्रथमेऽहनि करोति कस्य हेतोरिति प्रत्यक्षभक्ति रेथ-
न्तर मामन्त्रितस्य न परोक्ष मस्तीत्यथाप्येषा प्रथ-
माग्निमन्थनीया भवति तां चतुर्थे ऽहमि करिष्यन्
भवति त मिति द्वितीया तां द्वितीये तेनेति तृतीया
तां तृतीये तस्मा इति चतुर्थी तस्या न द्रव्यं विद्य-
मान माङ्गरेका :मुदाहरन्ति प्रतवासीं नवासीं
धीति मग्नय इति सैषा प्रत्नवती भवति भागान्ते
ऽपरूपा स इति प्रथमा तां चतुर्थेऽहनि करोति कस्य
हेतोरिति प्रत्यय एष भागानां प्रत्यय एषा विभ-
क्तीनां प्रत्यये प्रत्यय मथापि मामधान्येषां भवत्येतस्मि-

न्नहन्यग्निं जनयन्ति जातस्यो नाम धीयत इति तस्य ब्राह्मणं भवति देवा वै श्रिय मैच्छं(ं)स्तान्न प्रथमेऽहन्य-विन्दन्न द्वितीये न तृतीये तां चतुर्थेऽहन्यविन्दन्निस्येतां श्रिय माह नामधेयं ह विभक्तय: श्रिता भवन्तीत्यथा-प्येषा द्विसं(ं)शया पञ्चमे ऽहनि भवति तस्येति वा तस्मादिति भवतीति गौतमस्तां(ं) शश्वदेके चतुर्थीं ब्रुवते तां ततो नामधान्या प्रच्युता मन्यतरस्मिन्नहन्य-नुगृह्णाति तदपैव मिव ब्राह्मणं भवति तेनो श्रीः प्रत्युपोदितेति (नैव*) ब्रह्मणा आज्ये निरुच्यत इन्द्रा-त्परि तन्वं मम इति तस्मादिति तस्येति भवतीति धानञ्जय्यः सा षष्ठी ता मामन्त्रितया प्रच्युता मिहा-नुगृह्णात्यथाप्रेतयोः पूर्वयोस्तृतीयया समानं द्विव-चनं स तयैव ते उपाप्ते अमं(ं)स्तापि वा प्रत्यवरोहार्थ एवाकरिष्यत्समूढाज्ये निरुच्यते ऽग्ने स्तोमं मनामहे सिद्धमद्य दिवि स्पृशो देवस्य द्रविणस्यव इत्यभविष्य-दित्यथापि व्यूढाज्य एव भवति तव श्रियो वर्ष्यस्येव विद्युत इति त्वच्छ्रियत इत्यभविष्यदित्यामन्त्रितैव षष्ठे भवत्येवमाध्यवसानसभाधिरिति ॥ ९ ॥

अथैषा स्वरविभक्तिरौशनं प्रथमे वासिष्ठं

* नैव पदं ख-पुस्तके ।

द्वितीय उभयतःस्तोभं गौतमं तृतीय आभीशवं चतुर्थ आनूपं पञ्चम इहवद्वामदेव्यं षष्ठे ऽथैषा निधनविभक्तिर्नौधस प्रथमे श्यैतं द्वितीये मत्त्वावैष्टम्भं तृतीय आथर्वणं चतुर्थे बार्हद्गिरं पञ्चमे गौष्ठः षष्ठे ऽपैराषिड्डाविभक्तिः कालेयं प्रथमे माधुच्छन्दसं द्वितीये रौरवं तृतीये पृश्नि चतुर्थे शायोवाजीयं पञ्चमे गौष्ठ एव षष्ठे ऽथैषा छन्दोमेष्विडाविभक्तिर्जराबोधीयं सप्तम इडानां सङ्कारो ऽष्टमस्य सतो नवमे ऽहनि क्रियते प्रतीचीनेडङ्काशीतं नवम उद्वंशीयं दशमे ऽथ नौधसे वदन्तीन्द्रङ्गीर्भिर्हवामह इति तत्खलु हवामह इत्येव कर्त्तव्यं विधिप्रमाणाः कथ मयथाविधि कुर्यामित्याम्नायवद्वैतेन ब्राह्मण मुपवर्णयतीत्यपरं तन्नियोगाय न प्रभवतीत्येतेनैतद्व्याख्यातं मक्रान्तसमुद्रः परमे विधमन्निति यानि चैवञ्जातीयान्यथाचारे वदन्ति यः पुरा पुण्यो भूत्वा पश्चात् पापीयान्त्स्यात्तदाचारं ब्रह्मसाम कुर्वीतेति किं तस्य स्थाने स्यादित्येते एवान्योन्यस्य* स्थानं व्यतिहरेन्नौधसमुष्णिहि कुर्यादिति तदाहुर्यातिहरति चेद्यन्न बृहत्षोडशिसाम स्यान्नौरीवितं नून द्वितीयस्याह्नः पृष्ठं कुर्यादित्यथ वै सञ्चारये-

* "स्यादित्येते वान्योन्यस्य"—इति ख।

दिति * सञ्चारयति चेद्गौरीवित मेवानुष्टुभि कुर्या-द्गौरीवितᳬ षोडशिसामेत्यथ वै प्रतिनिदध्यादिति प्रतिनिदधाति चेद्यत्र बृहत्षोडशिसाम स्यात् किं तत्र बृहत्सदृशं द्वितीयस्याह्नः पृष्ठं कुर्यादित्यथ कयᳬ स्यादिति सञ्चारयेदहर्नानाहास्तु यानि सञ्चारि-धर्माणि स्युः प्रतिनिदध्यात् समानेऽहनि व्यतिहरेद्यत्र व्यतिहार मभिरूपं मन्येत प्रतिनिधिस्त्विहाभिरूप-तरः पौष्कल मुष्णिहि कुर्यादेतत्र ज्योतिष्टोमानां द्वयाणां दशमेऽनिहितं भवत्यपि च पदनिधनᳬ रथन्तरेऽहनीति श्यावाश्वायज्ञीय मग्निष्टोमसाम गच्छे यच्छे कुरुतेति तदेवाभिवदत्यथापेरष तृतीयसवनᳬ सामान्तस्त मदिदर्शयिषीत् ॥ १० ॥

अथ वैरूपे वदति यथा मण्डूक आट्, करोत्येवं निधन मुपयन्तीति कस्येदं ब्राह्मणᳬ स्यादिति कृता राथन्तरीडाकृता बार्हतीति कौत्सस्तदिद मकृत-कारं ब्राह्मण मद्दिडाब्राह्मणᳬ स्यादिति पञ्चमेऽहयं प्रत्याहृता भवतीति गौतमस्तां परोक्षीकृत्याभि-व्याहरेयु रेवं पञ्चमेऽहन्ययातयामा भवतीति तद्-पेरव मिव ब्राह्मणं भवत्ययातयामताया इति तत्र

* "सञ्चारयीति" ख।

कः परोक्षीभावं इत्याकारटकारौ वा कुर्युरिकार-गाकारौ वैव मेकवर्णविकार इकारन्त्वेवायिकारौ-कुर्युरेतस्मिन् परोक्षीभाव उपलभ्यत इति पदद्वैवतं व्यत्ययति वैरूपे विरूप मचिकीर्षदवर मेवेद मङ्ः सत्पर मभ्यस्तं भवतीत्यपरं वात्यासे वात्यासं करिष्यामीति स्तोत्रवशेनेति धानञ्जय्यो यदवात्ययन् यद-द्वैवतं पदा यत् प्रतिहारयिष्य इतिप्रत्यवेतस्तथा प्रति-हारो ऽभविष्यद्यद्यु वै दैवतायै बर्हिर्ऋचं प्रतिहारो ऽभविष्यदथेत्य मनतिप्रत्याहृतोऽन्तर्ऋचं भवतीत्यथा-प्यथैतं छान्दस मध्यायं विद्यमानं माहुरप्यथ खल्वाहु द्वादश वैरूपाणि भवन्तीति कश्चेदं ब्राह्मणऽ स्यादिति संवत्सरब्राह्मण मित्याहुः संवत्सरे द्वादशकृत्वो ह्यातृषाम भवति तस्येदऽ संवत्सराग्नि वदेदिति ॥११॥

अथ प्रमऽहिष्ठीये वदन्ति हिऽसितो ऽन्वीक्षेत य मिच्छेत्प्रसज्यमानं (न *) प्रत्येयादिति त मनुगा-येद्विक्षा मन्विति कुर्य्यं सर्वां सकाप्युदृक्षाशायं न प्रत्येयादिति काकुभ उक्थः प्रगाथः पृष्ठच्छन्दो-ऽन्वभिवृद्धि रथ स्वःपृष्ठस्याङ्गिरसस्य निधनयोरानु-पूर्वां विवदन्ते स्वःपूर्व मिडोत्तरं त्येके एव मेतयोः

* ख पुस्तके एतत् पदं नास्ति ।

सामान्तरयोरानुपूर्व्यं भवतोऽर्वां वयं पूर्वां कुर्म एव मनयोः समाम्नोपायाद्भिवाहारं पश्यामो यथा राजने माधुच्छन्दस इत्यत्र वैराजं त्वानुतोदं मेके कुर्वन्त्येवं छान्दसोऽध्याय इति चतुरनुतोदं वय मेव माचार्यवच इति तेन वात्सप्रं समादध्याद्यदीदं त्वानुतोदं तद्यदि चतुरनुतोदं तदपेरवं स्मिन् ब्राह्मणं भवत्येतस्मिन् वैराजं प्रतिष्ठित मित्यथ कतमे विष्टम्भा इति देवता इत्याहुर्देवताभिः पदानि विष्टम्भानीति तं दाक्र रेकादशेमा देवता दशकृत्वो विष्टम्भातीति दशैताः सत्यम्प्राया भवन्त्यपि वा य एते देवतान्तरेषु दशस्तोभास्तान् विष्टम्भानवोचत्तैर्देवताविष्टब्धा इत्य- थैतयोरक्षरयोर्विवदन्त ऋगक्षरे स्तोभाक्षरे इत्यृगक्षरे इति लामकायनस्तदभिव्याहारेण जानीमो यादृशे इमे ऋगक्षरे तादृशे इमे भवत इत्यथापराादित्यसदृशं वैराजं यादृश इत आदित्यस्तादृशः परस्तात्तद्रूपं दिदर्शयिषन् प्रथमे ऋगक्षरे अन्त परिहरत्यथापुरा- श्वावचाः सामवृत्तयो भवन्ति यथैकवत्साभ्युपेतानि पुनरारब्धानीति नान्यां मन्येत स्तोभाक्षर इति धानञ्जय्यः पश्यामः खलु पदानुरूपान्स्तोभान्वचो- वावयन्तो यथैतज्जनदृश्या ऋचि जनद्रान्स्तोभी

ऽप्रसिद्धवतोऽपि राज्ञोऽन्नोष्वेव मिमे पीतवत्या ऋचि पीतवत्ता स्तोभाक्षरे भवत इत्यथाप्यादित्यसदृशं वैराजं यादृश इत आदित्यस्तादृशः परस्तात्तद्रूपं दिदर्शयिषन्यदानुरूपे स्तोभाक्षरे अन्तं परिहरति नो एतत् कारन पश्यामः प्रथमे ऋगक्षरे अन्त परिक्रियमाणे इत्यथैषाति जगती भावप्रत्यये छन्दस्तोमरोह मद्दिदृक्षयिषोर्द्विराजं वा वैराजे ऽन्यचिकीर्षोर्द्विराडियं पञ्चाशदक्षरा बृहत्यावुत्तरे तेन बृहतीभ्यो ऽनपेतं भवतीत्यनपेतम्भवतीति ॥ १२ ॥

अथैतासु महानाम्नीषु विप्रतिपादयन्ती दशाक्षर मिद मशाक्वर मित्यशाक्वरी प्रथमा द्विपदा शाक्वराणि त्रीणि पराणि पदानि धातुरशाक्वरः पञ्चाक्षरः स एष कृत्स्नकृतो भवति वर्णो शाक्वरो ऽष्टाक्षर ऊधः शाक्वर मष्टाक्षर मभ्यासवत्तस्य द्व्यक्षरान् पादादीन् प्रतीतोदा इत्याचक्षीति पुरुषे, शाक्वरः पञ्चाक्षरः शाक्वराण्येव त्रीणि पदान्यभ्यासो शाक्वरोऽष्टाक्षरस्तस्य प्रस्तावयति न प्रतिहारयत्येते नैत्योत्तरयोः शाक्वराणि चाशाक्वराणि च व्याख्यातानि द्व्यभ्यासोत्तमा शाक्वरी भवत्यभ्यासा किमर्था इति लोकोक्ताः शक्यैः साध्यासा इमे लोका भवन्त्यग्निर्वायुरिति पूर्वयो-

रादित्यश्चन्द्रमा इत्युत्तमस्य तस्माद् द्व्यभ्यासोत्तमा शक्करी भवत्यथ खल्वाह व्यौपशाः सᳬस्तुता भवतीति कस्येदं ब्राह्मणᳬ स्यादित्युत्तमाया द्व्यभ्यासाया इत्याहुरेकाभ्यासि पूर्वं द्व्यभ्यासोत्तमा तस्या इद मभिनन्द ब्राह्मणं वदेदित्यपि वा समस्तब्राह्मण मेव स्याद् व्यौपशोत्तमेत्यूधसोऽभ्यासब्राह्मणं मन्य इति वार्षगण्य एव मिव ब्राह्मणं भवतीडे अमितो ऽयकारं तस्माच्छुङ्गेतोज्यायसी स्तूयादित्युपशोतानि शृङ्गाणि भवन्तीत्यथ खल्वाह दिशः पञ्चपदा दाधारत्तून् षट्पदा छन्दाᳬसि सप्तपदा पुरुष द्विपदेति प्रतिलोमं वदति * वादतश्चिद्रोहो भविष्यतीति सप्तपदा प्रथमा शक्करी षट्पदा द्वितीया यज्ञि प्रथमाया उत्तमं पदं तद् द्वितीयायाः प्रथमं प्रगाथः सानुपृष्ठ मिति पञ्चपदोत्तमा यद् द्वितीयाया उत्तमं तत् तृतीयायाः प्रथमं च द्वितीयं च नवपदाः पुरा बभूवुरिति लामकायनस्ताभ्यो रेवत्यो निर्मिता ऽ प्रथमायाः पदे त्रीणि द्वितीयायाश्चत्वारि तृतीयायास्तदप्येव मिव ब्राह्मणं भवति सिमाभ्यो ह्यधि रेवत्यः प्रजायन्त इति नवपदा एव भविष्यन्तीत्यूधश्चाभ्यस्य पदं चानु-

---

* "भवति"-इति ख।

सꣳहरत्यथापि नवपदा एताभिरूपतरां न विपर्यये त्रिणव इति ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे तृतीयः प्रपाठकः ॥

॥ अथ चतुर्थः प्रपाठकः ॥

अथ खल्वाह गायत्र मयनं भवति त्रैष्टुभ मयनं भवति जागत मयनं भवतीति किमयनꣳ स्यादित्यूधसि विकारो दृष्ट इति गौतमधानञ्जय्यौ य एष मध्य ऊधसो ऽथकारस्तꣳ स्वरिति कुर्यात्तद्गायत्र मयन मथेति त्रैष्टुभ मिडेति जागतं तदाहुर्विकृतो ऽथकारो ऽविकृतस्थ को विकारो ये चाभित इडेति विकुर्यादिति सर्व मेवोधर्विकारार्थ मागच्छतीत्यपरꣳ सर्व मेवोधर्विकुर्यादित्यथाप्याहुरविकृत मेवोधः स्या दन्त्येडा मेव कुर्यादन्तांस्वरानि कामीतीत्यथापराहुरविकृतैवान्त्येडा स्यादादेव प्रागन्त्येडायास्तद्विकुर्यात्तद्गायनं भवतीति ते कथमेतोजागत मयनꣳ समारप्स्यन्तेति नेदं जागत मिति शाण्डिल्यायनो यानि

त्वच्च निधनानि तानि स्वरिति कुर्यात्तद्धायन्न मयन मपेयक्ति त्रैष्टुभ मिडेति जागत मपेदं मिश्रणिधनꣳ सर्वामिंप्रायं यथेद मधीमह इत्यूर्क्ष्ꣳ शक्वरीभ्यः पञ्च पुरीषपदानि पञ्चाक्षराणि तेभ्यः प्रस्तावयति न प्रतिहारयति न शश्वदेकेऽध्यासपुरीषपदानां प्रस्तावयन्ति प्रतिहारोपायान् "प्रस्तावोपेथादिति" प्रस्तावयामो वय मन्यदिदꣳ शक्वरीभ्यस्तत्कथ मप्रस्तुत क्रियतेति सꣳरोधात्तु नून प्रतिहारोपेथात्ते खल्विमे बहवः प्रस्तावाः कथ ओङ्कार इति प्रस्तावनिमित्त ओङ्कार इत्येके प्रस्तावे प्रस्ताव ओङ्कारेणादद्दीताथाप्याह रसो वा एष साम्नां यदोङ्कारो नैतेनातिरेकोऽस्तीति प्रथम एवप्रस्ताव इत्यपरः स्तोत्रीयाया एतान्यङ्गानि भवन्ति सक्रन्नु खलु स्तोत्रीयाया ओङ्कारो भवत्यथापि परिचष्ट ऊर्ध्वं प्रतिहारादोङ्कारेणादान मथाप्येव मन्यैः सामभिः समाधिरिति ॥ १ ॥

ते खलु शश्वदेके पुरीषपदैः प्रतिपद्यन्ते पञ्चविधेन पञ्चमस्याङ्गः पृष्ठं प्रतिपत्स्यामह इत्यथाप्येवꣳ शक्वर्यवसानꣳ स्तोत्रं भविष्यतीत्यथाप्याह गोष्ठः पुरीष मिति कृत्वा वै गोष्ठं पशूनुपाकुर्वन्त्यन्नातो वयं कुर्म एवं च छान्दसो ऽध्यायोऽपि चैवंपञ्च-

विधं पञ्चमस्याङ्कः पृ४ मनुसंख्याप्यत इति यद्दे-
तद्गोष्ठः पुरीष मितीष्टा वै पशून् गोष्ठं कुर्वन्त्यथापि
पश्चार्द्धसेवि पुरीष मिति तत् खलु सर्वाभिः स्यह्
स्यादित्याहुस्तृचदृष्टंय इमा भवन्ति लोकदृष्टयस्तद्दि-
दं मन्ते ऽनुषङ्गस्थाने समाम्नातं भवत्यथापैवं सर्वाः
सपुरीषा भविष्यन्तीति व्यवायश्चाभविष्यदतिगुरु चाथ
वै विष्टावान्तेषु विष्टावसमाधय इति व्यवायश्चैव
गुरु चाथ वै पर्यायान्तेषु पर्यायसमाधयं इति व्यवाय-
श्चैव गुरु चाथ वा उत्तमम. मेवानुचरेदेतया हि
संहरेत्पन्नं भवतीति व्यवायश्चैवं गुरु चं सकृदन्ततः
स्यादित्याहुरेतच्चासां लघिष्ठ मपि चैव मध्येऽन्नायो-
ऽथापि परिनिष्ठायाशिष मुदित्वान्ते ऽनुज्ञां वदिं
ष्याम इत्यथापि पश्चार्द्धसेवि पुरीष मिति तासां धर्मो
नियुज्यते न व्याहरेन्नाश्नीयादभिनद्वाचन्नासीत पूर्वे
कोऽयं ब्रह्मणो भवतिम्नन्नो ह प्रतिलभ्य प्रदद्देदेत
मेवाह ब्रह्मचर्यं धर्मं मन्य इति गौतमस्तत्त्वतिगुरु
चाभविष्यदपि च नो ह मरणाशङ्का मिमस्तु सर्वच्छ-
न्दसा मवन्त्यासां मे चरतः सर्वच्छन्दसा मिव व्रतं
चरितं भविष्यतीत्यथाप्याहुर्यानि रूपाणि ब्रह्मचारी
न पश्यति तान्यासन्नाम्नाति लब्ध्वा हैनांत्समावर्त्य

भवति त मेतद्रूपेभ्यश्च रसेभ्यश्च समन्नरन्ध्नमन्यत इति ॥ २ ॥

तासां खलु त्रीन्त्संवत्सरान् ब्रह्मचर्यं चरेत् कृष्णवस्त्रः कृष्णभक्ष आचार्याधीनस्तपस्वी तिष्ठेद्दिवाऽऽसीत नक्तꣳ सायं प्रातरुदकोपस्पर्शी सर्वभूतेभ्यः पन्थानमदद्वर्षति शरणं नातीयान्नित्यं स्निग्धवासा बुभूषेदुदकसाधनो हि महानाम्न्य इत्येवं खलु चरतः कामवर्षी पर्जन्यो भवत्युदकोपस्पर्शनं किमर्थमित्यनुक्ताः शक्वर्यस्ता एव प्रविशन्मन्यत इत्यपि वा पशूनामेव पायनार्थꣳ स्यात् पशूक्ताः शक्वर्य इति खलु प्रथमस्य स्तोत्रीया मनुगायाहोरात्रे वाग्यतः परिगाह्यात्र आसित्वा तस्याः संवत्सरं ब्रह्मचर्यं चरेदेवमेव द्वितीयायाः एवं तृतीयायास्ते खलु शश्वदेके प्रथमत एव परिगाह्यन्ति प्रथमत एव यथा न प्रवत्स्यतीत्यध्यास प्रत्येकेऽध्यास प्रत्यध्यासिष्यामह इति त प्रातरभिवीचयन्ति यान्यप्रवर्त्यं मन्यन्ते योऽग्निर्वत्स मादित्य मपोऽभिव्यख्य मित्यपोज्योतिर भिव्यख्या मित्यग्निं पशूनभिव्यख्या मिति वत्सꣳ स्वरभिव्यख्या मित्यादित्य मथाप्येतदेवैता भवन्त्याप इवाग्निरिव वत्स इवादित्य इवेत्यथ खल्वाह पार्थरश्मꣳ राज-

न्याश्च ब्रह्मसाम कुर्याद् बार्हद्गिरं ब्राह्मणाय रायोवाजीयं वैश्यायेति पार्थुरश्मं चेद् ब्रह्मसाम स्याद्बार्हद्गिरस्यैकच्चं कुर्याद्वियु वै रायोवाजीयं मेते एव बार्हद्गिरं रायोवाजीयं सतोबृहतीये अन्योन्यस्य स्थान व्यतिहरेत् कथ मुभयेषु समवर्षयेदिवति भुम्नो वशं नयेद्गृहपतेरित्येकेऽपि वा बार्हद्गिर मेव कुर्यान्नित्य ञ्च श्रैष्ठवर्णीयं चेति वैश्वामित्रस्तोत्रीये षोडशिना स्तूयमान आष्टमिक मुक्थस्तोत्रीयं प्रति निदध्यात्संस्थाराय वीङ्कस्तोत्रीये वसिष्ठस्यप्रिय मनुकल्पयेद् वसिष्ठस्यप्रिय मनुकल्पयेत् ॥ ३ ॥

अथ षष्ठेऽहनि रेवतीषु वारवन्तीयं पृष्ठं भवति तदेके प्रत्यक्षं ब्रुवत एतत्प्रकृतौ दृष्टं भवतीत्यथापि यद्रेवत्यः पृष्ठ मभविष्यत्पवमान आसां धर्म मकरिष्यन्नित्यथाप्यानुरूपाग्निष्टोमसाम्नि वारवन्तीयस्यैवानुरूपं कल्पयतीति रेवत्य इत्यौष्ट्राक्षी रेवती षष्ठानाऽं स्तुतिब्राह्मणं भवति तासां धर्मो नियुज्यते तद्गवां घोषोऽन्वसृज्यतेत्यथापि प्रतिपद्भिः पृष्ठानि संवर्णयन् रेवतीरेवाभि संवर्णयति षष्ठ च विश्वजिति चाथापि पृष्ठाल्लोमातं पृष्ठानि च्यावयन् रेवतीरपि च्यावयन्त्यथाप्यनुगृह्णीतपृष्ठे रेवतीरेवानुगृह्णातीत्य-

थापि परोक्षपृष्ठोपाङ्गपृष्ठयोरनुगृहीतपरोक्ष इति बारवन्तीय मेवानुगृह्णाति यद्वेतद्देतत्प्रकृतौ दृष्टं भवतीति ब्राह्मणेनैव कारणं वदति यद्वेतत्प्रवमान आसां धर्म मकारिष्यन्नित्युपाप्तं पृष्ठत्वꣳ रतोत्त्रीयेण मन्यते यद्वेतद्वारवन्तीयस्यैवानुरूपं कल्पयतीत्युक्तं वारयन्तीयस्य परोक्षं तदेतद्रेवतीपरोक्ष मेव भवतीति ॥ ४ ॥

अथ खल्वाह प्रायणतो द्विपदाः कार्या३ उदयनता३ इति कथं प्रायणतः स्युरिति प्रथमेऽहनीत्याङ्गिरेतद्धि प्रायणं भवत्यथापि दृश्यते प्रायणीयस्योक्थत्वं चतुर्विंꣳशस्य तथा षष्ठस्याऽग्निष्टोम्यं यथाभिप्लविक द्वितीय इत्यपर. मेतदुक्. ानां प्रायणं भवत्यथापैवमुक्थ्यव्यतिहार सिध्यत्यथापैवं प्रकृतिसविधतरं भवतीति कतमावृत्ते पृष्ठ्य सꣳस्थाधर्मा इत्यावृत्तस्यापरान्त एव स्युरित्येके यथा षडहः सन्तिष्ठत इति हि भवतीत्यथापि षडहधर्मा इत्याचक्षते न चैतत् षष्ठस्य साध्रियो यथो च प्रथमस्य त्र्यस्त्रिꣳशस्य तेनैव संस्थाया मितराचार्या एतदावृत्तं रूपं य इत उपक्रम धर्मः स परस्तात्सꣳस्थाधर्मो यः परस्तात्सꣳस्थाधर्मः स इत उपक्रमधर्म इत्यथापि व एनानावृत्तस्यान्तं

परिहरेत्सर्वाण्येव नूनꣳ सोऽन्तलक्षणाभ्यांवृत्तशान्तं परिहरेदिति ॥ ५ ॥

नीर्णि दशरात्रस्य विच्छिन्नानीति शाण्डिल्यः पञ्चम मभितो द्वे षष्ठे पूर्व मेकं * तेषाꣳ सन्तानाय सन्तनीत्यनुपूर्वꣳ सूक्तानुरूपाꣳश्छन्दोमान् करोति पृष्ठ्यश्छन्दोमाबा मकृतकारायस्थापप्रक्रान्तवादः प्राक्-सूक्तानुरूपयतेत्यथापि प्रज्ञापयति सꣳस्तावेषु प्रजा-स्थान मभ्यवर्द्धयिषीद् बृहद्रथन्तरे पृष्ठे न हि षाडहि-कान्यनुभवन्ति नो खलु लुप्सीरथापि शिथिलोक्ताऽस्तेषां प्रत्यक्षाभ्यां पृष्ठाभ्यां दृढीभावो भविष्यतीत्यथापि तम उक्तास्ते एते ज्योतिषी सामाꣳ स कस्य स्तोर्बृहत्पूर्वं युक्त इति कृतयोः क्रियमाणयोरेषाकृतकृतिरथापि स्तोमप्रत्यवाये पृष्ठतो रोह मद्दिदर्शयिषीदंष्योक्तं बृह-दित्यथापीदं वृतस्यानः बृहदाम्नितया व्रतस्य मध्नस-तया ते व्यत्यासमप्रयुक्तो ... कुशलं वाङ्निधनानि माध्य-न्दिनान्यन्त्यान्यैडान्याभवान्त्यानि सवनच्छन्दसो रनुग्रहाय ॥ ६ ॥

अर्कपृष्ठान्येकेऽनीतो ऽधीयते मैषा छन्दोमानां पृष्ठभक्तिस्तेषां पृष्ठत्वे तिष्ठमानो न साक्षात् करोति

* "षष्ठादूर्ध्व मेकं"—इति ख ।

बृहद्रथन्तरे वा निकामयमानः पूर्वां चाभवे करोत्येवं नेदीयसि पृष्ठाना७ सप्तमे ऽहनि कृताकृतौ भवत्यब्राह्मणाविहितत्वाकर्त्तव्य इत्याचार्याश्छन्दोमानां चार्कसमाधिर्यथा चैतान्येङ्गिनो ऽधीयते छन्दोगाश्चापोन मेके ऽधीयते ऽथापि स७रोधे ऽनुगृह्यते यथा त्रिवृति दशरात्रे इति नवमे ऽहनि इमे स्तोमे सति साध्यासां बृहतीं करोति कस्य हेतोरिति साध्यासा पूर्वे ऽहनि कृता स एव मप्रत्ययवायो ऽथापि बहिर्धं चरति तस्याः पथ्यता मापिग्रादग्निषोहाग्रगात्रिकाणां इत्याणां पथ्याख्या ऽथाप्येतस्या मेवैत७ सामयोग७ साधीयोऽभ्यस्नुत इति चैककुभस्य निधने विवदन्ते पदनिधनाना मित्येके यादृशे इमे ऋगन्तरे तादृशे इमे भवत इति बहिर्णिधन मित्यपरं बहिर्णिधनस्थाने च युज्यते ऽपि चास्य निधनवादो भवति बहिर्णिधनाना मुत निधनवादा भवन्तीत्यथाप्यापद्यते ज्योतिर्विचारान्यत्पदनिधन मभविष्यद्युत परेच्यत ज्योतिष्टोमी भाज्ञा नास्य प्रतिनिष्कारं कल्पयति बहिर्णिधनस्येव सत इति सत इति ॥ ७ ॥

अथ दशमे ऽहनि चतुर्थ७ होतुराज्य७ समामनामस्तस्य मध्यमे भवतस्तानूनपाती च नाराशंसी

च द्व्यानि कुलानि भवन्ति. तानूनपातन्तांनूनपातेषु कुर्यान्नाराशꣳसीं नाराशꣳसेषु वसिष्ठशुनका अत्रयश्च वध्र्यश्वाश्चवक्रावाश्च सङ्कृतयश्चैतानि नाराशꣳसान्यथे-तराणि तानूनपातानीति कथं मुभयेषु समवय-तिस्वति भूम्नो वशं नयेद्गृहपतेरित्येके ऽपि वा तानून-पाती मेव कुर्यादेषा भूयिष्ठानां कुलानां भवत्यपि चैता मेवैके ऽधीयते ऽथाप्येषा समारब्धतरा भवतीत्यथ मानसं दशमस्य भवती३ सर्वस्याहो एव दशरात्र-स्येति दशमस्येत्याहुर्नैतद्दशमेन्नाज्ञा * विप्रयुज्यमाम पश्यामो ऽथापि दशमधर्मा इत्याचक्षते ऽथापि साह्नं मानसेन विराट् सम्पद्यतिसङ्ख्यात्यथाप्याहुः सर्व मेवेद मह्नः पुरा मानसं बभूव तद्दतिगुर्विति वाचꣳ समा-पादयाञ्चक्रुरेकस्तोत्रं चित्तं धर्म मनु अब्रुवन्तस्थात्रस्य-तीत्यथापि वागुक्ता मह्नः संयुक्ता मह्नः संयुक्ते वाङ्-मनसे भवत इति मे दशमस्येत्यपर मुपरिष्टात् पत्नी-संयाजानां भवति यन्नून दशमस्याभविष्यत् पुर-स्तात्पत्नीसंयाजाना मभविष्यदित्यथाप्यंच त्रिक स्तोमः कथं त्रयस्त्रिꣳशं कृत्वा समाने ऽहनि त्रिकं पर्य-वयिष्यदित्यथाप्यत्र गायत्रं छन्दः कथं त्रयस्त्रिꣳ-

---

* "नैव दशमेमाज्ञा"–इति ख।

अद्दशरा: कृत्वा समाने ऽहनि गायत्रं पर्यवृश्चिष्य-दित्यथापि वागुक्ता मह्यन्या वागभवत्त्वन्यस्तनो नाह्य भूयाहत्थमेनाक्ता सम्बन्धो यथा प्रथमेनेति कापटवः 'सर्वं वैतद् दशरात्रस्य सर्वो वैतस्य दशरात्र इति शाण्डिल्यायन आयामवाचं दशक्रमं मनोऽप्यायाम-वामसंयुक्तौ वाङ्मनसे भवत इति ॥ ८ ॥

तत्र गायत्रीः करोति स्थान गायत्रीणां यदि परस्थाक्षो गुर्ववेदं स्तोत्रं तत्र लघिष्ठं छन्दो चिकी-र्षीतायापेश्वमाद्यवसानसमाधिः प्रतिष्ठार्थो वाव गायत्रीः करोतीति तासु विवदन्त ऐन्द्र्यः प्राजा-पत्याः सारीरात्त्रस्थान्द्रमस्यः सौर्य इति शाकपूणि-स्तथा धानञ्जय्यः प्रत्यय आदित्यः प्रत्ययो मनः प्रत्यये प्रत्ययं तत्र गायत्रं करोति स्थान गायत्रस्य यदि परस्थाक्षो गुर्ववेदं स्तोत्रं तत्र लघिष्ठं सामा-चिकीर्षीदथापेश्वमाद्यवसानसमाधिप्रतिष्ठार्थो वाव गायत्रं करोतीति यज्ञायज्ञीय-गौरीविति-रथन्तर-वामदेव्यान्येवंयुक्तानि सामव्यूह इत्याचक्षते ऽथै-तस्मिन् अक्षोत्थे वदति भूयांसीव ह स्म शाण्डिल्यः प्रदिशति यदादोऽश्वत्रिरात्रे मध्योद्यं तदांप्रत्ययिष्य-द्यथा वैतद् ब्राह्मणा अभिमन्त्रं समुदाचरन्तीति

वरं मन्त्रं भवत्यन्तनिर्वचना आशिषं इति वृत्वा वरानौदुम्बरीं समभिपद्यन्ते सर्वकृतिं कृत्वा निस्वरिता इव मन्यन्तेऽत आत्मानमूर्जा प्रत्यापाययन्तो मन्यन्त ऊर्गुदुम्बर इति समाप्ते छन्दोव्यूहे सामव्यूहं कुरुत इति गौतमोऽकृतकारार्थस्वर्यास्तं अग्निष्टोमसामकरोत्युपवदिता छन्दोमानां नावसानेऽचिकीर्षीत्तथापि शिथिलोतोः प्रतिष्ठाक्त्य त्रयस्त्रिंशस्त मवसानेऽचिकीर्षीत्तथापि त्रयस्त्रिंशे क्रियमाणे त्रिके सापरात्ते त्रिंशतः स्तोत्रीयं दशम मह्नः सम्पद्यते सा विराडथापरं द्वादशं पञ्चविंशानह्नः सम्पद्यते नाहीनं साचादेकार्षं संस्पदा चिदेन मुपाप्नुयामेत्येतद्वयं शाण्डिलम् ॥ ६ ॥

पञ्चदशस्तोत्राज्ज्योतिष्टोमात्सषोडशिकां संसन्धिकां रात्रिं ब्रूहीति चतुर्विंशति माज्येभ्य आदत्ते द्वे वामदेव्याच्चतस्रः सौभरात्ते दश गायत्रास्तृचास्तान् रात्रे स्थाने निदध्याच्चतस्रः ककुभः सौभरात्तासां द्वितीयायास्तृतीयायाश्चतुरक्षरं चतुरक्षरमुद्धृत्य द्वे प्रथमाया मुपदध्या देवं स विराट्प्रथमो गायत्रास्तृचो वैतहव्यं स्तोत्रीयो ऽतिशिष्टानीतरस्यां ककुभ्युपदध्यात्तां षोडशिनः स्थाने निदध्याच्च-

तस्मो नार्मेधातिस्स्वस्मोऽग्निरह. एकां चानुष्टुभं ताꣳ षोडशिनः स्थाने निदध्यादिति शिष्टास्तिस्रः कौत्सस्य द्वे बृहत्यौ नौधसात्तथा कालेयात्तासा मेकां षोडशिनः स्थाने निदध्यादाताः सर्वास्त्रतुस्त्रिꣳशदक्षराः सम्पद्यन्ते ऽन्तस्थान् प्रतिशिष्टास्तिस्रः सन्धेः स्थाने निदध्याद् द्वे ककुभौ रथन्तरास्त्रतस्रो यज्ञायज्ञीयास्तासां द्वे द्वे सन्धिस्तोत्रीयेषूदध्यादेव मेताꣳ सषोडशिकाꣳ ससन्धिकाꣳ रात्रिं निर्मिमीत ॥१०॥

ततः पृष्ठं बृहीति सवनेभ्यः पूर्वस्त्राहः षोडशिनश्चतुर्थꣳ रात्रेः पञ्चमꣳ सन्धेः षष्ठं पृष्ठाश्छन्दोमान् बृहीति त्रिवृत्पञ्चदशयोः समासश्चतुर्विꣳशस्ततः सप्तमꣳ सप्तदशचित्रिणवयोश्चतुश्चत्वारिꣳशस्तदष्टममेकविꣳशत्रयस्त्रिꣳशाभ्यां नवमदशमे सोऽष्टाचत्वारिꣳशं नवमे निधाय पञ्चदशषट्कानादत्ते सर्वꣳ षोडशिन ते सप्तचिꣳशदृचास्तेषां चतुर्विꣳशतिमादाय दशमस्याह्नोऽष्टावष्टौ पवमानस्थानेषु निदध्याच्चतुर आज्येषु तथा पृष्ठेष्वेकः सग्निष्टोमसाम्नः स्थाने तथा सापरात्ते त्रयस्तृचा अतिशिष्यन्ते तान् प्रथमस्याह्न उक्थस्तोत्रीयान् बुवीतैवं तदुक्थ्यादुक्थ्य मभि संक्रामति त्रिवृतः पञ्चदश मेतां महावृत्ती

सम्पदिद्व्याचक्षत आचार्या दशरात्रो महावृक्षस्य
ह्यग्रं गत्वा स्वर्गगमनमुपपद्यत इति नैषा संस्मिन्
दशरात्र उपपद्येत इत्यौपमन्यवस्त्रयस्तृचा अति-
शिष्यन्ते तान्यो ऽग्निष्टोमसंस्थ उक्थ्य स्तोत्रीयान्
ब्रुवीतापररूपं तच्छन्दोभिश्चैषा सम्पत्स्यतीति
तदयोत्र मेव ब्राह्मणं भवति दत्त ऐन्द्रोत इति
होवाचाभिप्रतारी काक्षसेनिर्य महावृक्षस्याग्रं गच्छन्ति
क्व ते ततो भवन्तीति षडहं महावृक्ष मवोच-
त्तस्य ह्यग्रं गत्वा त्रिवृत्पञ्चदशयोः पक्षयोः क्रियां
दर्शयति तदप्येव मिवं ब्राह्मणं भवति त्रिवृत्पञ्च-
दशावेव स्तोमौ पक्षौ कृत्वा स्वर्गं लोकं प्रयन्तीति
तयोः समासश्चतुर्विंशस्तस्याष्टाचत्वारिंशो द्वाद-
शातिशिष्यन्ते ऽष्टमात्तथा दशमात्स चतुर्विंशो य
एते सम्पदौ विदुस्ते पक्षिणो ये न विदुस्ते पक्षास्त-
दप्येव मिव ब्राह्मणं भवति ये वै विद्वांसस्ते पक्षिणो
येऽविद्वांसस्ते पत्त्रा इति ॥ ५१ ॥

अथातो गवामयनं तदेक एकेनाह्नाभिविदधते
ज्योतिष्टोमेनाथैके ऽतिरात्र-चतुर्विंश-नवाह्नवता-
तिरात्र इति कृत्वा ज्योतिष्टोमेनैव संस्तुवन्त्यथैके
गोआयुषी दशरात्र मित्युपाहरन्त्येतं संवत्सर-

प्रवर्ह इत्याचक्षते गङ्गाहृत मिति चैतस्या समूर्पो वाकांखण्ड आसांश्चक्रे नानाहोभिर्वयं कल्पग्रामो यथैतद् ब्राह्मण मथ खलु य ऊर्ध्वं ज्योतिष्टोमदशा-हाभ्यां यज्ञक्रतवः सप्तभिः पर्यायैस्तेषु ज्योतिष्टो-मानां च दाशरात्रिकाणाञ्च द्रव्याणा मागमो भवति स्तोमान्वितानि स्थानान्वितानि पृष्ठान्वितानि तन्त्रा-न्वितानि भागान्वितानि सङ्ख्यान्वितान्याशीःस-प्रायाणीतिरूपाच्छान्दसान्यायन्त्यपि च व्यावृत्त्यर्थानि तत्रेह चतुर्विंशे यानि सप्तमात्स्तोमान्वितानि तानि यानि द्वितीयात्स्थानान्वितानि तानि यानि ज्योति-ष्टोमात् पृष्ठान्वितानि तानि यानि दशरात्रात् सर्वाणि रूपाणि क्रियन्त इति तानि यानि छान्दः सान्यभिवन्ति प्रवन्ति स्वस्त्ययनप्रवादान्युपक्रमे ऽभि-रूपाणीति तानि तत् खलु बृहत्पृष्ठं रथन्तरं मध्य-न्दिन कुर्म उपक्रमणीय मस्त्विति रथन्तरं द्वितीय मिति बृहद्वीकै चोभयसमान इति ह स्माह शाण्डिल्यायनो बृहत्पृष्ठास्ते रथन्तरमध्यन्दिनाः कुशलेनैवं स्वे सवने स्वे छन्दस्युभे वामदेव्योत्तरे भवत इति चतुर्ऋचं होतुराज्यं समामनां-मस्तासां चतुर्थी मुद्वत्युतीभवत्यपरूपा प्रायणार्थे

ऽथाप्येतस्याꣳ रथप्रवादो भवत्यपह्नुपा स्वस्त्ययनार्थेऽथ यद्येतत्सर्वस्मारे भवत्येतां तत्र करोत्यथ खलु पूर्व मन्वहं ब्राह्मणाꣳ सन्त नान्वह कुर्म एवञ्च रहस्यब्राह्मणे दर्शयत्यपि च शश्वद् ब्राह्मण मधीयते ते वा एते पूर्वातिपूर्वा ये पूर्व मन्वह मुपयन्तीति ॥ १२ ॥

उद्दलकस्याचार्यास्त्रैककुभꣳ समानोदर्कयोन्यपह्नुपं प्रायणीर्थं तद्येतत्सौभरं पृष्ठान्वितं विकल्पो वास्माद् ब्राह्मणचोदितत्वादथ खल्वाह सर्वाणि रूपाणि क्रियन्त इति तत्र खल्वाचार्या एतेष्वेव द्रव्येषु सर्वास्तस्तोमान्सर्वाणि पृष्ठानि सर्वा विभक्तीर्दश-रात्ररूपाणीति भक्तिमात्रेणैव कल्पयन्ति त्रिवृत्-पञ्चदशौ चतुर्विꣳशꣳ सम्पद्यते पञ्चदशसप्तदशान् पञ्चैकविꣳशान् षडेव त्रिणवान् षड् त्रयस्त्रिꣳशा-न्त्सर्वाणि पृष्ठानि बृहद्रथन्तराभ्या मुपाप्तान्येतत् परोक्षाणि हीतराणि वामदेव्येन वै तस्माद्विसृष्टान्यु-दꣳशोयेन वै तद्धि सर्वेषाꣳ रूप मित्यनिरुक्तायां निरुक्तं विभक्त-सर्वाभिप्राय वामदेव्येन स्वरविभक्तिः पृथग् दाशरात्रिकेभ्यो द्रव्यागमꣳ सम्पश्येदुपवती प्रथमादियवती द्वितीयाद्विद्युत्वती तृतीयाच्चा-साह्रीयꣳ सस्तोबीय चतुर्थाद खलु साकमश्व

मुक्थप्रणये ऽकरिष्यदतिरात्रे तत् कृतं भवति तत्र समविष्वारयिषीत् त्र्यचैतस्य चासाहीयं त्र्यहोपक्रमादुपक्रमेद् बार्हताद् बार्हते सोढवतीषु सोढवन्नामोऽथेदं कर्म सहेमहीति पार्थपञ्चमा दुद्वंशीयं षष्ठाद्यद्वा उद्वंशीयं तदुद्वंशपुत्र इति हि भवतीत्युद्वंशीयेनैव सर्वरूपावाप्ति मेके बहुसप्तमादिन्द्रे अग्ना नमो बृहदित्यष्टमात् मम तद्दैर्घश्रवसे नवमादभीवर्त्तः सत्रोत्रीयो दशमात् ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे चतुर्थः प्रपाठकः ॥

॥ अथ पञ्चमः प्रपाठकः ॥

अथैषोऽभिप्लवस्तस्मिन्त्सारण्ये गेयं छन्दःक्लृप्तं बभूवेति शाण्डिल्यो ऽह्नमेव प्राग् विषुवतो ऽह्नमूर्ध्वं सादित्यन्नतानि शुक्रियाणि विषुवति स तवश्रावीयाणि सामानि व्रत इति समूहति बार्हद्रथन्तरपृष्ठाह्निनित्याभिरनित्योऽयं षडह इत्याषाढिकौरनिख्या इत्यापद्यते ते खलु भाल्लवब्राह्मविनः स्तौत्री-

याल् प्रतिपदः कुर्वन्ति यथास्थानमेवानुरूपाननु-रूपान् वयं प्रतिपदः कुर्मः स्तोत्रीयाननुरूपानेवं यथोत्तरं स्तोत्रीयानुरूपाणां प्रत्याहारो भवतीति षडहवशेन मानां प्रतिपदः समानं पर्यास मेकाहः-वशेन तेन प्रच्युतं द्वितीयपर्यासं प्रथमेऽहन्यनु-गृह्णात्यथैतान्येव वै बृथिकान्यान्यान्युद्धृत्य गाय-त्राणि तद्विभक्तीनि प्रतिनिदधाति त्रीणि त्रिणिध-नानि करोति त्रीणि त्रीणि ह्येव षडहेऽवधारित-त्रिणिधनानि भवन्ति तानि यत् यथाक्रतमध्यन्त्यामास्य प्रायश्चित्तिसाम षष्ठेऽहनि चिकीर्षन् पार्थं द्वितीयस्य माध्यन्दिनान्त्यं करोत्येतत् पुरस्तात्स्तोभं चत्रसामं बृहति षष्ठेऽभिरूपं तेन प्रच्युत मिह-वद्वासिष्ठं षष्ठेऽहन्यनुगृह्णाति स्वरविभक्तेरनु-ग्रहाय ॥ १ ॥

अथैते त्वाष्ट्रीसामं चान्धीगवं च तृतीयचतुर्थयो-रह्नोर्व्यतिहरन्ति त्र्यहयोर्व्यतिषङ्गाय तत्र ता एव देवताविभक्तयोऽथ सामान्तविभक्तय एतेषा मेव द्रव्याणां तल्लिङ्गाः कल्पयेत पञ्चमे तु निधनविभ-क्तिनं विद्यते षष्ठे चेडाविभक्तिस्तत्राभ्यावारयन्ति बार्हद्गिरं वानुकल्पयेत् सौश्रवसं वा उक्थानां

ब्रह्मसाम कुर्याद्गोष्टं पृष्ठे नु कल्पयेदिति तस्य त्रिकद्रुकाः स्तोमाः षाडह्निकानि तन्त्राण्यस्ति च षडहप्रवादोऽपि चैवं रहस्यब्राह्मणे दर्शयति ज्योतिष्टायणो ज्योतिरहर्यनः षडहो ऽभिप्लव इति चैतरेयिणां ताण्डं सुमदेवं प्रयुङ्क्त एवं ज्योतिष्प्रायणो ज्योतिरुदयनः षडहो भवति यथाख्यान मितरदिति तत्र यान्येकाहिकानि द्रव्याणि स्तोमान्वितानि तानि यानि षाडह्निकानि तन्त्रान्वितानि तानि यानि छन्दोभिकानि त्र्यान्तानि त्र्यस्ते त्रय इमे लोकसम्मास्ते लोकसम्मा स्त इमे बृहद्रथन्तरपृष्ठास्ते बृहद्रथन्तरपृष्ठा इमा इति रूपा छान्दस्यान्यायन्त्यपि च व्यावृत्ययानि स्वादिष्ठां प्रथमस्याह्न आर्भवीयां करोति या ह्येतस्याह्न आर्भवीया भवति न तस्या उत्तरे अधीमहे तस्याः प्रयवन्मापशरावय उत्तरे अधीयते तां ते कुर्वन्त्याभीशवं चतुर्थे नावमिकं कुर्यादिति धानञ्जय्यो व्यावृत्तये पृष्ठ्याभिप्लवयोश्चातुर्थिक मेवेति गौतम एकैतस्याह्नः स्वरविभक्तिर्भवतीति भवतीति ॥ २ ॥

अभीवर्ती ब्रह्मसाममिति तस्य स्तोत्रीयविधिर्यदितः समानं साम भवत्यन्योन्यः प्रगाथ इत्यत्थ न्तंनानात्वं

य आप्लुतं कुर्वते यथा दुग्धा मुपसीदे-देवं तदिति प्रयुक्तप्रतिषिधस्तस्यान्ववायः पञ्चसु मासु बार्हताः आप्यन्त इत्यथातेः प्रगाथायतानि चतुःशत मैन्द्रा-बार्हताः प्रगाथा दशतयीषु तान्त्समामनेत्तेषां चत्वा-रोऽन्यचस्थाना बृहद्रथन्तरकालेयस्तोत्त्रीया अहरहः शस्यन्त इन्द्रक्रतुरौत्तरपचिकः शत मतिशिष्यते तेषा मेकं चतुर्विंशे कुर्यान्नून शत मतिशिष्यते सप्ता-शीतिः सतोबृहत्यस्त एकेन न त्रिंशत्सात्तोबार्हता-स्तचास्तेषा मिवैकविंशति माहरति तद्विंशति-शतं सम्पद्यते विंशतिशतं पञ्चानां मासानां माभि-प्लविकान्यहानि भवन्ति तेष्वेतान् प्रगाथान् प्रयुञ्जीत तृतीयेऽहनि सतोबृहतीः कुर्वन् य एष पञ्चमस्य मासस्योत्तमोऽभिप्लवस्तस्मिन् द्वे सतोबृहतीः कुर्यात् तृतीयपञ्चमयो रह्नोर्न हि प्रगाथा अनुभवन्तीति तत ऊर्ध्वं छन्दसी संयुञ्ज्यादीर्घ्याहे तृच एकां गायत्री मुपदध्यात्सतोबृहत्यतिशेषं समाप्येति गौतमोऽष्टौ सातोबार्हतास्तृचा अतिशिष्यन्ते तान् प्रथमे चाभि-प्लवे कृत्वा द्वितीयस्य द्व्यहे तत ऊर्ध्वं छन्दसी संयुञ्ज्या-दिति चतुरुत्तरैरेव छन्दोभिरेतव्य मिति गायत्रीं चतुर्विंशे ऽभीवर्त्तं कुर्यादुष्णिहि प्रथमं चाभिप्लविके

ऽनुष्टुभि द्वितीये तत ऊर्ध्वं बृहत्या पञ्चमासं हुत्वा य एष पञ्चमस्य मासस्योत्तमोऽभिप्लवस्तस्य पञ्चमेऽहनि पङ्क्तीः कुर्यादपि वा षष्ठे तत ऊर्ध्वं त्रिष्टुब्भ्युत्तमे स्वरसाम्नि जगत्या मित्यत्रापि सातोबृहत्यतिशेषं समाप्येत्येवं गौतमो नव सातोबार्हतास्तृचा अतिशिष्यन्ते द्वौ च प्रगाथौ तान्प्रथमे चाभिप्लवे कृत्वा द्वितीयस्य च पञ्चाहे पङ्क्तीः षष्ठे तत ऊर्ध्वं त्रिष्टुब्भ्युत्तमे स्वरसाम्नि जगत्या मिति ॥ ३ ॥

छन्दःसंयोगरूपोऽयं विधिस्तत्स्थाने चानुक्तत्वं मासशब्दवैयर्थ्य मिति चेत् पञ्चसु मास्स्विति यथा पृष्ठ्यायनेऽपवादस्तु लिङ्गेन रुद्रागावतीवन्न च सामान्तरये तत् कमास्तोत्रैकदेशे यथा कालक्रान्तौ लोके कृत मिति बृहत्या चैव त्रिष्टुभा चैतव्य मिति त्रिष्टुभि चतुर्विंशे ऽभीवर्त्तं कुर्याद् बृहत्यां प्रथम आभिप्लविकेऽपि च बृहत्या मेव चतुर्विंशे बृहत्यां प्रथम आभिप्लविके त्रिष्टुभि द्वितीय एव मनुपूर्वं छन्दसोः प्रयोगो भवतीति तत ऊर्ध्वं व्यत्यस्येद् बृहतोच्चयं एव तन्मन्य इति यौरिचवृत्तिर्बृहत्या पञ्चमासं हुत्वा य एते ऽष्टौ सातोबार्हतास्तृचा अतिशिष्यन्ते ये चैते चयाऽन्यंचस्थाना बृहद्रथन्तरकालेयस्तोत्रीयास्तैः षष्ठे

मासि त्रैष्टुभे व्यत्येयेद्यदहः कालेयस्तोत्रीये ऽभी-
वर्त्तं कुर्यात् तरणिरित्सिषासतीति कालेय मा-
सञ्चाराद् यदहो रथन्तरञ्च बृहत्स्तोत्रीये रथन्तरꣳ
स्यादपि वा स्वरसाम्नोरन्यतरस्मिन् रथन्तरस्तोत्रीयं
कुर्यादच्च स्वनयासु रथन्तरं भवतीत्यथ त्रयस्त्रिꣳशत्
प्रगाथ मेकं चतुर्विꣳशे कुर्यात् सातोत्राहेति त्रय-
स्त्रिꣳशायने ऽभिप्रयुञ्जीता ऽपि वा न सतोबृहती-
राद्रियेत य एव चतुर्विꣳशे त मनुसꣳहरेदिति ॥ ४ ॥

एतेनैवोत्तराणि द्व्यहानि व्याख्यातान्या द्विप्र-
गाथाद्यथाकारी पुरस्तात् प्रगाथान्स्यात्तथोपरिष्टा-
दिन्द्रक्रतौ सामानि प्रतिकल्पयेत् तावन्ति तच्छन्द-
स्यानि निधनवन्ति यदि तच्छन्दस्यानि न विद्यो-
रन्नपि छन्दसानि कुर्याद्यान्त्राभिरूपाणि स्युरिति-
तञ्च निधनतञ्च कतम एषां कल्प इति प्रथमौ
प्रतिषिद्धावित्याङ्गरथंतरे सर्वे कल्पा अपि वा द्विप्र-
गाथ मेव कल्पꣳ स्याद्दोषदर्शी नून पूर्वानत्यक्रमी-
दिति ते कस्य हेतोः षट्प्रगाथं मन्यन्ते समारभ्यन्त-
त्तीति नेदꣳ षट्प्रगाथ मिति शाण्डिल्यायनो यः
षट्प्रगाथं चिकीर्षेन्न सतोबृहतीरादृयेतापि य एव
चतुर्विꣳशे त मनुसꣳहरेदिति स खल्वय मभीवर्त्तः

षट्प्रगाथाननधितिष्ठति पूर्वस्मिन् पञ्चसिद्धेश्च सतो-बृहतीरेव मेवैन्द्रक्रतुरुत्तरे पञ्च प्रगाथिकानि द्वे सतोबार्हते विकर्णं मष्टम मेव मनयोः समाधि-रित्यथैतत्सुत्रानं मौष्णिह मां विषुवतः सर्वत्र पृष्ठ्यपञ्चाहवर्जं मतिरात्राच्चायथाकामकल्पात्यादे-तेषा मंकां तदभिप्लवस्य राथन्तरेष्वहस्सुविचार्यते पृष्ठे चैव मिव षडहे नाना स्वर्गिधनानि भविष्य-न्तीति पृष्ठ्या मेव छिन्दन् व्यूहेत् समूहेदिति व्यूढः स्यादिति शाण्डिल्यायन एव मत्स्यर्षिदर्शनं भव-त्यथापेरवं पुराणमाचार्यवच इति समूढः स्यादिति धानञ्जय्य एष न्याय एवं हि ज्योतिष्टोम एवं दश-रात्रस्य प्रथमस्त्र्यह एवं दशम मेव महोनैकाहा इत्यथापि समूढ एव पूर्व उत्पन्नो ऽपरो व्यूढ एवं च रहस्यब्राह्मणे दर्शयत्येव मिव ब्राह्मणं भवति छन्दांसि वा अन्योन्यस्य लोके मभ्यध्यायन्नित्युत्पन्नस्य लोको नाम भवति ॥ ५ ॥

अथाप्रि विलुप्तो व्यूढः षडहेन हि त्रिष्टुभः प्रतिपन्नां लभते न जगत्यो माध्यन्दिनान्ताश्च गायत्र्य आर्भवान्तान् यच्चैवं खल्वेसच्छन्दांसि विप्रच्युत्य दशमे ऽहनि सम्प्रकल्पन्ते तत एव व्यूहः सिध्यतीति

तद्धैतेयमिव ब्राह्मणं भवति नेत्ते छन्दोमेभ्यः पृष्ठो बृहन्मानश्च इत्यथापि समूढेन षडहेन सम्प्रयुक्तो भवतीति तस्यैके प्रत्नवद्बहिष्पवमानं कुर्वन्ति न ह्येता बृहत्कारितां इति नवाहयोगा इमा भवन्तीति धानञ्जय्यः कथमसमापयिष्यन्नवाहं नवाहयोगाः कुर्यादिति तत्र नित्या वुपपन्नौ कविमानभिप्लवन्याये न पार्थं द्वितीयस्य माध्यन्दिनान्त्य मभिप्लवन्यायेन नित्याभिः समूहति नित्योऽयं षडह इति तत्र तान्येव सामूहिकानि यान्यभिप्लवे अनिरुक्तान्येव मेवै तदन्यत्तदेतत्स्वयोनिकामः कारयन्तीति कथं पृष्ठेऽभीवर्त्त इत्यकर्त्तव्य इति शौचिवृक्षिः पञ्चसु मासु बार्हताः प्रगाथा आप्यन्त इत्येते पृष्ठादेवैषाम्भिः सिध्यतीति कर्त्तव्य इति गौतमो यत्सामावसृजेयुरेव स्वर्गाल्लोकात्पद्योरन्निति हि भवतीति पृष्ठ्यो वा यदेतत् सतोऽवादीन्न ह्येनं की च माभिप्लवाच्चेग्रावयन्तीति तं खलु बृहतीषु कालेयद्वितीय मनुकल्पयामः सन्तानरूप मस्मिन् भवतीति अथ मभिजितीत्यकर्त्तव्य इति शौचिवृक्षिः कर्त्तव्य इत्येव गौतमस्तत्पृष्ठ्येनैव व्याख्यातः मथाप्येष एवं क्रम एवैकाह आगच्छत्यभीवर्त्तमध्यन्दिन इत्यभीवर्त्तमध्यन्दिन इति ॥ ६ ॥

अथैते स्वरसामानस्तानग्निष्टोमानाहु नवाहकारिणः कुर्युरुक्थ्यानेकविंशत्यहकारिणो योऽन्यथा कुर्यादकुशलः पुरुष इति ब्रियादथैषां पृष्ठ्योत्तरीया आनुष्टुभा एकबृहतीका अनुष्टुभौ पूर्वे राथन्तरयोर्बृहत्युत्तमेत्येतदेव विपरीतं द्वितीये चतुर्ऋचं तृतीयस्य भवति तासां तृतीया मुहृत्य चतुर्थीं तृतीयां कुर्म एषा बृहती भवतीत्यथ यत्रासु षोडशिसाम भवति सर्वास्तत्रानुष्टुभो भवन्ति यत्र खलु बृहद्रथन्तरे ते करोति स्वराणामेव पृष्ठत्वे तिष्ठमानोऽथ स्वराण्यानुष्टुभान्यनुष्टुप्स्विति तत्र यान्यैकाहिकानि द्रव्याणि पृष्ठान्वितानि तानि यानि षाडहिकानि तत्रान्वितानि तानि यानि छन्दोमिकान्यभिप्लव एव तानि व्याख्यातानि सुब्रह्मण्यवैष्टम्भं प्रथमेऽहनि करोति दिगनुग्रहायादितः मच स्वरं भवति तेन प्रच्युतं हि वं तृतीयेऽहन्यनुगृह्णाति पञ्चसोः सन्तानाय विकल्पयन्त्यथ ऽनुष्टुभौ मध्ये निधनान्यैडान्यनुजिघृक्षन्तः स खलु विकल्पयन्स्वाराण्यन्यानि कुर्यादविकल्पयन्नैडानि विकल्पयन्तीति हैके विकल्पयन्तश्चैडान्येव कुर्वन्ति तृतीयसवनस्याञ्चेण द्विकल्पयंस्त्वेव स्वाराण्यन्यानि कुर्यादविकल्पयन्नैडानि

वसिष्ठश्च प्रियं चतुर्थाद्यायान्तर्यात् प्रत्याहरति तेरश्चं वेति विचारयन्त्युद्दण्ङ्यीयबाध सिद्दानुग्रहणात्यामष्ठीयवं द्वितीयात् प्रच्युतं तृतीये ऽहन्यनुग्रहणात्यत्र स्वयोनि भवतीति॥ ७ ॥

अथैष विषुवाऽस्तत्र खलु बृहद्रथन्तरे करोति शुक्रियाणां मेव पृष्ठत्वे तिष्ठमानो ऽथापि स्वर्गौक्तो विषुवाऽस्तत्र स्वर्गौक्ते बृहद्रथन्तरे अचिकीर्षीत्ते यत्पवमानयोर्निदधात्येतदेनयोरपयतोः स्थानं भवति ते यद् बृहत्यां चानुष्टुभि चैतौ नेदिष्ठिनौ चातुष्पदावाः वांपा विति तत्र खलु गोतन्त करोत्येतदन्ततन्त्रतं मन्त विधेयं भवति मध्यचरस्तच यान्यन्तलक्षणानि (मध्यलक्षणान्य-*) ज्योतिर्विधानि शान्तिविधानि शुक्रियसदृशान्यभिरूपाणि तान्यथ खल्वचानुष्टुभः प्रतिपदः करोति यथैतद् ब्राह्मणमुपवतीं वयं परमे ऽहनि परमां प्रतिपदं कुर्मो यान्यन्यानि बृहद्रथन्तराभ्यां पृष्ठानीति ह स्माह शाण्डिल्यायन उपवत्येव तेषां कुशलेनोपोह्य तानि बृहद्रथन्तरे इत्यथापात्मोक्तो विषुवाऽस्त प्राणोक्त्या गरयत्रा प्रत्यपित्सोहान्तो ऽनादान्त मिति वा वातेनावातिरति माष-

* "क, पुस्तके नास्ति ऽयो मे विद्यते।

शरावयोऽग्निनिर्म्मथाय पवत इति शुङ्गास्तस्था उत्तरे उपवती चाग्नियत्रतो च तच्चैके नाभीवर्त्तं कुर्वन्ति मौर्न्नपञ्चिकोऽयं भवत्यथाप्येवं सुज्ञानेन समाधि-रिति मध्यन्दिनेऽयं कुर्म एव भिव ब्राह्मणं भवति तावुभौ विषुवति कार्याविति यद्देतत्सुज्ञानेन समा-धिरित्याभैत्र नरं तद्भवति नो पूर्वपञ्चिक्ष मूर्द्धं पृष्ठाद-चिकीर्षीत् ॥ ८ ॥

अथ खल्वाह त्रिष्टुब् जगतीषु भवतीति कथेदं ब्राह्मणं स्यादिति पृष्ठाग्निष्टोमसाम्नोरित्याहुरेते क-ल्पाख्याते भवत इत्यथाप्याहुस्त्रिष्टुभ एवेमा जगत्तङ्-संयो भवन्तीत्यथापत्राहुस्त्रैष्टुभजागतादेवेमाः सूक्ता-द्धाहृता भवन्तीत्यथाप्याहुर्जागत मेवाचैकं पदं भवती-त्यपि वा सम्प्रदं एव ब्राह्मणं स्यादपि वा योनि-वादश्च कर्मवादश्च स्याज्जागतं हि सत् त्रिष्टुप्सु क्रियत इति समसितथ्यन्त्रिष्टुब्जगतीमन्य इति कौत्सस्त्रिष्टुब्जगतीषु भवतीति सति किं मन्यत् समासादित्याकृत्ं पृष्ठे ऽभीवर्त्तलोके सामानि प्रतिकल्पयेदिति गौतम एवं च गत्त्सोः समाधिरपि चेयं स मा मेन्द्रक्रतुरनुगृह्णात इति तच्चैतेषा मेव चत्वारि यान्यभिप्लवे वासिष्ठा गौप्लवे च द्वितीयप्रथम-

योरह्नोः शुद्धाशुद्धीयं चेति विचारयन्ति शाण्डिल्य एतदक्षरणिधनं भवतीति नाद्रियेतेति, शौचिवृक्षि-स्तदभीवर्त्तेनैव व्याख्यात मथापि नित्यान्येवाभिरूप-तराणीतीन्द्रक्रतु मस्तूयमान मनुश्रꣳसयन्त्सामानि प्रतिकल्पयेदिति गौतमो जनित्वं विश्वजिति यानि पृष्ठेऽभीवर्त्तंल्लोके तानि दाशरात्रिके पृष्ठ्ये तेषां चत्वारि छन्दोमेषु यथाभागं यथापृष्ठं वा पौरुमीढं व्रतेन ज्ञात्रेण श्येतं वा तन्त्वज्ञात्रेणैवं वा खलु कुर्यान्न वाद्रियेतासाऽमा व मिन्द्र क्रतु मनुशꣳसयितु-मिति॥ ६ ॥

अथोप दशरात्रꣳ संभरतां पूर्वं पञ्चसि विचारो भवत्यतिरात्रचतुर्विꣳशे त्रीनभिप्लवान् पृष्ठ्य मिति कृत्वा पञ्चायनमासानुपेयुरभिजित् स्वरसाम्नो न त्रिꣳशत्तमा मुपसंभरन्त्यथैतं दशरात्र मेक आवर्त्त-यन्त्यावृत्तिसाधूत्तरं यज्ञ इति न वयं मावर्त्तयामो ऽनुपेतं पूर्वं पञ्चसि तं कस्मादावर्त्तयामेत्यथापि नियुक्त-मानसो भवति यद्यु हैव स्रुते मानसादावर्त्तयिष्यद्दशमं मानसं चरद् व्यवयिष्यद्यद्यु वै, सन्मानमं वृतं च मानसञ्च व्यवयिष्यदपि चाक्लृतेन दशरात्रेण मानस मध्यगायिष्यत्स काय हेतोरक्लृतेन व्रतेन मानस

मधि श्राययतीति व्रतसाम्बन्धात्प्राजापत्यं व्रतं प्राजापत्यं मनः सर्वाग्निव्रतꣳ सर्वाग्निमनस्तदपि शश्वत् सांवर्गजिता गौतमा उपरिष्टाद्व्रतस्य मानस मधीयते प्राकृतेन व्रतेन मानस मधिशेषयामेति सामान्यात्तु वय मनधिश्राययन्तो मन्यामहे ऽथैतान्यचिपयन्त्यहानीत्याचक्षते त्रिरात्र चतुर्विꣳशे नवाहद्वोश्चायुषी दशरात्रे व्रतात्त्रिरात्रे अन्तमगादनपक्रमगाद्वेत्यनपक्रमगाद्वेति ॥ १० ॥

अथातः संवत्सरा वर्गाणां पञ्च संवत्सरा वर्गास्तेषु धीरो मनीषया कर्मणा उपसदो विद्यात्सꣳस्थावेषु व्रतानि च षट्त्रिꣳशोनो नवोनश्च षडहोनो ऽथ सावनो ऽथाष्टादशभिर्ज्यायानहोभिः सावनात्परो नक्षत्र मिदं मासश्च तस्य चैव त्रयोदशी चान्द्रमसः सावनस्योभावथाष्टादश्युत्तमो ऽष्टासप्तत्रिꣳशतं पौर्णमास्यां प्रसाधयेद् गवामयनस्योपायꣳस्त्वसुरः प्रतिपादयेत् तेषां नक्षत्रः प्रथमस्तस्य सप्तविꣳशिनो मासाः सप्तविꣳशतिर्नक्षत्राणीति तस्य कल्पः प्रथमस्य प्रथमस्याभिप्लवस्य स्थाने त्रिवद्रूथवाहं कुर्यात्प्राग्विषुवत उत्तमस्योत्तमस्योर्ध्वं विषुवतस्ते खल्वभिप्लवतस्त्व एव क्लृप्ताः स्युरित्येक एते चेहाधिकृता न चापि नित्र-

र्यत्यथापि दृश्यते चाहस्त्राहतन्त्रे कृष्णो यथा स्वरसामानश्चिकद्रुकपञ्चाहश्चाभिप्लवतन्त्रे सप्तदशरात्रे स्वरतन्त्रा इत्यपर मेवञ्च तन्त्राविलोपोऽपि च सूत्रेषु त्रिकद्रुकत्र्याहः स्वतन्त्रो भवत्यथ नवोनस्तथैवं त्रयोदश मासाः सम्भार्ययोर्मासयोर्नवाहं लुम्पेच्चतुरह मेव प्राग्विषुवतः पञ्चाह मूर्द्धं तस्य कल्पः प्रथमस्याभिप्लवस्य स्थाने ज्योतिषं च गां च कुर्यात्प्राग् विषुवत ऊर्द्धं विषुवत उत्तमस्याभिप्लवस्य स्थाने ज्योतिषं नात्र त्रिषुवानभिभवत्यन्तरेऽत्र पञ्चसि विषुवानुपसङ्ख्यायत इत्यथ षड्मासाश्चान्द्रमसाः षट् पूर्णोपक्रमा ऊनावसानाः पूर्वे पञ्चसि मासाः त्र्यूनोपक्रमाः पूर्णावसाना उत्तरे तस्य कल्पः प्रथमस्य प्रथमस्याभिप्लवस्य स्थानेऽभिप्लवपञ्चाहं कुर्यात्प्राग्विषुवत ऊनेषु मासेषूत्तमस्योत्तमस्योर्द्धं विषुवतः ॥ ११ ॥

व्याख्यातः सत्त्रवत्सः स एष आदित्यसंवत्सरो नात्र आदित्यः खलु भवदेतावद्भिरहोभिर्नक्षत्राणि समवैति त्रयोदशाहं त्रयोदशाह मेकैक नक्षत्र मुपतिष्ठत्यहस्तृतीयं च नवधाकृतयोरहोरात्रयोर्द्वे कले चेति सांवत्सरास्तास्तुषञ्चाशत कलान्ते षणानवगाः स अष्टषष्टित्रिंशतः षष्टित्रिंशते

श्लोकौ भवतः सप्तविंशती राष्ट्रस्य राज्ञो वसन्तयो मितास्त्रयोदशाह त्रयोदशाह मेकैकं नक्षत्र मुपतिष्ठति त्रयोदशाहानि तृतीय मक्रमं तस्मात्रेधा दशतयो विकुर्वं स्त्रिधैवं पन्थानं विततं पुराणं चत्वारिंशता नवरात्रैः समस्नुत इत्यथाष्टादशभिर्ज्यायानादित्यसंवत्सर एव तैर्गयनिको भवत्यादित्यः खलु शश्वदेकदा अथमासानुदङ्ङेति नव चाहानि तथा दक्षिणा तदप्येते श्लोका भवन्ति यस्मिन्वै परिवत्सरे सौर्यो मासो ऽथ चान्द्रमो नाक्षत्रो न विलुप्यते कः स्वित्तं वेद कः स्विदष्टासप्तति स्त्रिंशति तस्मिन्संवत्सरे मिते सौर्यो मासो ऽथ चान्द्रमसो नाक्षत्रो न विलुप्यते सप्तविंशति मेवैषं सप्ताहानेति दक्षिणा तथोदङ् सप्तविंशति मिति तत्र कल्पः सत्त्वार्ययोर्मासयोरष्टादशाहान्युपाहरेन्नवाह मेव प्राग्विषुवतो नवाह मूर्ध्वं त्रिकद्रुकांश्चाभिप्लवं च प्राग्विषुवतो ऽभिप्लवञ्च त्रिकद्रुकांश्चावृत्तानूर्ध्वं विषुवतः ॥ १२ ॥

कथं मनाहिताग्नेः सत्रासनं मिति न विद्यत इति शाण्डिल्यायनः सर्वं इष्टप्रथमयज्ञाः पृथक् सर्वोपकरणानीष्ट्वा समापयाग्नीन्त्सत्र मासिरवोदवसानीयान्तान्त्विजो कृत्वा पृथक् पश्चिममनीयैर्यजेरन्निति

नो.विधानं यथा त्विद मह्यं सचिणो भवन्त्यहीन-
याजका इमे कृष्णाजिनकण्ठा भवन्त्यथापिं यः सत्रे
करणाद्यजमानी मन्येतापि नूनं सो ऽहीनैकाहेष्वपि
यजमानो मन्येत तत्र ह्यपि करोतीति यद्यु वै यज-
मानशब्दाद्यजमानो मन्येतापि नूनं ये यंजामह
इतीष्टिपशुबन्धेष्वपि यजमानो मन्येत तत्र ह्यपि
करोतीत्यथाप्याह य एतेनानिष्ट्वेति तदेतदनाहि-
ताग्नौ साधिष्ठ मुप पद्यत इति विद्यात इत्यपरं मेवं
च समारम्भोऽपि चैवं सूत्राणि भवन्ति स्थालीपाकैरना-
हिताग्नयो यजेरन्नित्यथापि हश्यते परांग्निष्विज्या
यथा पुरोहितस्याग्निभिरव मनु चरन्तीति तदपि
शश्वद् ब्राह्मणं भवति यथा पररथेनाध्वानं मियादेव
मेष स्वर्गं लोक मप्येति यः पराग्निषु दीक्षित इत्य-
थापि ब्राह्मणं भवति तेषां ये पुरोडाशिनः स्युरपि
ह्यपुरोडाशिनो भवन्तीतीवार्थौ भवत्येतेनानाहिता-
ग्नीनां सत्रासन मुक्त मथापि ब्राह्मणं मेव भवति
तेषां ये पुरस्ताद्दीक्षिताः स्युर्येद्य तेषां गृहपति-
रित्यपि ह्यदीक्षिता एव भवन्तीतीवार्थौ भवत्येते-
नानिष्टप्रथमयज्ञानां सत्रासन मुक्तम् ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे पञ्चमः प्रपाठकः ॥

॥ अथ षष्ठः प्रपाठकः ॥

अथापि समाहारसिद्धि सत्रं भवति तदेतत् संसहृप मग्नयस्तत्र द्रव्याणि च मन्त्रेवेय मित्यथ यथै- तच्छाण्डिल्यायनायगृहपतिस्तथा विगृह्णीते ऽथ कः पृष्ठशमनीयः स्यादिति यथाकामी पथ्यानां दक्षिणा- वता मिति कार्षगण्यो ऽनारभ्य वदति तस्मादुदवसाय दक्षिणावता यजेतेत्यथापि पृष्ठशमनीयं नाम क्रतु मधीमहे ऽथापि सारस्वतस्येष्टिरेव पृष्ठशमनीया भवति तथा दार्षद्वतसौरयोरिष्टिर्वा पशुर्वेति ज्योतिष्टोम इत्यपर मनादेशे कं मन्यं प्रतीया मथाप्याह यामि- तद्दक्षिणेव स्यादेष एव कार्य इत्यमितदक्षिणा उ खलु पृष्ठशमनीयो भवत्यथाप्येष सत्राणा माद्यन्तेषु दृष्टो भवत्येय मु खल्वन्ततम इत्यथापेऽध उच्चावचाना माहाराणा मन्तेषु दृष्टो भवति यथा चातुर्मास्येषु वाज- पेये राजसूये संदंश-वक्र्योरिति यद्वेतत् सारस्वते दार्षद्वतसौरयोरितीष्टिप्रायः स भवति सुत्याप्राये तु ज्योतिष्टोम एवाभिरूपतर इति तदपि शश्वद् ब्राह्मणं भवति तस्मादुदवसाय ज्योतिष्टोमेनाग्नि- ष्टोमेन रथन्तरपृष्ठेन सहस्रदक्षिणेन पृष्ठशमनीयेन यजेतेति यजेतेति ॥ १ ॥

अथात एकाहास्तेषां यानि ज्योतिष्टोमानि द्रव्याणि नित्यानि तानि यान्यन्यान्युक्थान्वयानि तानि बृहत्पृष्ठेष्वन्यत् तत्र करोति बृहदेकाहेषु स्थानवच्चिकीर्षन्नर्थे प्रत्नां माध्यन्दिनीया मेषा सङ्कल्पिता बृहतेति यस्तेमदां मार्भवीया मेषा बार्हता दृक्च इत्यथ यत्र सार्थिश्चिकीर्षा * भवति परिस्वानां तत्रार्भवीयां करोति तदाहुः परिस्वानैवैतस्य तन्त्रस्य पुरार्भवीया बभूव ताᳪ सानुर्वीराहिरप्निनाया-षडहमात्रो भवतीति सैषा तयोर्वाक्सᳪहिता प्रोच्यते ऽतो यान्यन्यानि द्रव्याणि बार्हतलिङ्गानि वृतानि भवन्ति बार्हतेभ्यो बाह्योभ्यो ऽयᳪ सोम इति माध्यन्दिनान्तीया बार्हतलिङ्गा सूर्यवत्य आर्भवान्तीया दशमादन्तान्विता अन्ते हि बार्हत्पृष्ठ सित्येतङ्गोस्तञ्च मित्याचक्षते ऽथ यत्र ज्योतिष्टोमे तन्त्रे बृहत्पृष्ठं तद्राजयज्ञेषु वृषा शोणा भवति वृषा हि राजेति व्रात्यस्तोमानां च ज्येष्ठयज्ञे राजजातीयत्वा-देवैतस्मिन्नेवं तन्त्रे बृहत्पृष्ठे सूर्यवत्यो न चैकस्तोम-विलोप उत्तमादा पृष्ठादार्भवे स्तोमं प्रत्यवरोहः प्राग् ज्योतिष्टोमविचारेभ्य एतयोस्तन्त्रयोः समास उभय-

* "शाश्वी चिकीर्षा"—इति ख।

सामतन्त्र मित्याचक्षते प्रतिलोम मग्निष्टोमेष्वनु-
लोम मुक्थ्येष्वग्निष्टोमभक्तिर्हि स्वादिष्टोक्थ्या भक्ति-
र्यत्ते मदाथ यचैकर्चौ माध्यन्दिनीया भवन्तीन्द्रा-
येन्दो मरुत्वत इति तत्र कारोत्त्येषा सामान्या तृच-
प्रथमा मरुत्वतीत्यथ यत्रान्ये माध्यन्दिनीयार्भवीये
भवतः कल्पसप्रायाणि च द्रव्याणि तदाशीस्तन्त्र
मित्याचक्षते ऽथ यत्तदभिवादि द्रव्यं भवति यत्काम:
क्रतुस्तत्कल्पसप्राय मित्याचक्षते तदेतत् सार्वक्रतु-
कम् ॥ २ ॥

अथैतानि बृहद्रथन्तरयोर्विभक्तानि स्थानान्यपी-
तरेतरस्य तन्त्र गच्छतो: प्रतिपदाज्यानि ब्रह्मसा-
मोष्णिह मित्यभीवर्त्तस्तु राजयज्ञेषु भ्रातृव्यस्याभि-
वृत्त्यै भ्रातृव्यवान् हि राजेति यत्र वोभयसामा सन्
रथन्तरपृष्ठोमा नौधसेन बृहतः प्रत्याहारो ऽभूदितीव
यत्र वा प्रजापतिप्रवाद एकार्त्तरेणिधन एक: प्रजा-
पति रिति यत्र वाहर्गणस्य नाना ब्रह्मसामानि
चिकीर्षति तत् प्रथमे ऽहनि करोत्यक्षरणिधनानां *
प्रथम मायतन मिति श्रायन्तीयं प्रायश्चित्तार्थेनैव
भवत्यथ यत्र नाग्निष्टोमसाम भवति तद्यज्ञायज्ञीय

* "करोति पञ्चाक्षरणिधनानां"-इति ख ।

मनुष्टुभि भवत्येष नेदिष्ठे चतुष्पदं भावाप इत्यथ यत्र श्यावाश्वं प्रच्यवते तद्रथन्तरपृष्ठेषु. श्रुध्यं निहवानुग्रहाय व्रात्यस्तोमेषु च व्रात्यानां मुपहवायाथ यत्र स्तोमप्रत्यवरोहस्तद् बृहत्पृष्ठेषु पौष्कलं रोहद्दर्शनं श्रुध्यं स्तोमप्रत्यवरोहे न चिकीर्षति विषमेषु स्तोमेष्वभि सोमा राथन्तरेषु परीतः बार्हतेष्वेते राथन्तरीबार्हत्याविति तत्र गोआयुषोऽह्नं चतुर्ऋचर्त्थं कुर्वन्ति भाल्लविनश्चतुरस्तृचैकर्चान् व्यत्यासेन कालबविनोऽध्यास्यायां त्वेवैकर्चावद एकस्यां प्रथमायामंहस्तिसृषु परास्वदंष्ट्रिसृषु पूर्वास्वदो ऽध्यास्यायामिति शाण्डिल्यायनिनस्तृचप्रथमायां पय मेकर्चं कृत्वा तस्मिन्नेव तृचे द्वे तृचस्थे अध्यास्याया मन्तत एकर्चं ताण्शभकर्णः कृत्वाचयत इतरथो अनध्यास्यायां मध्य एकर्चाविभितस्तृचौ यथैतदग्निष्टुत्पृषभ इति ॥ ३ ॥

विभक्तावुक्थप्रभावो प्रंमंहिष्ठीयवन्ति राथन्तरेषु साकमश्वमन्ति बार्हतेषूद्वंशीयान्तान्युभयेषां पक्षानुग्रहायाथ यत्र चतुर्थो भागः प्रत्युपधीते नामेधं वा नामेधसदृशं वोक्थान्तेषु चिकीर्षितं भवत्यथैतौ विश्वजिदभिजितौ पृष्ठ्यपृष्ठेत्र स्तोमयोरन्तश्च वेति शाण्डिल्यः पृष्ठ्यस्तोमश्चाभिजितपृष्ठश्च विश्वजित्-

पृष्ठ्यदशरात्रयो रित्येक एतेनैवानुपूर्व्येण बृहद्रथ-न्तरपृष्ठ मभिजितं पृष्ठस्तोमन्यायेन रथन्तर मग्नि-ष्टोमसाम रथन्तरंभक्ति रयं भवति पूर्वत्वात् तद्बृह-तानाध्यशिशायर्थिषीज्ज्योतिष्टोमतंन्त्रपूर्वत्वात्तचया-न्यभिवन्त्यभिरूपाणि तानि जितिप्रवादान्युभयो रभि-जितोऽतिरात्रौ भवतो ब्राह्मण आज्य मुद्धरत्या-भस्तोत्रीयं मानसञ्चर मिति सञ्चारये दिति धान-ञ्जय्यः कि हि यो ऽह्नो रात्रि मुपसञ्चारये दिति न सञ्चारये दिति गौतमो ऽसञ्चारकुशला यज्ञा भवन्ति तच्चैतत् करोत्यभि प्र गोपतिं गिरेत्यभिवतः स्थाने ऽभिवन्तुत्तान मुष्णिहि रथन्तरभक्तित्वान्न अध्यं चिकीर्षति नो पौष्कलं बृहति पृष्ठे तच्चैतत् करोत्युभयभक्ति मिश्रणिधनं सर्वपृष्ठं विश्वजितं रथ-न्तरं मध्यन्दिने बृहदग्निष्टोमसामैव मिव ब्राह्मणं भवति यद्रथन्तरं प्रथमं बृहदुत्तमं मध्य इतरा-णीति ॥ ४ ॥

वैराजं होतृषामैतद् बृहत्परोक्ष मेतच्चैषा मेक-निधन मेकनिधनानि होतृसामानि भवन्ति महा-नाम्नीमैत्रावरुणसामैता अवुक्ता वामदेव्यस्थाने ऽभि-रूपा वैरूपं ब्रह्मसामैतत्सर्वं बृहतीषु सर्वबृहतीप्रायाणि

ब्रह्मसामान्येवं च स्वस्तोमानि भवन्ति रेवतीष्वकावा-
कसाम स्वस्तोमा मप्रवादाहाय गायत्रीष्वग्निष्टोम-
सामैव मिव ब्राह्मणं भवति यद्गायत्र्यो भवन्ति तेना-
यतनान्न च्यवन्त इति तासा मेकविंशत्यचरा प्रथमा
तेनैकविंशान्न च्यवन्ते कथं धर्मा इत्यकर्त्तव्या
इत्येके स्वस्थानानि हि भवन्ति स्थानस्थाधर्मा इति
कर्त्तव्या इत्याचार्य्याः संयुक्तानि भवन्ति संयुक्तधर्मा
इम इत्यथापि कृत्स्नाग्वितान्यधर्माःसान्धंकतराणि
भविष्यन्तीत्यथापि शिथिलानि परोक्षपृष्ठानि तेषां
धर्मकरणेन दृढीभावो भविष्यतीत्यथाप्यस्वस्थानानि
तेषां धर्मकरणेन स्वस्थानानीति चिकीर्षा स्यादित्य-
थापि विश्वजित्कल्प इत्याचक्षते धर्माणा मेतद्रा-
क्लृप्तानीत्यथापि सप्तमे ऽलोपो लोपान्न्याय्यतर
इति न्याय्यतर इति ॥ ५ ॥

अथ मङ्गभूतस्य पक्षिवासां इति कर्त्तव्या इत्येके
विहिता अप्रतिषिद्धा भवन्तीत्यथापेताः पृष्ठधर्माः समा-
धिरित्यकर्त्तव्या इत्यपरं सर्ववेदसंयुक्तास्ते भव-
न्त्यपि चैते खल्वङ्गभूताः सर्ववेदसमिति तं खल्वेते
धर्मा एतस्मिन्नेव द्वादशाहे स्युरिति गौतमोऽत्र हि
संवत्सराणि वदतीत्यूर्द्धं द्वादशाहात् सांवत्सरिका-

णीति धानञ्जय्यः कामं तु कवी द्वादशाहिकी स्यादिति वाहतं तच्च बृहद्रथन्तरवाद्यग्न कालेयं प्रच्यवते ऽनुजिघृक्षितं तत्र भवति तद्यन्मध्यन्दिने ऽच्छावाक स्वच्छन्द इति सत्रासाहीये ककुभि सोढवन्नामाजिति नामास्तिति भवति सफश्चैवा यद्यतिरात्र इति तु भवत्यतिरात्रः स कृत्स्नीभवति तस्मात्सफीभवतः सफं वा विच्यावयिषीत्तदेक उक्थप्रगाथे कुर्वन्ति सोढवन्नाम मा प्रच्योष्टेति पिपीलिकमध्यां करोति दशरात्रन्यायेन तां नित्यायाः पुरस्तान्निदधात्येवं पथ्यावसान मिति तद्यत्र गर्गो चिकीर्षी वा प्रज्ञातकामो * नैव मेवैवतस्मिन्नस्थाने भवति तत्र वामदेव्यं पृष्ठेभ्यः प्रच्युत मनुगृह्णाति वामदेव्यभक्तिन्यहन्युत्पन्नेति वारवन्तीयं सर्वपृष्ठेषु चिकीर्षितं रेवतीसंयोगात् तद्यत् द्विपदासु द्विपदा भक्तिन्यहन्युत्पन्न मित्यनुतन्न मुक्थप्रगाथौ नाना क्रोडग्निसामनी करोति नानात्वर्थो नान्तर मभिजितीत्येतस्य पूर्वाभ्यर्थेनेति ॥ ६ ॥

अथ व्रतस्य स्तोत्रप्रदेशः पञ्चविंशतिस्तोमाः पञ्चकृत्वः पदं पञ्चकृत्वः पूर्वा देवता पञ्चकृत्व

---

* "प्रजापतिकामो" इति ख ।

उत्तरा ऽआप्याहुर्व्यंवस्तोभेत्यदद्दैवत मेवꣳ समाधिः पदद्दैवतस्येत्येते वापि दैवते व्यवस्तोभेदित्येक एवꣳ समाधिर्दैवतयो रित्येवे वाप्याहुर्दैवते व्यंवस्तोभेदिति. शाण्डिल्यो ऽथ कालबविनो यथासमाम्नाय मेवं, कुर्वन्त्येतत्त्वेषां लघिष्ठ मपि च यान्यनुपदस्तुब्धा ऽथा- न्यादर्शयंति तेषा मुभयत स्तोभाब्धसर्क्षन्निगद्म एवास्य पुरस्तात्स्तोभा भवन्ति यत्त्वेव प्रथम मवोचाम. तत् कर्म ते खलु यश्चंदेक आत्मना प्रतिपद्यन्त आत्म- सत्तमान्यङ्गानीति शिरसा वयꣳ शिरो वा अग्ने सम्भवतः सम्भवतीति भवत्यथैवं शिरसा स्तुत्वाथ दक्षिणेन पक्षेणाथात्मनाथोत्तरेणाथ पुच्छेनैकं मध्य आत्मा भवतीत्यथापीके शिरसा स्तुत्वाथात्मनाथ पक्षाभ्या मथ पुच्छेनैवꣳ सम्यक् शिरस्थानकं च भवतीत्यथैते शिरसा स्तुत्वा ऽथ पक्षाभ्या मथा- त्मना ऽथ पुच्छेनैव मिवाङ्गाना मानुपूर्व्य मित्यथ यथै- तद्विहृत्य स्तवते तद्वदय मेतद् ब्राह्मणवदित्यृश्यस्य साम्नि किं प्रत्यक्षं किं परोक्ष मिति कश्च प्रत्यक्ष द्राघितं परोक्ष मपि वेन्द्रेति प्रत्यक्ष मिन्द्र इति परोक्ष मपि वा यथायाम एतदङ्ग माचष्टे तत् प्रत्यक्षं तथैषां स्तुतिः श्यात्तत्सर मिव ते पायुरक्षंजु:

रनास्कन्धः इति यथासमाम्नाय मेवोपेयुरेवं मित्र
भ्राह्मणं भवति यद्वै मनुष्याणां प्रत्यक्षं तद्देवानां
परोक्ष मथ यन्मनुष्याणां परोक्षं तद्देवानां प्रत्यक्ष
मिति तत् कुशलं यदस्मिन्नहनि दैवप्रत्यक्षं कुर्युः-
स्तत्र खलु गोस्तन्नं करोतोतदन्तं तन्वतर मन्तरार
मिदं भवति तत्र यो द्रव्यतिकारो निर्वाकार्थी न
भवत्यथापि प्राजापत्यं व्रत मनिरुक्तः प्रजापति रित्य-
थाप्यद्य स्तुतावान्यन्तोक्तं व्रत मिति स्तोम-
कल्पाय चतुर्ऋच माहरति तद्यदेतद् ब्रवं यवं नो
यास्यसीत्येतद्यवप्रवादं पुष्टिप्रवाद मन्नाद्यस्तुताव-
मन्नोक्ते ऽभिरूपं जराबोधीय मुभयसामसु चिकीर्षित
मुभयविधेरेवं हि भवति तदाग्नेययोन्यन्नाद्य स-
स्तावं मन्नोक्ते ऽभिरूप मैकाह्निकाद् व्रतात् पञ्च-
निधनं वामदेव्य मपनयति नाना मन्त्रा मतिमेद-
नायेति भवति तदेकाहे मोषपद्यते यज्ञसामान्या-
द्धीनेभ्यस्तत्र यौत मनुतन्व मा नो विश्वासु हव्य
मित्येतावद् ब्रह्मप्रवादा इतीदान्द मग्निष्टोमसाम
कुर्वन्तस्तृचे कुर्युरेष आवृत्तिन्याय इति दशसु दश-
स्तवरेष्वार्चिकान्यनुगानानेवं वैराजान्यनुगानानि
भविष्यन्तीति षडृचे सर्वस्मिन्नित्याचार्या अर्धर्चेष्वनु-

गानान्येव प्रसंरोधतरो गीताना मिति द्वादशार्चं इति शाण्डिल्यस्तवापराबाग्नेयौ तृचावाङ्गिरेरा ते अग्निं तं मन्य इत्येव मृग् दृष्टीन्यनुगानान्यृतु भविष्यन्तीति षडृचे तु कुर्वन्ति ये कुर्वन्त्यग्ने तव श्रवो वय इति चतुर्थ मेवानुगान तृचे स्यादिति वार्षगण्यो ऽत्र हि निधनवाद वदति वृत मिति भवति स्वरिति भवति शकुन इति भवतीति भक्तयश्च कल्पन्ते नाना सामवच्चैनान्येके ऽधीयत इति ॥ ७ ॥

अथ साहस्राग्निराज्ञाग्निं च वृताग्निं चोपकृतां एव मिव ब्राह्मणं भवति तत्र त्रयाणां सम्पद् ब्राह्मणचोदिता न उपकृता एते स्तोमा भवन्ति ब्राह्मणविहितांस्तृतीयस्योभे सामनी करोति वृतन्यायेन त्रिरात्रन्यायेन च व्याख्यातः मौभयं तन्त्रं पूर्वयोः पङ्क्तिषु ब्रह्मसाम यत् सहस्राक्षरासु ब्रह्मसामित्येव मक्षरसहस्रं सम्पद्यते बार्हतं तन्त्रं तृतीयस्योक्थ्यत्वादग्निं दूतं वृणीमह इत्युभयान्याज्यानीति तत्र पूर्वे बार्हते उत्तरे राथन्तरे इति शौचिवृक्षिरेवं समविभागो देवताना मित्येकदैवत्ये बार्हते द्विदैवत्ये रथन्तरे इति धानञ्जय्य एतदृङ्नयोः समन्वयतोः कुशल यदभ्यास इति व्याख्यातं स्वायन्तीय मपि

चैकादशाक्षरशतानि सम्पद्यन्ते तत्र नित्या सहस्र-सम्पन्मोक्ष मुकथ्येषु चिकीर्षित मुकथ्यदर्शनं चापि च त्र्यक्षरणिधनं त्रीण्युकथानीति सौभरं चैककुभं वेति विचारयन्ति नित्य मंहः सौभरं आय-न्तीयनियोगादुद्वंशीयनियोगाद्वा चैककुभ मिति त्रिरात्रविधेतम उत्तमस्त्रिरात्रिक्यः प्रतिपदस्वाज्यानि चैक मत्रिरात्रिक मिन्द्र मिद् गाथिनो बृहदिति तद्यत् करोति पृष्ठ मत्यविभाजयिषौज् ज्योतिष्टोम तन्त्रं विश्वंशाग्नेस्त्रिरात्र एतत् प्रतिष्ठा विधतरं तन्त्रयो रिति ककुभं माध्यन्दिन मुपाहरति तां मुपरिष्टाद्गायत्र्या निदधात्येव मिय ममुत्र गायत्र्या-नन्तर्हितेनेति तस्य स्थाने द्विपदां करोति पुरुष च्छन्दस इति सतोबृहतीं करोति त्रिरात्रन्यायेन तान्निधने वैरूपात् साक्षाद्रथन्तरं क्रियते सौभरं बृहतो वारव-न्तीयं रेवतीभ्यः पुरस्तान्निदधात्येवं पथ्यावसान मिति तद्यत्र गर्थाचिकीर्षा वा प्रजापतिकामो देव मेवैतानि छन्दांसि युज्यन्त आष्टमिकीस्त्रिष्टुभः करोत्येता रूपसम्पन्ना इति तत्र वामदेव्यं करो-त्येवं हि ब्राह्मणं वदति पवमानवान्ता वामदेव्य मिति स्वारं सौपर्णं मैत्रावरुण सामैतद् वाम-

देवासदृशं मपुरस्तात्स्तोभ मेव बहिःस्तारं यथा वामदेव्यम् ॥ ८ ॥

अथ सांद्यस्केषु याः सद्यः प्रवादा नव प्रवादाः प्रोक्तवत्यो जनइत्यंस्ता अभिरूपा अथ खल्वत्र पृष्ठान्यङ्गाश्चिकीर्षिता भवन्त्यां माभिमानितो य मृतुप्रत्ययानि पृष्ठानि परियाचनार्थानीति तानि यत्र साक्षाद्रूस्तोमान्यभविष्यंस्तथैवाकारवणं शक्वरीभ्यः प्रति वैष्टभवैरूपात्साक्षाद्रथन्तरं क्रियते सौभरं बृहतो वारवन्तीयं रेवतीभ्यः स्वाशिरामर्को वैराजांदाग्यास्य मुष्णिहि मध्यन्दिने स दक्षिणां प्रतिगृह्य विभ्रंशेव स तृतीयसवने प्रायश्चित्तिं चक्र इति कथ मुत्तरयोः साद्यस्कधर्मा इति कर्त्तव्या इत्येके साद्यस्कैश्चाभि परीतौ भवतो यदि चेमे कालसङ्कर्षाद्भवन्ति सङ्कृष्टकालाविमौ भवत इत्यकर्त्तव्या इत्यपरसाद्यस्कौ हि भवतो यदेतदभिपर्यायादिति सर्व एवासाद्यस्कैरभिपरीता भवन्ति यद्येतत्कालसङ्कर्षादित्युच्चावचाः कालविप्रकर्षा एकाहानां तदेवं बहु प्रसज्येतेति विश्वजिच्छिल्पे सामस्तोमे सति साध्यासां बृहतीं करोति कस्य हेतोरिति पुरस्तादापन्नानि वैश्वजितान्यविच्यावयिषन्नविच्यावयिषन् ॥ ९ ॥

जिघांसयंस्त उत्तरस्तृच या इत्तवत्यः क्रूराणि च सामान्यभिरूपाणि तानि त्रिकाण्याज्यपृष्ठानि करोत्येवं सुपराञ्चि भवन्ति वज्रोक्तं च पञ्चदश मभि सम्पद्यते चतुरः पञ्चदशामर्षा सोम द्युमत्तम इति माध्यन्दिनीयाहन्यहे भवन्तीति शाण्डिल्यायन ऋषभ्यृषेर्य्यर्थानुस्नातकाः कुर्वन्ति भागविलोपे चोत्पन्ना भवतीति पराचीषु रथन्तर मिति द्विपदोत्तरासु पराग् भवति ककुभावेवेति गौतमोऽनभिवर्त्तश्चैतद् ब्राह्मण मिति पवमाने रथन्तर मित्युद्धृत्य बार्हतानि स्यादष्टे ऽस्वपदस्तोभिः शाक्वरवर्णस्य त्रिणिधनानुग्र-हाय शक्वरीणां च पवमानान्त्यं वा रथन्तरं तज्जास्येव मिव ब्राह्मणं भवति यद्वै महावृत्तौ समृच्छेते बहु तव विभग्नं प्रभग्नं शेत इति यदा वा अजामि यौधाजयस्यामे दैर्घश्रवसं यदन्तरा सोमा यन्तीत्यु-परिष्टादनुद्वरन्वा बार्हतान्यनुकल्पयेत् तत्र पौरुमद्गं तृचसमाप्तये भ्रातृव्यवंश्यास्मिन् ब्राह्मणं दर्शयतीति यौधाजयापेतं वोत्सधमध्यं कृत्वा पवमानान्त्यं रथन्तरं माध्यौगवस्य निधिश्रो वृत्तिग्रहणात् वाम-देव्यं स्वचिं वाभिवदनार्थं इति धानञ्जय्यः प्लवश्चेद् ब्रह्मसाम स्यात् त्वमिन्द्र प्र० तूर्त्तिष्विंश्येताश्चेता

रूपसम्पन्ना इति श्यैतयोनौ वा बृहत्पृष्ठत्वादथैष एकत्रिकः प्रजापतीप्सा मुपक्रतस्तत्रैतावुत्सेधनिषेधौ प्राजापत्यादङ्गो निषेधो ब्रह्मसाम श्रायन्तीयश्च्यैषा श्विवत्रती प्रायश्चित्तकृतो ऽभिरूपेत्यतो यो द्रव्यविकारः प्रजापतीप्सया स भवति ॥ १० ॥

अथ व्रात्यस्तोमास्तत्र षोडश आग्निः स्तोमः स एष द्वात्रिंशो विकृतस्तं मच्छावाकसाम्नो निदधात्येतदानुष्टुभं स्थान मित्यनन्तरा द्वात्रिंशप्रयुक्ता भविष्यतीति पञ्चसानयोर्ज्योतिष्टोमानीतराणीति तत्रया वीर्यप्रवादा बलप्रवादा गणप्रवादा द्रविणप्रवादाः शुचिप्रवादा निषमावत्यः प्रचितारभिव्याहारा अभिरूपास्ता यानि च गणसामानि हूतवन्ति तत्र यश्छन्दो योगविकारो गणेचिकीर्षया स भवत्यपि च चैन्द्रीचिकीर्षया ऽथ खल्वाह यन्निरुक्तं निधन मुपेयुर्गृहपतिरेवर्भुयाद्रुपेत्तरान् घ्नीतेति कस्येदं ब्राह्मणं स्यादिति नौधसप्रतिषेध इत्याचार्यास्तद्धि निरुक्तनिधनं भवतीति नेद मित्थेथाषर मां इन्द्रा इत्येवास्य निधनं विराड्स्तदात्तथा स्यात्तन्निरुक्तं स्यादिति यथासमाम्नायं त्वेवैव मनिरुक्त मिति द्वावग्निष्टोमस्तोत्रीयौ समामनामो द्वये व्रात्या भवन्ति

शीर्षादृयस्त्वैषीकयोवंयस्त्व शीर्षादीनाᳬ सतोबृहती-ष्वग्निष्टोमसामं कुर्यादिति धानञ्जय्यो ज्यायसस्तान् ब्रुवत एषीकया दाशां प्रगाथबृहतीषु कौनो विद्या-दिति स्वयं ब्रुवीरन् ज्यायाᳬसः खलु शीर्षादयो ब्रुवते षोडश इत्युत्तरस्तत्र खलूक्थं करोति षोड-शयोः स्थाने चिकीर्षᳬस्तावादावसानयोर्निदध्या-द्येवᳬ सयाधिः पवमानाच्छावाकसाम्ना मिति कनिष्ठयज्ञ उत्तरो ये तु खलु जन्मना कनिष्ठा ये हो वयसेति ये जन्मनेत्याहुस्ते हि कनिष्ठा इत्याचक्षते यथाहुर्ये वयसा ब्रह्मचारिणो हि व्रात्या भवन्तीति व्राध्यातौ षोडशाव च्छावाकसाम्नो हरति स्तुध्यᳬ स्तोमसᳬ धात्तत्र महताᳬ स्वᳬ स्तोमं करोत्याशी:-स्तोमं मा प्रच्योष्टेति विहरति श्यावाश्वान्धीगवे ऋचा वोप्सन् ॥ ११ ॥

ज्येष्ठयज्ञ उत्तरो ये तु खलु जन्मना ज्येष्ठा ये हा वयसेति तत्पूर्वेणैवं व्याख्यातं तत्र द्वादशरात्रिकाᳬ स्तोमानुभेव सामनौ करोति ज्येष्ठयज्ञं कृत्स्नं चिकीर्षन्नथापीमं द्वात्रिᳬश माशी:स्तोमᳬ साचाज् ज्येष्ठयज्ञे ऽचकीर्षीत् स यादीयमानः सर्वांस्तोमाना-द्रायेत्तां स्तु यदेवं मयुक्त एव मनवकारेणारोहो भव-

त्यष्टाचत्वारिंशात् परस्तादष्टाविंशाविति त्रिणवत्रय-स्त्रिंशावभिरूपान्तो द्वाविंशो वाचिकीर्षितं कनीयांसौ स्तोमावुपागुरिति नु भवति, त्रयस्त्रिंश-द्वात्रिंशाविती वैतद्भवति द्वे त्रिणवत्रयस्त्रिंशे द्वे द्वात्रिंशत्त्रयस्त्रिंशे इति वा खलु तत्कुर्युः सर्वान्वैवा-रूढानुपेयुरित्यकुशला ऽनुव्याहरन् कौषीतकीन्मन्य इति धानञ्जय्यं एवं ह्येवैषु सत्सु रोहो भवति तत्र यो रोहो ऽर्थकारितः स भवति कथं मनिष्टप्रथम-यज्ञानां व्रात्यस्तोमा इत्यकर्त्तव्या इत्येके ऽनारभ्य वदन्ति य एतेनानिष्ट्वेत्यथाप्येषां ज्योतिष्टोमे प्रति-पद्विधीयते ऽथापि यथा मानाहिताग्नीनामेवमप्य-निष्टप्रथमयज्ञाना मितिकर्त्तव्या इत्यपरं प्रायश्चि-त्तार्था इमे भवन्ति प्रायश्चित्तं सु खलु पूर्वं विधीयते ऽथापि ज्योतिष्टोम एव प्रायश्चित्तस्य पूर्वत्वं दर्शयति यथा कलशे दीर्णे विरिक्ते ग्रावापि शीर्णा इति यदे-तद्य एतेनानिष्ट्वेति प्रकृतिभूतानामेतद्भवति यदे-तत् प्रतिपद् विधीयत इतीष्ट्वा व्रात्यस्तोमेनेत्येतदुप-पद्यते यदेतद्यथा नामाहिताग्नीना मिति सिद्धि-कारित मेतद्भवति ॥ १२ ॥

अथाग्निष्टुत्स्य या आग्नेय्यः पठिताभिर्व्याहारा

ज्योतिष्टोमीभिः सदृशंव्यञ्जना यथास्थान मभिरूपा-
स्ता रुद्रवतीस्त्रिष्टुभः करोति रुद्रो मरुतां पिते-
त्याहुस्तेन मरुत्वदनुग्रह इति गायत्रीष्वग्निष्टोम-
सामैतदाग्नेयं छन्द इति स यदेता उप त्वा जामयो
गिर इत्येता वायव्या इति तद् वारवन्तीयं गायत्री-
सामैक मृचा स्तोत्रीयं तेन प्रच्युतं यज्ञायज्ञीय मन्त्यं
करोत्यत्र हि सं तृचतां लभते तदेतत् स्तोमसंरोध
एव मेव भयत्यैन्द्रीषु सुत्येति सोऽयं पूर्वं स आग्नेय्य-
स्तोत्रं निरैन्द्रं भविष्यतीति स यदग्निष्टोमस्सामान्ता-
ख्यानि कर्माणीति सप्तदशे विषमे स्तोमे सत्यन-
भ्यासं बृहतीं करोति कस्य हेतोरिति न ह्याग्नेयी
साभ्यासा विद्यते तस्यां चत्वारि सामानि तृचावभित
एकर्चौ मध्य एवं तृचप्रायणं तृचोदयनं भविष्यतीति
त इमे पञ्चानुवाकाश्चत्वारः कल्प्याः स एष प्रथमः
सर्वेषा मेव सार्ष्टिः स्यादपि वा प्रथमस्य द्वौ स्यातां
कथं भक्त्या इत्याग्नेय्या इत्येक एवं यथार्थं भवत्यथा-
प्यत्र सुषिप्रतिषिद्धरूपाण्यनाग्नेयानि भवन्त्याग्ने-
यानि यथा हविःस्तुतिः पवमाना इति यथाप्रक्र-
तीतरपरं भक्त्यविशेषान् विदधन्नाग्निष्टुत्सु विदधा-
तत्रथापि क्रतावेता यथार्थं भवन्ति यथा मैत्रावरुणस्य-

स्याग्निष्टोमसाम्नीत्युत्तरेष्वग्नय इति स्थाने सुब्रह्म-ण्यायां देवा इति ब्रूयादैन्द्रत्वादग्निष्टोमसाम्न इत्येके ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे षष्ठः प्रपाठकः ॥

॥ अथ सप्तमः प्रपाठकः ॥

अथ त्रिवृतस्तेषां प्रथमस्य यो द्रव्यविकारो निर्वा-कार्थं न स भवति पुरोधाकामयज्ञ उत्तरः स्थपति-सवो वयꣳ समानांः श्रेष्ठो * संवृणीरन् ब्रह्मसवो वा-ब्राह्मणस्य यज्ञेन जिजनिषमाणस्य त्रिवृतः स्तोमꣳ सम्पद्यते लघुरीप्साया मभिरूपो यः स्तोमस्याय मेष गच्छति सः पुरोधां अः स्थापत्य यस्य तु स्याद् ब्रह्मसव इत्येषा ब्रह्मणो भक्तिरित्यनुसवनं दक्षिणा ददाति कस्य हेतोरिति बृहस्पतिरभिषिच्यमानो देवगणेभ्यो दक्षिणा आजहार वसुभ्यः प्रातस्सवने रुद्रेभ्यो माध्य-न्दिने आदित्येभ्यस्तृतीयसवने ऽश्वद्वादशा मध्य-

* 'श्रेष्ठा' ख ।

न्दिने ददाति. दक्षिणा वेलाया मन्याधित्वन्मन्यते श्येनेनैषोद्व्यसमुद्देश उक्त उद्धरति श्याक्तं वर्ण्णं साद्यस्कसाम तद्धरति तच्चैतज्जराबोधीय मेतद्गायत्री-सामापन्न मपि च रुद्रवद्योनिवधार्थे ऽभिरूप मुद्धरति वषट्कारणिधन तस्य स्थाने सप्तहङ्करोतीत्यतद् बृहता समानयोनिवधार्थे ऽभिरूप मुद्धरति स्वारे सप्तचं-नवर्चा करोत्येते प्राणोक्ता इति ते बृहत् तस्य स्थाने वषट्कारणिधन मेषा देवेषुर्भवति ता माशीर्ध्वनि-ह्वसन् ॥ १ ॥

सर्वस्वारे सप्तर्चंनवर्चान् करोत्येते प्राणोक्ता इति तेषां विलोपेन प्राणविलोपो भविष्यतीति स यत्प्रथ-मांस्तृचानेते रूपसम्पन्ना इति चतुर्ऋच मैन्द्राग्नं समामनामो. प्रवत्यासां द्वितीया ता मुद्धरति सर्वाः प्रवत्यो भविष्यन्तीति गायत्रीणां पृष्ठापदानाद् बृह-तीषु मैत्रावरुणसाम करोति. त्रिस्थानां बृहतीं पृष्ठेषु चिकीर्षंस्तच्चैतन्मेधातिथं स्वयोन्युपन्न पुरस्ता-देतत् स्थान मनभिवतीष्वप्रवतीषु शौल्किकपृष्ठानि स्वयोनीनि श्चिकीर्षन् विराड् *. बृहतीष्वग्निष्टोम-साम प्रागादनुप्रहरतेति ता यदावर्त्तयत्येवं प्रवृत्या

* "पराक"–इति ख ।

प्रक्रम इति तत्र यज्ञायज्ञीय मन्त्रसमाधये तस्या-क्षरसंसङ्गेन प्रस्तावयति प्रगाथीकाराय पूर्वस्या-श्वान्यङ्गे वा याश्चाघ मेषोऽक्षरसङ्घसङ्गस्तद्यत्र यच्चैषां तृचापत्तिर्बृहद्रथन्तरयोर्यज्ञायज्ञीयस्य चैव मेवैषां प्रस्तावयति दैर्घश्रवंसं स्वासु यदि जीवेदिति तु भवति न चेच्छक्नुयात्तु मत दीर्घं शृणुयादित्यपि वा प्रायणार्थ मेव स्यात् स्वारञ्च हि भवति प्रवह्योनि वेति ककुबुत्तरासु ककुबुत्तरास्थानं हि सर्ववृहती-ष्वेक एवं स्वर्गकामयज्ञे रोहोऽपि वा स्वर्गोक्तां वृहतीं स्वर्गकामे यज्ञेऽचिकीर्षन्ति पुरस्तात् नाना वृहत्य इति वा तन्त्रे विप्रतिपद्यन्ते प्रथमतन्त्र मित्येके गायत्रीभ्यां जानीम इत्याशीस्तन्त्र मित्यपरं प्रवंती-भिरयं क्लृप्तस्ता एताः प्रंवत्य इति ॥ २ ॥

अथातश्चातुर्मास्यानि स एष षडहो विहृतस्तत्र षाडहिकान्त्सोमप्र करोति षडहन्यायेन ताः स्तत्र यदेवं प्रयुङ्क्त एवं सोमो भवत्यथापि नाना दीक्षावभृथानीमानि सर्वाणि भवन्ति तत्र सर्वाण्य-ऽहन्युपक्रमः सोमेन प्रतिक्रामिषोदयाप्येव मेनाननव-च्छिन्नानन्ततो ऽध्यवस्यंतीतुपयन्ति तन्त्राणि पृष्ठानि संस्था इत्यङ्गां विक्रमादैकाहिकान्येकाहे वैराजि-

काणि द्विरात्र उद्धरति रात्रि मपरिकाण्डतया द्रह्यस्य त्रिरात्रिकाणि त्रिरात्र उद्धरति वामदेव्यं चास्यमन्त्राच्चापरिकाण्डतया त्र्यहस्य नाना ब्रह्म-सामानि नानार्थं श्यैतनौधसवर्णानि बार्हद्रथन्तर-पृष्ठात् यौक्तस्रुच मेवादाभ्यरात्रिकं तदेतत् पूर्णदर्षा-नुग्रहाय यम्ध्रास्तु यचीपत इति प्रथमस्याक्ष्णो ब्रह्म-साम स्तोत्रीयेऽे वैश्वदेवस्यायं स्थान मापन्न एषां विश्ववती भवतीति पञ्चप्रतिपत्कान्यहान्यात्वभी-ज्यायां पञ्चर्तुः संवत्सर इति षष्ठा मक्षां प्रतिपदः षड्डतुः संवत्सर इति त्रिष्टुभं वैश्वकर्मणीं करोति न हि गायत्री विद्यते समापद्यन्ते चिराचे भागा-स्तदनु द्रव्याणि हाविष्मतं द्वितीये ऽहनि त्रिरात्रस्य कुर्यादिति धानञ्जय्य ऋद्धिसामाप्रच्येष्टेति यौक्ताश्व मेवेति गौतमः कृतं हाविष्मतं द्विराचे तृतीयस्थानञ्च हाविष्मतं त्रिराचे तचैतत् संहितं शुनाशौर्य-सन्तानाय समुद्रेयो वसूनां प्राणाः शिशुर्महीना मिति पञ्चमषष्ठाभ्यां मुष्णिक्-ककुभौ षडहसमीप्सुः प्रत्याहरत्येतेन न्यायेन द्विरात्रप्रभृतिष्वहर्गणेष्वेते भवतो न चेत् कृतागमो भवति द्विपदातिच्छन्दसो दशरात्रन्यायेन ते जगत्याः पुरस्तान्निदधात्यन्त-

च्छन्दसी अन्त इति ते ऽयं न सर्वान्ते नासवनं च्छन्दो-ऽन्ते ऽचिकीर्षीत् तचैता वाजदावर्यो ऽन्तान्विता अयां रुचेति निध्यवत्सा स्वयोनेये प्रतेन न्यायेन चिराचप्रभृतिष्वहर्गणेष्वेते भवतो न चेत् स्तोम-सरोधो भवति ॥ ३ ॥

अथैते सप्तदशास्तत्र बार्हतेष्वाष्टमिकं पञ्चचं करोत्येतद् बृहद्भक्तिनो ऽन्त इति तात्तीयिकं रथन्तर-पृष्ठेष्वेतद्रथन्तरभक्तिन इत्यनिरुक्तः प्रथमस्तच यो द्रव्य-विकारो निर्वाकार्थे न स भवत्यथ खल्वाह मारुती भवति पौषी भवति वैश्वदेवी भवतीति केनो विद्यादे-तद्देवत्या इमा भवन्तीत्येतद्देवत्येषु समाम्नाता इति यानि गोः सामानि तानि सामान्यनुपृष्ठं संहित मेवैतदाग्निष्टोम्यात् क्रियते स्वर्गकामयज्ञ उत्तरस्तच यो द्रव्यविकारः स्वर्गकामयज्ञत्वात् स भवत्यथ खल्वाह सोमपीथ तदनु द्रव्याणि हाविष्मतं द्वितीये ऽहनि राजन्य कुर्यादिति धानञ्जय्य ऋद्धिसम मां प्रच्योष्टेति यौक्ताश्व मेवेति गौतमः क्रतं हाविष्मतं द्विरात्रे तृतीयस्थानं च हाविष्मतं त्रिरात्रे तचैतत् संहितं शुनासीर्यसन्तानाय समुन्वेयो वसूनां प्राणाः शिश महीना मिति प्रज्ञमषष्ठाभ्या मभिक-

ककुभौ षडहसमीप्सुः प्रत्याहरतेऽतेन न्यायेन द्विराव-
प्रभृतिष्वहर्गणेष्वेते भवतो न चेत् कृतागमो भवति
द्विपदाति छन्दसी दशराचन्यायेन ते गत्याः पुरस्ता-
न्निदधात्यन्तच्छन्दसौ अन्त इति ते यत्र सर्वान्तेन
सत्र नच्छन्दोन्ते चिकीर्षीत्तत्रैता वाजदावर्यौ उन्ना-
विता श्रैया रुचे स्याविदोद्वायेत्यनन्यत्र भावा ये
त्वेतदवोचदिति स्वर्गकामयज्ञ एवोत्तरस्त्वेमे सामनी
बहुदक्षिण्यादपि वा स्वर्गकामयज्ञस्वादेवैव मित्र
ब्राह्मणं भवत्यनड्वाहौ वा एतौ देवयाजी यज-
मानस्य यद् बृहद्रथन्तरे इति वैश्ययज्ञ उत्तरएतस्य
क्षत्रवरथन्तर माभि त्वा पूर्वपीतय इत्येतासु कुर्या
दिति लामकायनो यथा वा अप्ययायाः शूद्रस्तल्प
मुद्दिशेदतो दैशीय मतन्त्र एतद्रथन्तरास्वेव कुर्यादेतासु
त्वेव स्यादेतासां हि स्थान मापद्यते चेतां प्रोचे
पृष्ठे प्रउग इति सर्ववृहतीषु नान्यद् बृहद्रथन्तराभ्या
मंहति पञ्च मुत्तरासु स्यात्तं खलु द्विश्रुवतीभिः कल्प-
यत्येतद् भक्तिर्वैश्य इति तत्र विप्रतिपद्यन्ते ज्योति-
ष्टोमतन्त्र मित्येके गायत्र्यौ जागीम इत्याश्री-
स्तत्र मित्यपरं विश्रुवतीभिरथं क्लृप्तस्ता एता विश्व-
वत्य इति तत्र यो द्रव्यविकारो वैश्यदेवीचिकीर्षया

स भवति यान्यायुषः सामानि तानि सामान्यनुतत्वं यान्यन्यानि पृष्ठानि ब्रह्मसामभ्यां विशोविशीय मुत्तरयो मग्निष्टोमसाम ककुबुत्तरासु ककुबुत्तरास्थानं हि स्वर्गकामयत्न उत्तरस्तत्र खलु गोस्तक्कारोऽयेतदन्ततन्नतर मन्तंविधीऽयं भवत्यनिरुक्तं प्रातस्सवन तच यो द्रव्यविकारो निर्वाणार्थे न स भवत्यथैतद्देवस्थानं स्थितनिधन मुताखिक्कौस्तिष्ठेदिति तस्य रथन्तरं पृष्ठं वाजपेयसाम हि बृहत् करिष्यन् भवत्यग्नोतोऽर्कौ वामोत मन्न स्वं नश्चित्र उत्येति वारवन्तीय मग्निष्टोमसामैता राधस्वत्यः स्वर्गकामयत्नो ऽभिरूपाः ककुबुत्तरास्थानं हि सर्वबृहतीष्वेके तद्व्याख्यातं सर्वस्वारेन ऽनुतंत्र मुक्थप्रायाय * ॥ ४ ॥

पृथैषो ऽभिषेचनीयस्तस्य द्वात्रिंशाः पवमाना अनुपूर्वं मावृत्तिस्थानेषु पञ्चदशप्रभृतीन् भागस्तोमानेते माम्ना खरना इति तत्रोभे सामनी माङ्कदास्तिवाद्यथाप्युभे ईसायी मभिरूपे उक्थसंस्थं करोति द्वितीयेय मिज्या तत्र द्वितीयां सख्या मिति व्याख्यातम् बहिष्पवमान मन्यत् कविमतस्तत्र खलु

* "मुक्थप्रायः"—इति ख।

गस्थद् भाल्लविनं आग्नेयीं पावमानी मुद्धरन्ति यथा चिवृतं वं वय मुद्धराम: पृष्ठेभ्य इयं मत्येवं पृष्ठाना मविलोप इत्यथापि सोमप्रधानतरश्छन्दस इत्या-नुष्टुभं पर्यासङ्करोत्यानुष्टुभो हि राजेति तासां मध्यमां सुत्तमां कुर्यु: सूर्यवत्यन्ते ऽभिरूपे सन्धार्या-न्विताभ्याजयान्यथ खल्वत्र राजसामानि करोति राजसूयो राजसामानीत्येकादश करोति त्रिष्टुप्-सम्पन्नानि त्रैष्टुभो हि राजेति सर्वच्छन्दसानि करोति सर्वस्य कृत्स्नीकाराय न पाङ्क्तं करोति न हि पाङ्क्तं राजसाम विद्यत एक मुदाहरन्ति सत्यश्रवसो वाय्यस्य मह्रे नो अद्य बोधयेति राजसूययाजी स बभूव नेह राजसूययाजिनां सामानि क्रियन्ते बार्ह-तानि भूयिष्ठानि करोति सवनच्छन्दो बृहत्यथाप्ये-तन्माध्यन्दिनच्छन्दो भवति बार्हतानि वाव भूयि-ष्ठानि लभत इति द्वे गायत्रीसामनी करोति द्वे बहि-ष्पवमान मुखयोगायत्र्यौ भवतस्ते कुशल यदनुपूर्वं पंक्त्व माध्यन्दिने पञ्चाभव एवं रोही भवति देव-स्थानं वरुणसाम सोमसामेति द्वेवरादाप्. सैन्धुक्षितं दैर्घश्रवसं पार्थं काक्षीवतं ब्राह्मणसाम सद्राजसाम-सूपसङ्गायते सत्रमार्गेण चचार राजसूययाजीव बभू-

वेति दैवोदासं वाध्र्यश्वं वैतहव्यं त्रासदस्यव मिति मनुष्यराज्ञां द्वैपद उक्थप्रगाथो विभक्तशाशङ्क मिदं कर्म द्विविधेन प्रतिष्ठति तच्चैतत्कक्षीवतासामाहीयं सोद्भवम्ब्रह्म राजयज्ञेऽभिरूप मनुपृष्ठ मितरे सत्त्वोविशीयं दशपेयस्य मध्यन्दिने विशीयं राजयज्ञेऽभिरूपं वारवन्तीय मग्निष्टोमसामस्वाँखेषु वारवन्तीय मिति ॥ ५ ॥

प्रतीचीनस्तोम उत्तरत्र खलु बृहत्पृष्ठं करोत्येतत्राति: क्षत्रिय इत्यतिरात्रसंस्थं करोति चतुर्थीय मिज्या तत् चतुर्थी संस्था मित्यथापीदं द्वितीयं यज्ञस्थानं यदहीनो द्वितीयो वर्णः क्षत्रिय इति ज्योतिष्टोम तत्र मेतदिह भक्तितत्त्वयोरय मु लोकः क्षत्रियस्येति स्तोमकारित ग्रावाणो व्युष्टिद्विरात्र उत्तरस्तत्रामु मेव द्विरात्र माहरति तत्र दशस्तोत्रीया उपाहरति संवत्सरसम्पदे चतुर्विंशा वृत्तरी पवमानो करोति बहिष्पवमानसमाधये सप्तदशत्रिणवौ प्रत्यावर्तयति तावनन्तरयो: स्तोत्रयोरनुग्रहार्थैकविंशान्युक्थानि करोति विभक्तशाशङ्को द्विरात्रस्तत्रामु मेव प्रतिष्ठास्तोम मभि प्रायुङ्क्तायैतद्विशोविशीयं राजयज्ञेऽभिरूपं क्षत्रियस्य धृति: किमर्थं इत्या-

लुब्धजनपदोऽयथ् राजा तस्य ज्वसंयमार्थः चमस-यमार्थः ॥ ६ ॥

अथातो द्वन्द्वा इत्याचक्षते तेन सर्वे द्वन्द्वाद्वन्द्वे मिश्रास्तु भवन्ति यौ यावेषाᳪ समान मर्थ मुपक्लृप्तौ तौ तौ द्वन्द्वौ भवतो राज्यकामयज्ञः प्रथमस्तस्य यद्देवं-विधः स्तोमयोग एव मष्टावेकविᳪशान्तसम्पद्यत इति सप्तदशं पवमानेषु निदधात्येष विड्-स्तोमो भवति विट्कामो राजा ऽयापेयते ग्रामां इव सुत्याया स्तपवमानाः सम्पूर्णाश्छन्दोभिः सामभिरिति तत्र विट्स्तोमᳪ सप्तदश मचिकीर्षीदनुपूर्वं मावर्त्ति-ष्यानेष्वतिशिष्टान् भागस्तोमानेवं चतुष्टोमो भवति विभᳪशाशङ्क मिदं कर्म स चतुरेण प्रतिष्ठेति व्याख्यातं मौभेयसाम्य मभिषेचनीये ज्योतिष्टोमं तत्र छदयाख्यातं केशवपनीये ऽन्नाद्यकामयज्ञ उत्तर-स्तव चतुर्कंच माहरत्येतदन्नाद्यसᳪस्ताव मित्या-मह्रीयवादुत्तर मौभीक मेतदृष्टिसᳪस्तावं वृष्टिज मेव मन्नं माम्बीगवादर्कपुष्प मेतदन्नाद्यसᳪस्ताव मिति प्रजातिकाम * यज्ञ उत्तरस्तवैकर्च मुपाहरत्येषा वृषण्वती प्रजातिकाम + यज्ञो ऽभिरूपान्तरिक्षप्रवा-

---

*, + "प्रजापतिकाम"—इति ग ।

दान्तरिक्षायतना गन्धर्वाप्सरस इति तत्र यो द्रव्य-विकारः प्रजाति कामं यज्ञत्वात् स भवति शुश्रुत्सद्यज्ञ उत्तरस्तस्य द्वादशं माध्यन्दिनं सवनं त्रिवृती अभित एव मिव ब्राह्मणं भवति यैकादशी या द्वादशीस्येका-दशीः प्रातःसवन उपसञ्चीत द्वादशीस्तृतीयसवन एवं गरस्य व्यपादानं सिध्यतीति तदपि शश्वदध्वर्यव उपाहरन्ति सोमो वै त्रिवृतः स्तोमो द्वादशो यत् त्रिवृतो द्वादश मुपयन्ति पुनर्द्वादशात् त्रिवृतं तस्मा-देष पुनःस्तोम इत्युक्थ्यसंस्थं करोत्येव मेतासां स्तोत्रीयाणां व्युपादानं सिध्यतीति सोमकल्यायैकं साम मध्यन्दिन मुपाहरन्ति स यज्ञमेधातिथ मेतस्य-रिष्टवती योनिः प्रायश्चित्तकृत्ये ऽभिरूपे ऽस्येतो यो द्रव्यविकारः शुश्रुत्सद्यज्ञवान्त्स भवति ॥ ७ ॥

पशुकामयज्ञ उत्तरस्तत्र चतुष्पर्यायान्स्तोमान् करोति चतुष्पादाः पशव इति तदपि शश्वद् ब्राह्मणं भवति यच्चतुश्चतुर्हिङ्करोतीत्यथ खल्वेनानुष्टुभः प्रति-पदः करोति पशुकामयज्ञो चतुष्पदा अभिरूपा इति तास्तिस्रः सतीश्चतस्रो गायत्रीः करोति गायत्री-स्थाने हि भवति वारवन्तीयं यज्ञायज्ञीयचतुर्थे-ष्वुक्थस्तोत्रीयेष्वेव मिव ब्राह्मणं भवति नोक्थ्यो

नाग्निष्टोम इति यद्वु वारवन्तीयं पशुसंस्तावं चापि च स्तोत्रीयाणां सन्निवारणाय पशुकामयज्ञ एवोत्तरस्तच्च चतुर्थं च माहरत्येतत्पथ्यच्छन्द इति षोडशिसंस्थं करोत्येव मिव ब्राह्मणं भवति नोक्थ्यो नातिरात्र इति पशुकामयज्ञस्त्वाद्वायज्ञ उक्थप्रणयः पशुकामयज्ञावेवोत्तरावपि वा द्विरात्राग्नि मुप्रकृतौ स्याता मुभयेषामानि ज्योगगात् तत्र सप्त-सप्तदशौ स्तोमौ करोत्येतौ पशुसंस्तावा वित्येक-विंश मन्त्रस्य बहिष्पवमानं करोति त्रिकं होतु-राज्यं समायत्विकाद्भौ व्यावर्त्तयिषन्नेतस्मिं-स्तदेकविंशे पराक्रम्य त्रिकेण वज्रेण बलं बिभे-देति लामकायनस्ता उ सप्त-सप्तदशावेव सम्पदेति नानातन्त्रे नानापृष्ठे द्विरात्रन्यायेन सञ्चारयति च न च सञ्चारयत्येकाहन्यायेनाहः सञ्चारणं द्विरात्र-न्यायेनासञ्चारणं जनुषैकयौ द्विरात्रन्यायेनौदला औगवे द्विरात्रन्यायेनाश्रित इति काव मन्त्य मेषा सामन्यां * द्वचप्रथमा पशुप्रवादिति सत्रासाहीय सुष्ये द्विरात्रन्यायेन श्यावाश्व-क्रौञ्चे द्विरात्रन्याये-नाये गोराजाय स्तविष्यत इति काव † मन्त्य मग्रेग.

---

* "सामान्या"—इति ख। † "राव"—इति ख।

इत्यध्येयं भवतीति शाण्डिल्यायनो गोप्रवादास्तु स्नातकाः कुर्वन्तीति ॥ ८ ॥

अपचितिकामयज्ञ उत्तरस्तत्र चतुर्विंश-षष्ठान् करोत्येवमिव ब्राह्मणं भवति वि-ह्वयन्तीति चतुर्विंशश्चिंशावावितीवैतद्भवति चतुर्विंशं पवमानयोर्निदधाति तेन प्रच्युतौ त्रिवृत्सप्तदशावाज्यपृष्ठेष्वनुगृह्णाति ज्योतिष्टोम तन्त्र मेतदपचिततरं तन्त्रयोरिति स्तोमकारित आवापोपचितिकामयज्ञ एवोत्तरस्तत्रोक्ताः स्तोमास्तत्र यदेवंविधः स्तोमयोग एवं विराजं सम्पद्यत इति द्विपदाः करोति दशरात्रन्यायेन स यदेता एवा दशरात्रावमाने दृष्टा इति तच वारवन्तीय मन्तसामान्तच्छन्दसि सूर्यवत्यो दशरात्रन्यायेनाग्नाभियज्ञम उत्तरस्तत्रोभे सामनी करोत्यग्नाभीज्यां कारश्चीचिकीर्षत् तथापुरभयसामाग्निर्भवत्युभाभ्यां हि परिगीयत इति ज्योतिष्टोमं तन्त्र मेतदाग्नेय मिति स्वारं सौपर्णं पथिसाम पञ्चभीष्टाया* मग्नेर्वत मग्नाभीष्टायां†स्वाशिरामर्कोऽग्नाभियज्ञे व्रते दृष्टो भवत्यग्नाभियज्ञ एवोत्तरस्तत्र ज्योतिष्टोम मेवाहरयेतदाग्नेय

*, † "भीज्यायां"—इति ख।

मिति त्रिवृत्पञ्चदशौ वाज्यपृष्ठेषु सप्तदशेन कुर्मो व्याख्यात मौभयसामं ज्योतिष्टोमायं विकृतस्तत्रो-दल मनुष्टुभि तृचसमाप्तये तदेतदष्टमात् पृष्ठा-न्वितम् ॥ ८ ॥

राजयज्ञ उत्तरस्य द्वे स्तोत्रीये उपाहरति ककुद्-रूपं द्विदशयिषन्नपिवा सदोविशीयसामान्ते गच्छ-मात्रे सप्तदश कारयेतां विषमे स्तोमे सत्यनध्यासां वृहतीं करोति ज्योतिष्टोम्यात् तस्याः सामकल्पो * व्याख्यातो ऽग्निष्टुति व्याख्यात मौभयसाम्य ज्योतिष्टोमायं विकृतस्तत्र गौरीवित मनुष्टुब्येतदृष-भोक्त मिति वैश्ययज्ञ उत्तरो वैश्यस्य राजमातृस्य स्वाराजा मौपसतो यज्ञः स्यादित्याहू राज्ञ एव खल्वयं संविरतस्य साहसिक्याद्विड्भूतस्य कितवाशयस्य सवः स्यादिति शाण्डिल्यो ऽभिषिञ्चनीयं प्रत्युपधावति सवसामान्याद्द्वांविंशादपमादनुष्टुभः प्रति-पद्दो ऽपयन्ति कुश्मल यस्तुपवती मेषा राथन्तरी राथ-न्तरी वैश्य इति व्यत्यासेन नित्यां वृहतीं करोति समो हि स्तोमो व्याख्यातापुत्तरौ राजयज्ञ उत्तरस्तं खलु वृहत्पृष्ठ मिन्द्रन्यज्ञाभिः कल्पयतेऽतन्त्रिः

* "साक भल्पो"-इति ख ।

क्षत्रिय इति तत्र या इन्द्रवत्यो विस्पष्टास्ता अथापि वृत्रहप्रवादेन वृषण्वत्प्रवादेन सूर्यवत्त्वयेत्यैन्द्रꣳ रूप मनु गृह्णान् मन्यत इति तस्य विज्ञातिपद्यन्ते ज्योतिष्टोम तस्य मिल्लैके गायत्रीभ्यां जानीम इत्याभी-स्तन्न मित्यपर मिन्द्रवतीभिरय कृप्तस्ता एता इन्द्र-वत्य इति तत्र यो द्रव्यविकार ऐन्द्रीं चिकीर्षया स भवति राजपुरोहितयोर्यच्च उत्तरस्तयोरुभे सामनी उभयानि व्यञ्जनानि द्वे यज्ञा ज्योतिष्टोमं तस्य नित्यं ब्राह्मणस्योत्तो यज्ञं क्षत्रियस्य ॥ १० ॥

विजिघांꣳसद्यत्तं उत्तरस्तयोरुभे सामनी करोति विजिघांꣳसद्यत्तं क्रूरस्तं चिकीर्षꣳस्त्वैतद्विशीर्विशीर्यं विजिघांꣳसद्यत्ते ऽभिरूपꣳ सोमसामाऽऽथर्वण वेत्य-भिचरतः सोमसामैतत्क्रूरणिधनं तस्य निधने विचा-रयन्तीन्द्र इव दस्यूꣳ रम्रणा२३४५ सूर्य इव दस्यूꣳ रम्रणा २३४५ वज्रिन्त्सुवज्री २३४५ अपि वै तेषां द्वे पूर्वे वोत्तरे वा सर्वाणि वा समस्यन्नन्त्य मेव स्वर-येद्यथा वायो भञ्जाया निहन्यमानायाः क्रादः स्याद्यथा वायसौ सम्पक्षेयातां यथा वनिष्कः क्रन्दनेना-भिहतो ध्वनेद्यथा वासन्नपुरस्य पादस्य निघातस्य इक्षिति चाथर्वणं पशुकामस्यैतच्चतुर्णिधनं पशुकाम-

यस्मै ऽभिक्रम मेव मैथ पञ्चोत्तरो ऽपि वा नाम्नात-प्रायश्चित्तये यन्नानाम्नातं भय मागच्छेद्यथा माटव मा. अगाम यथा विहनुशिरो यथा वयःपतनं तद-प्येवं मिव ब्राह्मणं भवतीन्द्र मदिश्यो माया कस-न्तोति शाण्डिल्यायन एवं नून तद्विदाञ्चकारेति ह स्माह धानंजय्यो यदर्थं इम माजहारानाम्नात द्वत्र खल्वयं योगो भवति तत्र त एव स्तोमा ये पूर्वस्य तान्तु यदेवं प्रयुञ्ज्ञ मायावेकाहौ व्यावित्त-ग्रिष्ठस्तन्त्वे विप्रतिपद्यन्त उभयसामतन्त्व मित्येके प्रलवत्यो हौता माध्यन्दिनीया इत्याशीस्तन्त्र मित्य-मन मनाम्नानप्रायश्चित्तये ऽथ तत्रानाम्नातयोगांश्चि-कीर्षन् गायत्र्याः स्थाने द्वे बृहत्यौ निदधाति ते संयुज्य तिस्रो गायत्रीः करोति गायत्रीस्थानं हि भवति तत्र यो द्रव्यविकारो नाम्नातप्रायश्चित्तये स भवत्यपि च विजिघांसया ॥ ११ ॥

अभिचरणीयावेवोत्तरौ तयोः श्येनैव द्रव्यसमु-द्देश उक्तो ये पूर्वयोः पूर्वस्य स्तोमाः तयोः पूर्वस्योद्ध-रति सप्तदशनवदशौ प्रजातिसंस्तावाविति षडति-शिष्टाद् द्विः स्तोत्रभाजः करोति सन्दंशरूपं दिदर्श-यिषन्नैडं ककुभि करोति पुरुषच्छन्दसः स्वरं विच्या-

वयिष्ठं चैतत् काशीतं वीणाक्षरिडं त्रय, परेषा मिच्छतीति सामानुष्टुभि करोत्येतानि क्रूराणि सामानीति स यत् त्रयाणां प्रथम मेतदानुष्टुभमिति पूर्वाध्याय पूर्वे यज्ञस्थाने ऽथाप्येतत् क्रूरणाधने वधार्थे ऽभिरूप मथापि बृहद्विधनेनानुग्रहकात्येष वै सामवर्ज्जं इति बृहद्रथन्तरयोर्वदति ऽतोऽमकाल्पा- योत्तरे विहितवन्तौ तृचा आहरति तत्र तदेव साम स्यादिति धानञ्जय्यः समानार्थौ हि भवतो द्वितीय मिति गौतमः स प्राप्यावेकाद्दो व्यावर्त्तयिषन्नथा- परतदभिनिकृष्टगीतिवधार्थे ऽभिरूपं वज्रोक्तं प्रमंहिष्ठीयं मुक्तो यत्र मौपगव मेडत्वात् षोडशिसाम्नो नामधं करोति तचैतदुद्दंहिष्ठीय मेतेनेडाकामस्य सिध्यत्यजामिकल्पश्चेति ॥ १२ ॥

महानाम्नीः षोडशिसामैता वज्रोक्ता राजयज्ञे ऽभिरूपा वज्रो हि राजेति कथं धर्मा इति कर्त्तव्या इत्येकेऽपि ह्यासा मेष स्वाध्याये धर्मो भवत्यथापि धर्मिस्थान मापन्नाः षोडशिधर्मान् कुर्वन् कथं महा- नाम्नीनां धर्मान् न कुर्यादित्यथापि वज्रोक्ता आपो ऽथापि संशयो लोमो लोपयन् न्याय्यतर इत्थ- कर्त्तव्या इत्यपरं पृष्ठापन्नानां वदति यदप उपनिधाय

स्तुवत इति तद्धैतदपि ह्यासा मेव स्वाध्याये धर्मी भवतीत्यपरम्. वाद: स्वाध्यायधर्मान् कुर्याद् यद्वैतद्धर्मिस्थान मापन्नां इति धर्मिस्थान मापन्नतरं खलु सद्रथन्तरं न धर्मांल्लभते यद्वैतदृच्योक्ता आपन्न इति आग्नेयुक्ता आपो ऽय: पश्चात्पता उपसृजन्ति वैश्वानर मेव. तं शमयन्त्यापो. हि शान्तिरिति ह्याह यद्वैतत्स्वरेऽशये लोपो लोपान् न्याय्यतर इति यो रथन्तरधर्मानकृत्वा महानाम्नीनां धर्मान् कर्त्तव्यान् मन्येत सदृशन्यायाघातो ऽथापि तस्य वक्त्योक्ततरा धर्मा इति धर्मा इति ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे सप्तमः प्रपाठकः ॥

॥ अथ अष्टमः प्रपाठकः ॥

अथातो ऽहीनानामेषां सुत्या द्रव्याणा मन्वयो ऽथापि दशरात्रावल्योपांऽहीनांस्तत्र ऽसिद्धानि दाशरात्रिकाणि द्रव्याण्याहीनिकानि रात्रेः श्रौतकल्पस्थर्चो ऽपनयति सत्रस्याहीनस्य व्यावर्त्तयिष्यन्नेता: करोति पन्थं पन्थ मित्योतार इत्येता: सुतवतीनां स्थाने सुतवत्यं इति मध्यमस्य रात्रिपर्यायस्य होतु-

षामण्णी विन्नारयन्ति दैवोदासं वा स्यादौक्ष्णसद्मनं वेति विकल्पो वा स्यादपि वा दैवोदास महीने कुर्यात् पूर्वाध्याय पूर्वे यज्ञस्थान औक्ष्णसद्मनं स्वेषूत्तराध्याय मुत्तरे यज्ञस्थाने ऽग्नाप्यस्मिंत्सम्वादरूपो भवत्यौक्ष्ण-सद्मन मपि शर्वरीषु प्रोहन्तीत्यथ खल्वाह त्रिणिधनं भवतीति कथं त्रिणिधनᳪ स्यादित्येतान्येतान्येव निध-नानि व्यवस्यन्त उपेयु: सुवृक्तिभी२३४५ नृमादना-२३४५म् भरे२३४५ घुवा२३४५ इति तदाहुर्नेक्षन् त्रिणिधनं यदनन्तरांणि निधनानीत्यथ वा एतानि विहृतान्यनुपद मुपेयुस्तन्न निन्दा यदनुपायान्निध-नाना मभिवग्राहारो ऽथवा एतानि पृथक्स्तोत्रीया-सूपेयुस्तच निन्दा यदनुपायान्निधनाना मभिवग्राहारो ऽथवा एतानि पृथक्स्तोत्रियासूपेयुस्तन्न निन्दा यत् सप्रामक्र्त्ता निधनानां विप्रयोगो यथासमाम्नाय मेवो-पेयु स्यापि यथासमाम्नाय मेवैतत्त्रिणिधनं भव-तीति शाण्डिल्यायनो यत्तिरश्चो निधनमाचा भव-न्तीति सर्वेषु पदेष्वभ्यासात् सौमेधᳪ रात्रिषामेत्या-चक्षते कौत्स मश्वीनादपनयति सजग्धाश्वीन च व्यावर्त्तयिषᳪस्तथैतदाष्टादᳪष्ट्र मृष्विसᳪस्ताव मा त्वा विश्वन्त्विन्द्व इत्येतास्विता: सोमवतीनाᳪ स्थाने

सोमवत्य इति समुद्रप्रवादा आवत्यान्ते ऽभिरूपा इति ॥ १ ॥

बुभूषद्यज्ञ उत्तरो ऽपि वा षडहाग्नि सुपक्रान्तः स्यादेतेषां स्तोमानां मुपधानात् तत्रोभे सामनी बार्हतं तत्र बृहत्पृष्ठ्योपवतीति प्रतिपत्काव्य हेतो-रिति बुभूषद्यज्ञो ऽयं भवत्यनवधारितकाम इति लाभकायनस्तत्र सर्वाभिप्रायां प्रतिपद मचिकीर्षी-दथापि षडहो ऽयं संलक्षितः सैषा षडहप्रति-पद्भवत्यथापुरमि स्थाननती अचिकीर्षीत् तन्त्रेण बृह-त्प्रतिपदां रथन्तर मित्यथापोना मेवान्य वेदाः समा-सेवन्त्यास्थौगवादुत्तर माथर्वणां षडहो ऽयं संलक्षि-तस्तदेतत्मायश्चित्तिः स्या मा पशुकामयज्ञ उत्तरो ऽपि वा द्विरात्राग्नि मुपक्रान्तः स्यादेतेषां स्तोत्राणा मुपधानाद्दशरात्राग्नि वा छन्दोमानां मुपधाना-द्याख्यात सौभयसाम्य मनुपृष्ठ तत्र इयान्याज्यानि इयानि पृष्ठानि द्वैविध्यात् स वक्ष्यास्तोयामाभ्यां पृष्ठानां वैश्वजितानि पृष्ठानि गर्भं करोत्येतानि नानात्वकृतानीत्यथापेत्र मातृतरा दशरात्रस्येति स काव्य हेतोर्गर्भान् करोतीत्येवं हि प्रशब्द बह्वृचा अधीयते गर्भवन्ति पृष्ठानि भवन्त्यास्तोयामस्य तानि

गर्भकारꣳ शꣳसेत्पशवो वै पृष्ठानि यद्‌ गर्भवन्ति भवन्ति प्रजननेनेव पशून्त्समर्द्धयन्तीति बृहद्वैराजगर्भं करोति बार्हतं वै वैराजं तेनैव तदनुरूपगर्भं वामदेव्यं महानाम्नीगर्भं करोत्यापो वै वामदेव्यमापो महानाम्न्यस्तेनैव तदनुरूपगर्भं श्यैतं वैरूपगर्भं करोति पशवो वै श्यैतं पशवो वैरूपं तेनैव तदनुरूपगर्भं कालेयꣳ रेवतीगर्भं करोत्यैडं वै कालेयमैडा रेवत्य-स्तेनैव तदनुरूपगर्भं यथो द्रवदिडं कालेयं कस्तेडा-रेवत्यस्तस्मिन् मिथुनादेव प्रजायत इत्यपि वा सर्वाः-ण्याकर्त्तीनि वैश्वजिते रात्रिभिर्गर्भवन्ति कुर्यात् तच बृहत्यश्चरते तस्य वैरूपं विधृत्या इति तत्र गर्भविधानं मात्तुर्मध्यमं पर्यायꣳ सप्तोचीयं गर्भं कुर्वात् प्रथमोत्तमौ मुखाद्यैवं गर्भोपपत्तिर्भवतीति कथं धर्मा इति कर्त्तव्या इत्येके गर्भभूतानि भवन्त्यनुभूतान्यधर्मा गर्भो भवतीति कथं धर्मा इति कर्त्तव्या इतरके गर्भभूतानि भवन्त्यनुभूतान्यधर्मा गर्भो भवतीति कर्त्तव्या इत्याचार्यास्तत्र तान्येव विवचनामि यानि विश्वजिति सुरूपं ज्ञराबोधीयस्य स्थान एतत्पशुसꣳस्ताव मित्युक्तस्याथर्वणां द्विपदा यत्र करिष्यन् भवति तचैतस्मीहविष मध्यस्तगीत्यतिरिक्त मतिरिक्ते कल्प ॥२॥

प्रजातिकाम-*-यज्ञ उत्तरस्तत्र यो द्रव्यविकारः प्रजातिकाम-†-यज्ञस्त्वात् स भवति व्याख्याता उत्तरे ‡ अथैते एकाहस्तोमा एतान् कामानभ्युपकृता यथैतद् ब्राह्मण मथापरेकाहस्तोमानाहीनिकान्यहानि सोऽन्वस्थाय मदिदर्शयिषीमत् खलु बृहद्रथन्तरपृष्ठान् सुर्मी रथन्तरवाहन्ता च्छ्रते स्तोमा इति ज्योतिष्टोम तत्र ज्योतिषा च्छ्रते स्तोमा इति, तत्रानुपृष्ठं द्रव्या-गमः षोडश्याः षोडशिनो ऽनुब्राह्मणं वेति विचार-यन्ति किं स्तोमा अनुब्राह्मणं त्रिवृत्कविंश-स्तोमा इत्येष एवां प्रकृतिस्तोमो भवत्यथाप्याहुरह-स्तोम मह: प्रथमोत्तमयो रन्वियाता मेकविंशं तु पञ्चदशस्य कुर्यात् पञ्चदशं सप्तदशस्यैवं तं स्तोमं संस्तुतो ऽतिरात्रः सम्पद्यते यो यज्ञस्थाको भवत्यह-स्तोमः स्वेवाक्विषु रित्यनुब्राह्मण मित्यनुवाक मित्ये-तत् आद्यो वा ह्रस्वः स्तोमः स षोडशिनो न्यायेन यो वा कसीयाद्वितीयाहस्तोम चैन मनुयत्तम्पश्यामो ऽथातो द्विराकाश्च ज्योतिष्टोमसर्वस्तोमौ समश्यति मा विलोपे भूयान् विलोपेऽभूदिति च द्वादशरात्रि-

*, † "प्रजापतिकाम"-इति ख।

‡ ख-पुस्तके अत्रैव द्वितीयखण्डः समाप्तः।

कार्या. न ह्ये करोत्यथैतानि दशरात्रस्यान्ताहानि चतुर्थ-षष्ठे नवम-दशमे इत्येतेषां द्व्याण्यहीनान्तेषु चिकीर्षितानि तत्रोत्तरच बार्हस्पत्यमान मन्यत प्रतिपदो नावमिकम् ॥ ३ ॥

अथैते ह्याविष्मत-हाविष्कृते हाविष्कृतं पूर्वस्याह्न आभवचरं स्थानापन्नं भवति द्वितीयस्थाने च हाविष्मत मुत्तरस्य माध्यन्दिने सङ्हितस्य भागविक्षेपे भागसन्तानाय निकामयते ऽपि चैवं सतौ नेदीयसी हाविष्मत-हाविष्कृते भवत इति जनुषैकर्चौ बहर्गस्यान्यायेन चैशोक-वैखानसे जागतस्य भागस्यानुग्रहायाहीनान्तेष्वकामिश्चिकीर्षितां: संरोधान्विष्टे दीर्घतमसोऽर्को विपर्ययेणेतरयोरापि: स यदेतास्वेवासु स्वयोनि. रथाप्येता धुतवत्यो दृचितवत्यो ऽन्तेऽभिक्रूपा. इति ज्योतिष्टोमान्युक्थान्यहीनान्तेषु चिकीर्षितान्येवं पथ्यावस्तान मित्यायुष मुत्तरस्य द्वितीयं करोत्यथैते :सप्रायास्त्रिककुद्दुका. इति बृहत्पृष्ठं बार्हतं तन्त्वं द्वितीयं हि स्थान मापन्नां इत्युत्तरत्यन्तलक्षणानि त्रिणव-त्रयस्त्रिंशयो रन्वपाय मुत्सेधनिषिधौ परिखाना मिति जरबोधीय महीनेषु चिकीर्षितं मेतच्छन्दोमसामेति तस्य दुष्णाहि

राथन्तरान्स्तोमान्कुर्य्य मविच्यावयिषीद्दृइ्ंशीयं ते- रश्चा:वेति विचारयन्ति पूर्वस्याह्न उकथान्त इत्यह्नोद्दं- शीय मुपक्रमयीर्थ मह्वरिति तैरश्चा मषोडशिका यात्रिस्तोमस्त्वाचेणाषोडशिका ह्योवंयुर्भवतीति त्रिवृत् पञ्चदशौ ऽग्निष्टोम उत्तरस्य पूर्व एकस्तोमता मिवा- ह्नोर्दिदर्शयिषन्नायुषा प्रच्युतं पञ्चदशं पूर्वस्मिन्नहन्य- नुमृह्णाति तत्र यदेतत् सक्तो ऽभवदिति कपिवनो भायजात्यश्चातूरात्राय जामदग्नये दिदीचे ब्रह्मचा- रिणं सम्पन्नकुलीन मपः प्रहृत्य तस्य त्रिवृत् पञ्च- दश मह रुपेतं बभूवाथेतरस्त मर्थं साधयित्वा प्रत्याजगाम समाय मिम मह्रर्यागं निर्णीयमतेत्यायुर- तिरात्र मुपदधौ ब्रह्मचारिणश्च परिहारेण यत्र प्रत्यव- हारेण च हतो बभूव यस्त्वेतौ दोषौ परिहरेन्न हत: स्यादिति पूर्वणैव द्रव्यकल्पौ व्याख्यातौ व्याख्या- त: ॥ ४ ॥

अथातस्त्रिरात्राणां वामदेव्यं तृतीये पृष्ठे करोति लोकविधां त्रिरात्र उपक्लृत एतानि लोके सामानीति तानि कुशल यथाभक्ति निदधाति तन्त्रेषु विप्रतिपद्यन्त आहीनिकतन्त्राणीति गौतम- स्तान्नायन्त्रीभिर्विज्ञानीम एकैवान्त्राहीनिकी भव-

त्यर्च प्रवेति तां यत्करोति सहस्रवतो सहस्रवत् तद्-भिरूपेत्येकाहिकानीति धानञ्जय्यस्तद् गायत्रीभि-रेव जामीम एकैवात्राहीनिकी भवति. प्र सोमासो विपश्चित इति तां अरक्करोति प्रवत्युपक्रमे ऽभिरूपे-त्यहरहरेवाहीनैकाहाभ्यां वर्त्तत इति शाण्डिल्या-यन एवं युक्ता एता गायत्र्यो भवन्तीत्यथ खल्वत भाग-विपर्ययो भवति लोकविधां त्रिरात्र उपक्रतस्तं यथा-भक्त्यचिकीर्षीच्चे एते परे अहनी भागविपर्ययाद् द्रव्यसमासेन वर्त्तते द्वितीये ऽहस्यानि द्वैतीय-कानि भागान्वितानि तान्तार्तीयिकान्येतदेव विप-रीतं तृतीये खल्वत इयान्यत्तरूपाणि क्रियन्ते प्रजा-पतेस्तु वागत्तराक्षराणि चाज्यादिषु प्रजापतेर्वाग-त्तराणि यथोपलम्भ महस्वक्षराचराण्येकात्तराणि-धनं यौधाजय मेष आचार्यसमयो ऽथाप्याह यदा-त्तराणि प्रथम मह्भजन्त इतिं व्याख्याता अर्का-न्तथाज्यदोहानि पूर्वाविकौ व्यत्यस्य चात्तराणिधनं प्रथमे ऽहनि चिकीर्षन्नाज्यदोहानां प्रथमं तृतीय एव मित्र ब्राह्मणं भवत्यथाप्येषा मेतत् त्रिणिधनं तृतीये ऽभिरूप, मनु प्रथमस्य. करोत्यत्रैव सन्तानार्थं मिद भवति. इात्तरणिधनत्वादनुच्छन्दस मितरयो रैड

मन्त्यं करोतीडानुग्रहो . जगतीं वा खेन सामान्ते-नापिप्रादयिषीत् ॥ ५ ॥

उपवती द्वितीयस्य प्रतिपन्नवमाह्नागान्विमां कया ते अग्ने अङ्गिरस, इति होतुराज्यं करोति तृतीय मिति हि भवतीत्यर्थाप्नाह यत्सामा स्तोमो भवति तदा-ज्येषु निराहेति ता एताः कावत्यो यथा वामदेव्यचौ द्वाभ्यरात्रिकाण्युत्तराणि सन्तनीति, स्वयोनीति होतृ-कापृष्ठान्येतानि, छन्दोमचाहे प्रायश्चित्तार्थं गायत्र-पाभ्वं मैत्रावरुणसामैतद् वामदेव्यसदृशं तत् खलु बृहतीषु करोति त्रिंस्तानां बृहतीं पृष्ठेषु चिकीर्षन्न-भ्यर्चिन . नवाक्षराक्षरं भवति ककारषकारादि. रकारः सन्तनि ब्रह्मसामा स्ताविं मन्म पूर्व्यं मित्येता ब्रह्मप्रवादा इति सन्तन्यच्छावाकसाम. नवमाह्नागा-न्वित मथ खल्वच जामि भवति लोकविधां त्रिराच उपाकृतः सम्भिन्नं माभ्यां लोकाभ्यां मन्तरिक्ष मिति पाञ्चमिकों ककुभं करोत्येतस्या मक्षरं भवति ककार-षकारादि रकारः पिपीलिकमध्यां करोति वायुर्नो ऽयं चिरांचसतोभरं वाकारां ऽनुष्टुभा मचिकीर्षीन्नव-मिकी ह्युत्तरा अक्षरसमासो हि तान्त्रीयिकीषु तासां मध्यमा मुद्धरति द्वयराज्ञलिङ्गेति तचैतां करोति तथ

सखायः पुरूरुचं मित्येषा सखिमती यथा वामदेवास्य-
चस्ता यदावर्त्तयति परिवत्या प्रक्रमं परिजिहीर्षन्
नाना ऽग्निष्टोमसामानि नानात्वार्थी नानाच्छन्दस्सा-
वृत्तेष्वेवं भूयो नानात्व मिति. स यदिहानुष्टुभः
करोति वृहतीः कृत्वानुष्टुभो चो भवति * तचैतद्विशो-
विशीयं स्तयोभ्यापन्नं पुरस्तादेतत्स्थानं वाक्प्रवादो
ऽत्र भवति भागाऽग्विताम्नुक्थानि होता देवो अमर्त्यं
इति. तृतीयस्य होतुराज्यं हो इति. तृतीय मिति
हि भवतीति गीषूक्तं प्रायश्चित्तिसामैतस्मिन्नक्षरा-
न्तरं भवति रेफादि रकारः सतोवृहतीं करोति
त्रिपदा त्रिराचे ऽभिरूपेति सत्रासाहीयं मैत्रावरुण-
सामैतद् वामदेव्यसदृश मपुरस्तात् स्तोभं बहिः-
स्वारं यथा वामदेव्यं वारवन्तीय मग्निष्टोमसामै-
तद्गायत्रीसामापन्नं पुरस्ता देतत्स्थानं वाक्प्रवादो
ऽत्र भवति वागुक्तोऽयं त्रिराचो ऽपि वानुष्टुभोपपत्त्या
वाक्प्रवादेनानुग्रहो भविष्यतीत्यक्षरविक्रमे ऽयं त्रिरा-
चोऽपि वानुष्टुभोपपत्त्या अक्षरप्रवादेनानुग्रहो भवि-
ष्यतीति विद्वानविद्वानिति तु भवन्ति नाना साधु यं
त्रिराचक्षत्र नानर्त्त्विजो ऽचिकीर्षीत् कथ मविद्वा-

* "कृत्वानुष्टुभो वेति"—इति ख।

न्नृत्विक् स्यादिति त्वेवैतत्त्र सदस्यानेव प्रतिग्राहकान्
कुरुत इति ॥ ६ ॥

राजयज्ञ उत्तरस्तस्य यद्येवंविधोऽहर्योग एतान्य-
स्ताहान्यन्तो हि राजेति महानाम्नीर्मध्यमस्याह्नः पृष्ठं
करोति सर्वच्छन्दस्त्वासु सर्वपशूना मालम्भो न भवि-
ष्यतीत्यथापरातां वज्रीत्ता राजयज्ञेऽभिरूपा वज्री हि
राजेति कथं धर्मा इति कर्त्तव्या इत्येते तत्र ते चैव
कारणवर्णा ये वज्रेऽपि चेह स्वस्थानतरा: पृष्ठ्यं हि
भवन्त्यहीनं चाथापि बर्हिर्द मिहाशान्तं क्रियते
सर्वपशूनां मालम्भो व्यभि मेथिका: पृष्ठविलोपस्त-
त्रापि: शान्त्यर्थास्ते क्रियमाणा बृहद्रथन्तरयोर्द्धर्मान्
कारयेयुरित्यथाभि संयुक्तधर्मा इत्यथ बृहद्रथन्तर-
योर्द्धर्मान्न कुर्युर्महानाम्नीबलान्नु नूनं महानाम्नीनां
धर्मा: क्रियेरन्नित्यकर्त्तव्या इत्यपरं तत्र ते चैवा-
कारणवर्णा ये वज्रेऽपि च यः स्वाध्यायधर्मान् प्रतीयात्
कृत्स्नान् प्रत्येतु सर्हतीति ते वेलायांन्नोऽर्थस्तन्माध्य-
न्दिनीन् महानाम्नीभिः स्तुवीरन्नेको वा द्वौ वा
सम्प्रगायेतां नेतरे शृणुयुरित्येतान्येव मकुर्वन्तो
निर्वचनस्वाध्यायधर्मो ऽथापि यो बृहद्रथन्तरयोर्महा-
नाम्नीकारितान् धर्मान् मन्येत भूयस्त्वाल्पीयसि ऽनु-

सꣳहरेत् प्रत्यक्षे च परोक्षायामनुचर्यं गमयेदित्यत-स्तत्पापीयो यो बृहद्रथन्तरधर्माननुकृत्वा महानाम्नीनां धर्मान् कर्त्तव्यान् मन्येत समानोपादानाꣳ समान-विधानानाꣳ सतो य एकान् कुर्यादेकान् न किंꣳ सोऽत ऊर्द्ध्वमन्याहन्यादं व्याख्याता अनुष्टुभः प्रति-पदस्त्वनुष्टुभैताभिः प्रच्युता मुपवतीं द्वितीये ऽहनि प्रति-पदं करोति कविमन्तं प्रथमात् प्रच्युतं तृतीये ऽह-न्यनुगृह्णाति वामदेव्यं महानाम्नीभिः प्रच्युतꣳ स्वे स्थाने ऽनुगृह्णाति पार्थुरश्मं ब्रह्मसाम पङ्क्ति प्रति-प्रयोजना महानाम्न्य एतत् पाङ्क्तं त्वचंसामाथकार-णिधनं ताभ्यां प्रच्युते सन्तनिनी माध्यन्दिने ऽनु-गृह्णात्याभीक्ष्ण्यामानीमा प्रत्येषाता मिति ॥ ७ ॥

अथैतस्य पतन्तकस्य प्रथमे ऽहनि वैष्णवीष्व-नुष्टुप्सु पावमानीषु बहिष्पवमानं कल्पये दित्येक आहुरेतत्प्रकृतौ दृष्टं भवतीति नैतदस्तुनुः स्तोमेषूप-पद्यत इत्यपरमेतस्मिन्नेव बहिष्पवमाने गायत्रीः पावमानीं रावपेदेतदिह ह्याविष्कृतं भवतीति चतु-ष्टोमकारितास्ता भवन्तीत्यपरं गायत्रीष्वेव कल्पये-दित्यथ खल्वाहैते एव पूर्वे अहनी इति तत्रैके पातन्तके प्रतियन्त्येतं विधाय प्रदेशो भवतीति प्रकृत्यपश्रया

विकारा भवन्तीत्यपर प्राकृतस्यैवाश्वमेधस्य प्रतीया-
दित्यथापि ते नानास्तोमा एकस्तोमो यत् भवति
तत्र स्वतन्त्रा एकाहाः स्युरित्येके बहुधैकाहानाꣳ
स्वातन्त्र्यं दृश्यते यथायुष्कामे षडहे नवरात्रयो
रिति त्रिरात्रतन्त्रा इत्यपर मेवं च तन्त्राविलोपो
ऽपि चैषो ऽहीनन्याय इत्यषोडशके गोगायुषी इत्यपर
मेवं दृष्टे त्रापि चैवं प्रदेशो भवतीत्यथैष वैदत्रिरात्र-
स्तस्य त्रिवृत्स्तोमाः स्युः षोडशिन उत्तमस्यातिरात्रस्य
षोडशं प्रथमꣳ रात्रिपर्यायं तावत् स्तोमो यथा-
त्रिरात्रो नाना षोडशिसामानि नानात्वार्थो नानदं
प्रथम उद्वꣳशीयं द्वितीय एतदानुष्टुभꣳ हरिवर्णोनि
यथा गौरीवितं तस्य स्थाने तैरश्च्य मेतत् पूर्वाभ्याꣳ
समायं न्याय्य उत्तमे षोडश्यथैत उत्तर एतां कामा-
नभ्युपक्रता यथैतद् ब्राह्मणꣳ स्तोमकारित आवापो
ऽन्ववसरवमत्यवरूढान्युत्तमस्याह्न उक्थानि लोक-
विधा त्रिरात्र उपक्रतो रोहोपकारो ऽथाप्येव मवरा-
हतꣳ सवन मिति न्यायक्लृप्त उत्तरो न्यायक्लृप्त
उत्तरः ॥ ८ ॥

अथैष चतुर्वीरो बृहद्रथन्तरपृष्ठ एव न हि षाड-
हिकान्यनुभवन्ति नान्यो वरलुलुपसीत ते यन्नामा-

छन्दस्सु ब्राह्मणेनैव तद्व्याख्यातं कानि तन्त्राणीति चतुरहतन्त्राणीति गौतमस्तद्विजानीमस्त्वतुर्थेऽहनि चतुर्थप्रतिपद मादिशेकाहतन्त्वाद्वाचि मुपजिगामिषन्नथ प्रतां करोतीति चौण्यांह्लीनिकान्येक मेकैकाह्निक मिति धानञ्जय्य एवं पर्वणाह्नीनत्वादान मेकाहतन्त्वाद्वाचे, क्वायः स यदेतद्देतदन्त्वान्तर२ स्तोमकारित आवाप उद्धरति जनुषेकवौ स्तोमकलाथैस्तत्र ज्योतिष्टोम्यौ करोति तयोः स्थाने द्वावमिक्वौ नानात्वार्थौ ऽथ यत्र षड्ढो भवति साप्तमिकीं तृच्न ककुभं करोत्यसञ्चाराय तत्र खलु पदस्तोभान् करोति चतुरोऽयं वीरानुपक्रतस्त एते चत्वारः समानग्रानयः समानार्षेयाः पुन्नामधेया गणन्नामधेया गणेडा गणनिधना अपि वा चातुर्विध्याद्देव क्रियेर२स्ता२स्तु यद्देवं प्रयुङ्क एव मिडान्तो रोहोऽपि चैवं दाशरात्रिको ऽवसानो भवतीति तान् खल्वन्यान् करोत्यचैषा२ स्वं छन्द इति तान् कुशल यज्ञिन्यासु धर्त्ता दिव इत्युत्तम एतासु स्वयोनि रथाणेता अन्तलक्षणैः सम्पन्ना इति व्याख्याता अर्कास्तेषां तदेवानुपूर्व्यं यत् त्रिरात्रे गौष्क्तं प्रायश्चित्तिसाम पदस्तोभबाध मर्कं द्विपुदास्वनुगृह्णाति तेन प्रच्यते पारत्लीय मुष्णिाह्वन्तसाम

माप्रच्योष्टेति विपरिहरत्यानुष्टुभे अजाम्यथ एतेनैवो-त्तरे व्याख्याता उद्धरति पदस्तोभान्न ह्येते चतुरो वीरानुपक्रतास्तच्च कुशलं यन्नित्यादिपदस्तोभमपाया-द्रक्ः स्वं स्थानं समापद्यते तस्यानुसमापत्तिं स्युध्यवांरवन्तीये समापद्येते अतो यो द्रव्यविकारः स्तोभकारितः स भवति ॥ ९ ॥

अथ खल्वाह वसिष्ठस्य जनित्रे भवत इति कस्येदं ब्राह्मणं स्यादिति बृहद्रथन्तरयो रविप्रयोगस्येत्याहु रेते विश्वोवसीयसो आजनित्रे भवत इत्यपि वा रथन्तरस्यैव द्वियोगस्यैतद्धि वासिष्ठ मित्यपि वा रथं-न्तरस्य ह्यतस्य वासिष्ठस्यैते वासिष्ठे भवत इति जनित्रे एवानुकल्पयेदिति कौत्सो जनित्रे भवत इति सति किं मन्यैःदनुकल्पनान्न त्वेवानुकल्पयेन्न ह्येते आनवकाश्यान्ननुकल्पयतीत्येतेषां त्वेव विचा-राणा मेकस्यैतद् ब्राह्मणं स्यादेकस्तोमता मिवाक्ता द्दिदर्शयिषन्नुत्तमे भागस्तोमान् करोत्येते प्राप्त-स्यांना इति पञ्चरात्रस्य चतूरात्रेणैव पृष्ठवादो व्याख्यातस्ते खलु स्वासु करोति न ह्ययं चतुरो वीरानुक्तो ऽथापि नानाभागश्चतूरात्रो ऽथेह समान-भागे चतुर्थपञ्चमे इति कानि तन्त्राणीति पञ्चाह-

तन्त्राणीति गौतमस्तच्चतूरात्रेणैवं व्याख्यातं चत्वार्यहीनिकान्येक मैकाहिक मिति धानञ्जय्यस्तत्तेनैव व्याख्यात मग्निष्टोमः प्रथम मह रुक्थानि मध्ये दशरात्रन्यायेन यत्र सᳪंस्थाभिप्रयुज्यत एषा ऽभिप्रयुज्यंत उद्धरति षोडशिनं चतुर्थादिराजा मन्वंपायᳪं स्वराजोपेयुः स्तोमस्य वा लोभाद्यथाग्रेम मतिरात्रे करिष्यन् भवति तन्न समवैविचारयिष्णोदुद्धरत्यातीषादीय धर्मिणि तत्परा षडहे धर्मिः भवति तत्र याथात्म्यात् क्रोशं प्रत्याहरत्यपि वा अध्येनं प्रच्युत मिहानुग्रहणाति तद् भवत्यूर्द्ध बाहते ऽहनीति स्तोमकारितं आवाप एतेनैवोत्तरो व्याख्यातः स्तोमकारित उद्धारः सप्तदशं षोडशिनं करोति यो वाघ्नः स्तोमः स षोडशिनो न्यायेन यो वाङ्क्ति भक्तिरेवं मुत्पन्नो हि भवत्यथाप्यनादिष्टव्यूहेन भवत्यथा कथं महीनाम्नो रात्रेरितीति क्रसीयानित्यहःस्तोमं स्वे त मनु यन्तं पश्यामी ऽथाप्याह सप्तदशᳪं स्तोमानातिमन्ती व्रतामि मुत्तर मुपक्रतः स खल्वेकाहा क्रमाप्ता व्याख्याताः ॥ १० ॥

ऋतुषडहे कथᳪं रात्रिरित्यक्रात्तवेरति शौचिवृचिरेव मुत्पन्ना हि भवत्यथाप्यनादिष्टां व्यूहेन भव-

त्यथापि कथ महीनाऽङ्गो रात्रेरपायो ऽभविष्यदित्य-
थापि कृत्स्नतायै वै नून मिह रात्रिः क्रियेत कृत्स्नो-
ऽयं षडह इत्यथापि ऽत्र एष चतुर्थो भागो रात्रेः कृत्स्ने तत्
कृत्स्नो ऽयं षडह इत्यथापि ऽत्र एष चतुर्थो भागो रात्रेः मव्य-
र्दितां मत्यक्रमिष्यदिति कर्तवे ऽति गौतम आदिष्टा
कल्पेन भवत्यथापि ऽत्र एषाहीनसंस्था यद्रात्रिस्ता मव-
सानभूतां षष्ठ महरागच्छतीत्यथापि ऽत्र एषो ऽहीनन्यायः
सर्वे ते रात्रिमन्तो ऽथाप्यरात्रिकं व्रतं तस्यान्ते निपा-
ताद्रात्रि मुपधीयमानां पश्यामो यथा सप्तरात्रेष्व-
थापि यः पृष्ठावलम्बनस्य पञ्चमादनादेशाद्रात्रि
मुपनयेदथापायाद्रात्यपायाच्च स्तोमप्रत्यवरोहो ऽपि
सोऽर्थागमाद्रात्रिं प्रत्येतु महतीति यद्वेतदेव मुत्पन्न
इत्यनन्तं वै तत्र भवत्यन्तदर्शना रात्रिरिति यद्वेतद-
नादिष्टव्यूहेनेति नित्यत्वान्न नून मेनानादिशतीति
यद्वेतत् कथ महीनाङ्ग इति कथं वा अपरातिरात्रिको
ऽभविष्यदिति पश्यामस्त्वाहीनिकेभ्यस्त्र्यहेभ्यो रात्रे-
रपायं यथा त्रिरात्रेषु यद्वेतत् कृत्स्नो ऽयं षडह
इति कृत्स्नो ह्येव षडहो रात्र्या तु कृत्स्नतरो भवि-
ष्यतीति यद्वेतदत्यक्रमिष्यदित्ययमह एवाभिक्रान्तो
भवत्यतिक्रामन्तं च पश्यामो यथाप्तोर्यामे गौरीविता

पायान् पृथक् स्वाराणि स्तोत्राणि करोति नाना साधुरहीन इति स यदेतान्येतानि रूपसम्पन्नानीति ॥ ११ ॥

आयुष्कामयज्ञ उत्तरस्तत्र त्र्यहो समस्य निदधात्यहीनत्र्यहं चैकाहत्र्यहञ्च कस्य हेतो रिति त्रयः प्राणापानव्याना इत्यग्निष्टोमसंस्थं ज्योतिष्मेषास्य प्राकृती संस्था ऽऽप्येतया संस्थया अन्यथा ऽपि नानात्वयाविमौ त्र्यहौ तानुपक्रमसंस्थया प्राचिक्रमिषोदषोडशिका रात्रिः स्तोमस्त्वावेणा-षोडशिको ह्येवायुर्भवतीति द्वितीयस्याह्नो वासिष्ठं माध्यन्दिनात्यं स्यादिति शाण्डिल्यः षष्ठार्थनेद्पुरा प्रच्यवते नेह षष्ठार्थ इति पार्श्व मेवेति गौतम एतत् समूहसाम समूढावच्छेदोऽयं भवतीति तृतीयस्यानुष्टुभि बृहत् करोति त्र्यहे समं बृहद्रथन्तरे युयुत्समाणौ जाम्यर्थं चैव स्यात् पृष्ठ्यावलम्ब उत्तरस्तस्य पञ्चाहो बृहद्रथन्तरपृष्ठ एव विश्वजिति हि पृष्ठानि करिष्यन् भवत्युत्तराति षोडशिन चतुर्थात् तत् पञ्चरात्रेणैव व्याख्यातं त्रयस्त्रिंशानि पञ्चमस्याह्न उक्थानि रात्रिकारितो हि स्तोमप्रत्यवरोहस्तान् विश्वजिति करिष्यन् भवति भवति ॥ १२ ॥

अथातः सप्तरात्रास्तत्र पृष्ठ्यं वृतं सप्तमं कर्म्मस्थे-तद्ध्यतं पृष्ठं भवत्यथाप्यनङ्ग मेतद् वृतस्य यदुक्थानि तन् ज्योतिष्टोमानि स्वस्तोमान्याहरति षोड़शि-मती रात्रि रहीनन्यायेनाथाप्यनङ्ग मेतद् वृतस्य यद्द्वाविंस्तत्र यैव कृत्स्नतमा रात्रिस्तमा हरतीति सप्तदश मुत्तरस्य वृतं स्तोमकारित उद्धार स्तस्य स्तोमान्ययीभुक्थानीति किं स्तोमानि स्युरित्येक-विंशस्तोमानीति गौतम एष एषां प्रकृतिस्तोमो (न) भवति न मन्वियुरित्येतत् स्यात् सप्तदशस्तोमानीति धानञ्जय्य एषोऽस्य वृतस्य स्तोमो भवति न मन्वियु-रित्येतत्स्यात् पञ्चविंशस्तोमानीति शौचिवृक्षिरेष वृतस्य प्रकृतिस्तोमो भवति न मन्वियु रित्येतत्स्या-दथाप्येवं तासां स्तोत्रीयाणा मनुग्रहो भवति याः पञ्चविंशाद् वृतात् सप्तदशे क्रियमाणेऽपयन्ति द्विपञ्चस्तोत्रीयेनानुगृह्यते ते चेदनुजिघृक्षेत् त्रिणवं प्रथम मुक्थं कुर्यादेकविंशं षोडशिनं करोत्येषो ऽस्य प्रकृतिस्तोमो भवत्यथाप्येवं तासां स्तोत्रीयाणा मनुग्रहो भवति यथैतच्छौचिवृक्षिरिति छन्दोसपव-मान मुत्तरस्य वृतं स्तोमकारित आवापोऽथ खल्वत्र विधर्माकरिष्यं स्तोमच्छाचेयं धष्याख्यं करोतीति

इन्द्रयोः सत्रमोर्याथान्तर्यात् पूर्वं मीदन्ते ऽथापरतस्या-
विकृतं निधनं भवत्यविकारः पूर्वो ऽविकारादित्येक-
विंशान्युक्थान्येकविंशस्तोमं षोडशिनं करोति
तद् व्याख्यातं प्रथमे सप्तरात्रे ऽभ्यास उक्त उत्तरस्य
पञ्चाहो बृहद्रथन्तरपृष्ठश्चतुर्थस्याह्न एकविंशः षोडशी
पञ्चमस्याह्नः पार्थस्य लोक आकूपारं वाचेयं वेति
विचारयन्ति नानापुरुषकल्पौ ख्याता मिति ह स्माह
धानञ्जय्यो ऽन्य एवाकूपार भरोचयिष्यतान्य आचेय
माचेयं चैवाभिरूपतरं पञ्चमे ऽहनि स्थानसम्मितं
पञ्चमस्याना अन्नय इति चतुर्थस्याह्नः शुद्धाशुद्धीयस्य
लोक आकूपारं पञ्चमस्याह्नः पार्थस्याचेयं पार्थं चैव
नित्य महः पार्थं व्याख्यात माचेयं नु खलु कुर्वत
उभयोरनुग्रहो भवति वृते हि पार्थं करिष्यन् भवति
चतुर्विंशं बहिष्पवमानं सप्तदशस्तोमं वृतं करोति
तत्र त एवोक्थानां स्तोमं विचारयेत् सप्तदशे
वृते ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे अष्टमः प्रपाठकः ॥

॥ अथ नवमः प्रपाठकः ॥

प्रतिष्ठाकामयज्ञ उत्तरः स खल्वेकाहस्ते व्याख्याता जनकसप्तरात्रे चत्वार्याहीनिकान्यहान्याहीनिकतन्त्रायणन्तत्वा दृहरति षोडशिनं चतुर्थात्तद् व्याख्यातं व्याख्याता त्र्यकास्तेषां तदेवानुपूर्व्यं यत् त्रिरात्रे धर्त्ता दिव इत्युक्तम एतास् स्वयोनि- द्वितीयस्याह्नः सौभर मुक्थानां ब्रह्मसाम कुर्यादिति धानञ्जय्यस्यैककुभं हि चतुर्थे करिष्यन् भवत्यौपगव मेवेति गौतमो ऽतिरात्रे सौभरं करिष्यन् भवत्येव मुभयो रनुग्रह इति षोडशिमती रात्रि रहीनन्यायेनाविव चतुष्टोमः षोडशिमानिति गौरिविृत्तिः शम्बूपुत्रो नात्र च नेति राणायनीपुत्रः पृष्ठाः स्तोम उत्तरस्य षडहो बृहद्रथन्तरपृष्ठ एव विश्वजिति हि पृष्ठानि करिष्यन् भवति चतुर्थस्याह्नः प्रत्यस्मै पिपीषत इति गौरीवितं षोडशिसाम विराजा मन्त्वपायं स्वराजोपेयुः पृष्ठापायाद्रेत्यौपयन्ति तवैतद्धाढंच्युल मेतज्ज्ञायत्रीसामेहकारवत् षणिधनं यथा रैवत्यो विपरिहरे दौच्चारेणेत्र इति गौतम एव मिडारम्भयोरुहतीति न विपरिहरे दिति धानञ्जय्यो ऽपि च्छेद मजामि स किमर्थो निरयं कल्पं

व्याकर्येदित्यष्टरात्रस्याषोडशिका रात्रिस्त्रातुष्टोमन्या-येनाथापि कृतः षडहे षोडशीतग्रायुष्कामयज्ञ उत्तरः स यन्नवरात्रो नव प्राणा इति त्रिकद्रुकानुपदधाति छन्दोमसाहस्याद्दर्शप्येत ऊनस्य 'पूरयितारो षोड-शिका रात्रिः स्तोमस्याचेणाषोडशिको ह्येवायुर्भव-तीति पशुकामयज्ञ उत्तरस्तत्र पञ्चाहं करोति पाङ्क्ताः पशव इति यदु विश्वजितं पशूनानि पृष्ठा-नीति त्रिकद्रुकानुपदधाति छन्दोमसांदृश्यादर्शाप्येत ऊनस्य पूरयितारस्तान् पुरस्तात् पञ्चाहस्य करोति विश्वजितं हि रात्र्युपायाय कोऽस्मिन् 'भक्त्यायुषो-ऽनुष्टुभि बृहत्करोति च्यहे समं बृहद्रथन्तरे युयुक्ष-माणो ऽजाम्यर्थं वैव स्याद्वाकं जन्म वेति विचारय-त्यथापि नैताः स्वतन्त्राः स्तोमविधां बृहदा-पद्यते तत्राकूपारं तचसमाप्तये तदेतन्नवमाहा-गान्वितम् ॥ १ ॥

अथैष दशरात्रो बृहद्रथन्तरपृष्ठ एव तत्र खलु विश्वजितं दशमं करोति स खलु विश्वजित् क्रिय-माणो दशमस्तन्त्रं प्रत्यूहति तत् प्रत्यूह्यमानं पूर्वे तन्त्रे प्रत्यूहत्यत्र यदेवैकं पुरा सप्तमे कृतं तन्त्रं भवति तत्प्रच्यवते ऽथैते षष्ठ-नवमयोस्तन्त्रे व्यत्यस्यति षोड-

शाह्विकैरयꣳ स्तोमैरभि विधीयते स त्रयस्त्रिꣳश स्तत्र मचिकीर्षीत् तस्येतरस्थानं परीतं भवत्यत्र खल्वयं सर्वो दशरात्रो नानातन्त्रो भवति समूहति बार्हद्रथन्तरपृष्ठ्यान्नित्याभिरनित्याभि ह मात्राया मकरिष्यदनित्यो ह्ययं दशरात्र इति नित्यासु चतुर्थपञ्चमयोर्जगत्यौ शास्वतुर्थे नित्याः सप्तमे ऽहनि ताः करिष्यन् भवत्यतो नित्याः करोति तद्दशेन पञ्चमे कुशलं यदनित्यास्त्रिष्टुभो नित्यानित्या एवाचिकीर्षी दित्यपर नित्ये ह तन्त्रे अनित्यौ स्तोमौ यत्र नित्यानित्या अभिरूपा यद्' पृष्ठ उभयोरनित्या उभयꣳ ह्येव तत्रानित्यꣳ स्तोमस्यैव तन्त्रञ्च नित्यास्तु परयोरह्नोर्नित्याभिर्ह्येतस्य द्व्यहस्य समूहो नित्योऽस्तु नवमे ऽन्तर्विधा हि दाशमिक्यो विश्वजित्यन्तर्विधाः करिष्यन् भवति तत्र कुशलं यज्ज्योतिष्टोम्यौ करोति तन्त्रान्विते च पृष्ठान्विते चाथ खलु दीर्घतमसोऽर्कं सप्तमे ऽहनि करिष्यन् भवत्यन्तसामान्त इति तत्त्वस्यः श्वशिरामिकः सप्तमे त्रय एवैको ऽग्नेरर्कस्तन्त्रापेतस्तन्नवम महर्हरति ॥ ९ ॥

अथ द्रव्यसमुद्देशो यानि यथास्थानं व्याख्यातानि तानि यान्ययथास्थानं तैरेवाष्टभिः पर्याये-

त्वेषम मन्वयं समन्वीक्षेत नाना ब्रह्मसामानि नाना-
त्वार्थः श्यैतनौधसवर्णानि बार्हद्रथन्तरपृष्ठान् नाना-
ऽग्निष्टोमसामानि नानात्वार्थं ऐडानि भूयिष्ठानि
करोति सामान्तर्थं स्थानं तत्सामान्तं मथाप्येष तृतीय-
सवनसामान्तस्त मदिदर्शयिषोर्नानाच्छन्दसेव भूयो
नानात्व मिति तानीमानि भवन्ति संप्रच्छन्दांसि
नवाहं नानु भवन्ति तत्र ककुभं च विराजश्चोप-
प्रयुङ्क्ते सा प्राप्यांस्तानि कुशलं यद्रोहिणः प्रयुङ्क्ते ऽग्न
आयूंषि पवस इति प्रथमे ऽहनि करोति कस्य हेतो-
रिति शिशुः संयोगोऽय भवति सैषाग्नेयी पवित्रा
ऽभिव्याहारा शुद्धार्थेऽभिरूपा ऽथापि शश्वदिहाग्निः
ष्टुतं तैत्तिरीया अधीयते सैषाग्निष्टुदनुग्रहाय स्यात्
स्वादिष्ठा मामदीया मेषा स्वादुमती पठिताभिव्या-
हारा शुद्धार्थे ऽभिरूपाथापौराकाहिकी भवत्यथ सत्वम्
पौष्कल भवति सुद्धांस्तस्तद्भवति यत् पुष्कल मित्यथा-
पैराकाहिक मेवाहसमासं शश्वदिह तैत्तिरीया
अधीयते नाना भक्षे-निधनानि न दाशरात्रि-
काणि मध्ये-निधनान्यनुभवन्त्यतच्छन्दस्यान्युपप्रयुङ्क्ते
आ सोम स्वानो अद्रिभिरिति तृतीयस्य बृहती सप्तदशे
साध्यासां कनिष्ठं भवत्यन एतां करोत्येषा सामन्या

तृचप्रथमः तृतीयस्थानेति बभ्रवे ऽनु स्वतवस इति षड्टचं षष्ठसप्तमयोर्विहरति सन्तानार्थी नवर्च मेतस्य प्रथमे ऽहनि तृचं कृत मुपास्मै गायता नर इति त्र्यचं सप्तमस्य समूढाज्य मेतत् स्थानसम्मितं छन्दस्ये उत्तरयो रेते रूपसम्पन्ने इत्येते रूपसम्पन्ने इति ॥ ३ ॥

अथैष कुसुरुबिन्दस्तत्र खलु बृहद्रथन्तरे ते करोति राथन्तरबार्हता ह्येते स्तोमा इति कानि तन्त्राणीति दशरात्रस्तोमं त्रिककृत इत्येके द्वैपृष्ठ्याद् द्वे तन्त्रे स्याता मित्याचार्याः प्रथमद्वितीययोरिति शौचिवृक्षिरते आह्नीनिके इति तदिदं प्रथमतन्त्रं प्रवर्तीभिः कृप्त मपकृष्य मन्यत्रोपक्रमाद् वात्यशिष्यंस्तु भवति तस्य स्थाने ज्योतिष्टोमं करोति प्रथमस्य प्रथमं राथन्तरस्य राथन्तर मित्यैकाहिके इति धानञ्जय्य एव मपर्वविलाप इति तन्विदं गोरतन्त्र मन्तविधाभिः कृप्त मपकृष्य मन्यत्रान्ताद्वात्यशिष्यंस्तु भवति तस्य स्थाने द्वितीयतन्त्रं करोति द्वितीयस्य द्वितीयं बार्हतस्य बार्हत मिति स खलु दशमे ऽहनि द्वितीयतन्त्र मुद्धृत्य तस्य स्थाने ज्योतिष्टोमं करोत्येकाहतन्त्राद्दाशि मुपजिगमिषन्नुक्तो द्रव्यागमः समेषु स्तोमेषूभयोस्तन्त्रयोः

पुनर्मनां वृहतीं करोत्युभयोर्ह्येषा निद्येत्युष्णिक्ककुभौ वा अपि समाने भवत इत्यपर द्विरात्रन्याय इवेह भवति. द्वैतन्त्र्येण द्वैपृष्ठ्येन तत्र द्वैरात्रिका उष्णिक्ककुभः करोत्यथ यत्र राथन्तरस्याङ्गस्तृचार्थो भवति तद्यथादश्ववर्तुर्वीरे व्याख्यातं तथा तत्र भवति बार्हतेष्वहस्सु यौक्ताश्व-हाविष्मते अग्निष्टोमेषु. हाविष्मत मौक्त उक्थ्येषु सौक्त मुक्थ्यसामेति. विभक्तान्युक्थानि राथन्तराणि राथन्तरेषु बार्हतानि बार्हतेषु तदेवार्काणां स्थानं यद्दूशरात्रिन्तयोः सन्नगतयोर्बार्हतस्य कविमन्तं पर्यास कुर्वीत कालेयं मध्ये वाकसामाभिप्लवन्यायेनैकविंशो ऽतिरात्रो य एकस्तोमानामुत्तमस्तस्य स्तोमान्वयी षोडशीत्यविचारमेकविंशः ॥ ४ ॥

अथैष छन्दोमवान् बृहद्रथन्तरपृष्ठ एष तत्र खलु विश्वजितं दशमं करोति स खलु विश्वजित् क्रियमाणश्छन्दोमान् प्रत्यूहति ते प्रत्यूह्यमानाः षष्ठमहः प्रच्यावयन्ति पृष्ठ्यावलम्बस्य पञ्चाहः प्रथमस्याह्नः प्रतवद् बहिष्पवमानं पञ्चमस्याह्नो ऽसृग्रत प्र वाजिन इत्यनुरूप इति शाण्डिल्यायन उपरिष्टादिमं नवर्चं मावर्त्तयिष्यन् भवति. कथ मक्तस्या-

वर्त्तनं स्यादिति नवाहयोगा इमा भवन्तीति धानञ्जय्यः कथं समापयिष्यन्नवाहं नवाहयोगाः कुर्यादिति व्याख्यातः समूह ऋतावान् वैश्वानर मिति होतुराज्यं वैश्वानरीयस्य स्थाने वैश्वानरीयं त्रैककुभे उत्तरयोरेते रूपसम्पन्ने इत्युद्धरति काण्वरथन्तरमजामि हि भवति नचैतत् सोमसामैव मिडा रूपाणां वृहतीति गौरीवितापायात् पृथक् स्वाराणि करोति नाना साधुरहीन इति स यदेतान्येतानि रूपसम्पन्नानीति प्रथम माचेयं नमसोपचत्यै तदु वृहद्वयोनि बार्हत ऽहनीति स्थानसम्मिते उत्तरे इत्येते रूपसम्पन्ने इव स्वाराणि त्रैष्टुभानि माध्यन्दिनान्यान्येतानि रूपसम्पन्नानीतरडानि जागतान्याभवान्यानीडामत्तयो हि छन्दोमा इति स यदेतान्येतानि राथन्तरबार्हतेडानीति नवमे ऽहनि दीर्घतमसोऽर्कं मनुकल्पयन्त्येके ऽहर्गार्चिण स यदनुष्टुभ्येतदस्य समूढं वा न भवति तचाक्रूपारं तचसमाम्नयेऽथ येनानुकल्पयन्ति वृहत्यां वानुक्रमं मन्यमाना यथा वैतदर्गोऽर्कः सप्तमे ऽहनि कृताकृत इति समापद्यन्ते दशमे ऽहनि सामानि समूढवाजजिद द्विपदास्वनुगृह्णाति संयुक्त मेतेनाह्ना भवतीति ॥ ५ ॥

कथं दशममधर्मा मानस मिति कर्त्तव्या इत्येके तदाहुर्त्त्रायत इत्यकर्त्तव्या इत्यपरं मद्दशमं चं लुब्धश्च दशरात्र इत्यथाप्यकृतेन विश्वजिता. मानसं मध्य-शाययिष्यदथाप्यनुष्टुप्संयोजनात्ते जागत मिदं स्थानं भवत्यथापि सचोत्पादास्ते ऽहीनोऽयं भवतीत्य-भिचर्यमाणायज्ञ उत्तरः स खल्वेकाहकृतस्ते व्याख्या-तास्तस्य सवनभाजस्तोमाः. सम्यावक्षाजो वेति त्रिवा-रयन्त्येवं सवनस्तोमाः सम प्रयुक्ता भविष्यन्ती-त्युक्थ्यसंस्थं ज्योतिष वृहत्पृष्ठं कार्हतं तच्च द्विती-यं. हि स्थानं मापन्न मिति. तत्र यो दृष्यविकार उक्थ्यत्वाच्च वृहत्पृष्ठत्वाच्च स भवत्यपि च समन्तं समन्तीकारायाथात एकादशरात्रो दशरात्रान्ता अहीना द्वादशाहप्रभृतीनि सत्राणि. किं मेकं स्थान मन्तरीया मिति वैकादशरात्रं करोति पृष्ठ्याव-लम्बस्य पञ्चाहः. पृष्ठ्यस्तोमस्य प्रष्ठ महरिति पयसा प्रष्ठ मह रभ्या राजति स × × ता * पयोधापोव द्वे वृहत्यौ स्वरावृक्तौ वृहती † पुनः कारवु रथन्तर स्वं लोक मित्यज्ञाम्यर्थं व्याख्यातास्छन्दोमा दशमस्य स्थाने चतुष्टोमं करोति कस्य हेतोरिति छन्दोमस्य

* 'स्वरांदुक्त'—इति ख। † 'वृहतीति'—इति ख।

ममेत्यग्निष्टोमस्यात्यग्निष्टोमꣳ स उ छन्दो रथन्तरपृष्ठो ज्योतिष्टोमस्तनो यथा दशम महरिति ॥ ६ ॥

कथं दशमधर्मा मानसच्छन्दोमस्य छन्दोमवत्यग्निष्टोमस्यात्यग्निष्टोमꣳ स उत्तररथन्तरपृष्ठो ज्योतिष्टोमः कथं दशमधर्मा मानसमित्यकर्त्तव्या इत्येके स्वेन नामधेयेनैकाह आशिष्यते चतुष्टोमो ऽग्निष्टोम इत्यथापि न दाशमिकं लिङ्गं दृश्यते यथैतद् बहिष्पवमानस्यावृत्तिः साम्नां विप्रच्यावन मनुष्टुभः पराचीर्विकीर्षेति कर्त्तव्या इत्याचार्या ये ऽन्ये मानससंयुक्तेभ्यः संस्थापनीयं मानसं चतुष्टोमो ऽग्निष्टोम इत्यथाप्यकृतेन विश्वजिता मानसमध्यगाययिष्यदथापि सर्वोत्पादं नाहीनक्रतावचिकीर्षीद् दृश्यते तद्दशम मृते मानसात् तथा मानस मृते दशमाच्च चैतद्दशमस्य यथाव्याख्यातं दशमसंयोगास्तु कर्त्तव्या एष आचार्यसमयो ऽथापि तन्त्र मद्दर्शाचे बलिष्ठं ब्रुवत उच्चा-स्वादिष्ठे दाशमिक्यौ दृश्येते अथापि स्थानेन भागागमेन तच्चोपविना छन्दोम्येनेति स चैव चतुर्विंशो दाशमिको ऽन्ते दृश्यते यदेतत् स्वेन नामधेयेनैकाह आदिश्यत इति बहुधैकाहाः स्वेन नामधेयेनादिश्यन्ते यथैष एवाश्वचित्राचे ऽभिप्लवे च

त्रिककुदः इत्यथैनां नाहीनिकृंतमान् ब्रूमहे यथो एतस्मिन् द्वाहमिकं लिङ्गं दृश्यत इति ब्रूमो येषामाख्या- ख्याति संस्थानं तु सामव्यूहस्य समूढो दशरात्रो दृश्यते च बहिष्पवमानस्य नावृत्तिरन्यासु चानुष्टुप्सु दशमतश्च यथा त्रिककुभः ॥ ७ ॥

तत् किम्प्रभृतयोऽहीना इत्युक्थ्यप्रभृतय इति बहुशाखिनो मुहूर्त्तमात्रा अग्निष्टोमे स्तनशस्त्रैर्नाभि- धीयन्ते ता अद्यापि विधीयत इति शश्वदङ्ग षोडशि- प्रभृतय एव भवन्त्येवैष चतुर्थो भागः प्रथमं स्थानं लभते सर्वे भागा आप्यन्ते सर्वे भक्षा यः स पुराहीनो भवति सोऽद्याहीन इति शश्वदङ्गातिरात्रप्रभृतय एव भवन्ति सर्वमादित्यचरितमभि विधीयत उभौ वर्णौ कृतकृतिरेवात ऊर्द्ध्वं शश्वदङ्ग द्विरात्रप्रभृतय एव भवन्ति द्वे पृष्ठे चर्यो लभते द्वयान्यहानि राथन्तर- बार्हतानीति तदिदं बृहदतिरात्रे स्थानं तदद्य स्थानं लभत इति शश्वदङ्ग त्रिरात्रप्रभृतय एव भवन्त्येव महर्भाजो ऽहस्सवनभागाः स्वस्थानास्त्रिरात्रावनुष्टु- ब्विति शश्वदङ्ग चतूरात्रप्रभृतय एव भवन्त्येवैष चतुर्थो भागो ऽहर्भजते यथा पूर्वे भागा इति शश्वदङ्ग पञ्चरात्रप्रभृतय एव भवन्ति शुध्यन्त्यु हैतच्चतुर्थमहः

पञ्चमे ऽहनि रात्रिः सञ्जत इति वा शश्वदङ्ग षड्-रात्रप्रभृतय एव भवन्त्यचैष चतुर्थो भागो भूयिष्ठभाग भवति शश्वदङ्ग सप्तरात्रप्रभृतय एव भवन्त्यासप्तान् नानात्वानि वर्त्तन्ते नाना साधुरहीनं इति शश्वदङ्-गाष्टरात्रप्रभृतय एवं भवन्ति शुध्यत्यु हैतत् सप्तम महरष्टमे ऽहनि रात्रिः सञ्जत इति शश्वदङ्ग नव-रात्रप्रभृतय एव भवन्त्यष्टरात्रे पुनरभ्युद्धृतेषु भागेषु जगत्यस्थाना भवति सायस्थानं लभत इति शश्वदङ्ग दशरात्रप्रभृतय एव भवन्त्यालद्विपरार्द्धा महर्नानात्वं यद्दशम नाना साधुरहीन इति शश्वदङ्गैकादश-रात्रप्रभृतय एवं भवन्ति शुध्यत्यु हैतद् दशम मह रैकादशे ऽहनि रात्रिः सञ्जत इति ॥ ८ ॥

अथाय द्वादशाहो ऽहीनो भवती३ सत्र मित्य-हीनो भवतीत्याहुरेको दीक्षेतेति भवत्यथापराहीनि-कान्यहानीत्याचक्षते दाशरात्रिकाण्यहान्यथापराह यज्ञौदीवितेनाहीनानि शश्वदङ्ग त्रिरात्रप्रभृतय एव भवन्त्येव सहभाजो ऽह:सर्वभागोऽ स्वस्थाना रात्राव-नुष्टुबिति शश्वदङ्ग चतूरात्रप्रभृतय एव भवन्त्या-थापराह यजमान मेवैतया वर्द्धयन्तीत्यथापि वेदपे वदति यजमानं वा अनु प्रतितिष्ठन्त मुद्गाता प्रति-

तिष्ठतीत्यथाप्यस्मिन् दक्षिणाप्रवादो भवति ध्वस्रे वै पुरुषन्ती तरन्तपुरुमीढाभ्यां वैदर्श्वभ्याꣳ सहस्रा- ण्यादित्सता मिति दक्षिणावन्तो ऽहीना इत्यथापि शश्वदनेनाध्वर्यवो याजमानं प्ररिचयते यथाहीने- नेति सत्र मित्यपर मुभयतो ऽतिरात्रो भवत्यन्यतरतो ऽतिरात्रा अहीनाः समाहितप्रायणीयोदयनीयो भवति व्याहितप्रायणीयोदयनीया अहीना अथा- प्यन्वह गौरीवितं भवति नानास्वरा अहीना अथा- प्यस्मिन्त्सत्रवादस्त्रो भवति यो वै देवानां गृह- पतिं वेद स वै गृहपतिर्भवति भारद्वाजायना वै सत्र मासत स्तोमो युज्यते सचियेभ्यो ऽहंभ्यः प्रतिष्ठायैव सत्र मासते ऽङ्गिरसो वै सत्र मासत गौपायनानां वै सत्र मासीनानां यतः सत्रादुदस्थाता३ स्थिता३ इत्युभयं भवतीति लामिकायनं उभयथा ब्राह्मणं भवत्युभयथेष्टं वेदव्यत उभयेषर मथ प्रत्ययं स्तंदो- ऽस्मिन्नहीनवादाः प्रत्ययत्वात्ते भवन्ति सत्रन्तु भवति सत्रकारोऽस्य भवति नैषाहीनेनैन सत्र मित्यपरं यत्त- दप्येव मिव ब्राह्मणं भवत्यन्यस्मै वै कामाय सत्र मन्यस्मै यज्ञो न तत् सत्रेणाप्नोति यद्वैकं यज्ञो न तद्यज्ञेनाप्नोति यद्वैकꣳ सत्र मिति तद्यथाश्वत्थलो

वृद्धो नैवाश्वत्थ इति वत्सनायनो अनश्वत्थ इति त्रयो-ऽहीना इति धानंजय्य एकाहाहीनोऽहीनाहीनः सत्त्राहीन इत्ययं ज्योतिष्टोमो ऽतिरात्रः षोडशिमाने काहाहीनोऽत्र हि न किंचनैकाहिकं कर्म हीयत इति द्वादशाहो ऽहीनोऽत्र हि न किंचनाहीनिक मह-हीयत इति गवामयनं सत्त्र महीनो ऽत्र हि न किंचनं सात्त्रिक महहीयत इति तदिदं कुशला भृतयस्तस्याहीना इति तदपि शश्वद् ब्राह्मणं भवद् दिष्ट मिति शाण्डिल्यायनो यस्य स्यादहीन इति यस्य तु स्यादहर्वसंयेयेति द्विरात्रप्रभृतयस्तस्याहीना इति तदपि शश्वद् ब्राह्मणं भवति प्रजापतिर्यज्ञक्रतून-सृजताग्निष्टोम मुक्थ्यं षोडशिन मतिरात्रं य एते-द्विरात्रप्रभृतयोऽहर्गणा अब्रुवन् तस्मान्नापि महासो-रिति तस्मादेवं तेऽहीना इत्यहीना इति ॥ ६ ॥

अथातः सत्त्राणि तेषां द्वादशाहः प्रथमस्तस्मिन्नु-पक्लृप्तानि तत्र द्वे उपस्थिस्थाने अन्तरेणातिरात्रौ त्रं दशरात्रश्च यथैकैकभाक्त्रार्थो भवति व्रत माहरेत्य-तदेकार्थं दृष्ट मिति तस्य तदेव स्थानं यत्संवत्सरे द्वाहार्थे गोआयुषी तयोस्तदेव स्थानं यत् संवत्सरे त्र्यहार्थे त्रिकद्रुकाश्चतुरहार्थे क्रतश्चतुर्थान् पञ्चाहार्थे

ऽभिप्लवपञ्चाहं षडहार्थे ऽभिपवः सम्प्लवत एतेन न्यायेनैष * एकोत्तरकल्पः क्रमत आ चत्वारिंश- द्रात्रा दुपचीयमानेष्वहस्सु रोहेणोपचयः प्रवर्त्तेत एतं रात्रिसत्रन्याय इत्याचक्षते यदेवापवदति तद् व्याख्यास्याम स्तत्रास्मिं स्त्रयोदशरात्रे कथं व्यूह- समूहावित्ति समूढः स्यादित्येके समूढो ह्येनं सर्व- स्तोमो ऽन्ववैतीति व्यूढः स्यादिति गौतमो ऽनादिष्टः कल्पेन समूढो ऽथापि छन्दोयोगपर्वणि भागसमाप्तौ चापधीयते ऽथापि कृत्स्नो ऽयं दशरात्र इति व्यूढ- मेवैनं सन्तं समूढः सर्वस्तोमो ऽन्ववैतीत्यथापि नादेच्यत्सोमसाम गौरीवित चादेच्यत्कथं दशम- धर्मा मानस मित्यकर्त्तव्या इत्येके दशमेऽत्र लुब्धश्च दशरात्र इति कर्त्तव्या इति गौतमो ऽनाकृतेन व्रतेन मानस मप्रविश्याज्यते ऽथोपि वाचो दशक्रमः मन उपकृतं कृत्स्नोऽयं दशरात्र इति चतुर्दशरात्रे पृष्ठं रूढावृत्तं करोति सैषा मध्यावृत्तिर्यच्चातिरात्रात् पृष्ठ मुपयन्ति प्रथमस्याह्नो ऽस्य प्रत्न मनुत्स्य इत्यजाम्यर्थो ऽथ खल्वत्र त्रयस्त्रिंशे अहनी सन्निपततः केनाजा- मीत्यह एष सामान्यादपि वा कण्वरथन्तर मनु-

---

* "अभिप्लवन्यायेनैष"—इति ख।

कल्पयेत् पूर्वस्याह्न आमेव उत्तरस्य वा मध्यन्दिने पृष्ठम् उत्तरस्मे विषुवत्स्थानीयो वृतं पञ्चदशरात्रस्य पृष्ठम् एवोत्तरस्य तत्राग्निष्टुत मुप दधाति चतुष्प्राये ब्रह्मस्यानवच्चिकीर्षं स्थाग्निः प्रत्नेन जन्मनेति होतुराज्य मजामित्वाय व्याख्याता अन्यतोऽतिरात्रः ॥ १० ॥

न्यायकृप्त मा सप्तदशरात्रात् सप्तदशरात्रं ऽभिप्लवपञ्चाहः संप्लवेति ते खलु स्वतन्त्रा एव त्रिकद्रुकाः स्युरित्येके यावत् षट् तान्नेयुः षडेव सत्त्वस्तन्त्राण्यापादयेयु रित्यापादयितव्यं स्तन्त्राणि मन्यत इति गौतमो ऽहर्गणप्रत्ययनायो ह्येव मभविष्यत् त्र्यहाद् द्वाह मेक मिव ब्राह्मणं भवत्यनन्ता वा एता यत्पञ्चाहविधा इत्यन्ताहर्न्नीतः षष्ठ मुप्रैतीति स वै पञ्चाहतंत्र एवाभविष्यन्न षष्ठात् किञ्चिदत्याहरिष्यदिति प्रत्याहरेदिति गौतम एव मिव ब्राह्मणं भवति पञ्चम ऽहनि षष्ठस्याह्नस्तृतीयसवनं प्रत्याहरति षडहाविलोपाय स त्वेव स्तोमो यः पञ्चमस्य सा संस्था रथन्तरबृहत्पृष्ठाः पञ्चमस्याह्न एष प्रत्नानुरूप इत्यजामित्वार्थो व्यावृत्त्यै पृष्ठाभिप्लवयोः श्यैतनौधसब्रह्मसामा पौष्कलस्त्र्यौष्णि ह्यभीवर्तासुज्ञानयो रन्वपायं स्वासु

ध्यैतन्नौधसे अभीवर्त्तकारिता हि प्रगाथा इत्ये-
तेनैवोत्तरे व्याख्याताः षाष्ठिकानि पञ्चमस्याह्न
उक्थानि तत् कुशला मुद्धरति गूढं द्विपदा अनन्तेना-
चिकीर्षीत् तच्चैतद्वैधमवाह नवमादन्तान्वितं तद्दा-
देतास्तु प्रजिष्ठं त्वा ववृमह इत्येता आपन्नाः पञ्चम
मह्नर्भवन्तीति सौश्रवस मारुत धेति विचारयन्ति
वैभक्तं सौश्रवसं पाञ्चमिकं मारुत मथ यत्र-
भिप्लवयो रात्रिसत्त्रेषु कथं कल्पविचारितानीत्य-
कर्त्तव्यानीति शौचिवृक्षिर्णान्यत्र संवत्सरानुसंवत्सर-
सम्मितासु च नेतिकर्त्तव्यानीति गौतमो यावन्ति
यावन्त्यंभ्यस्त्रुवीतेति विहितान्यप्रतिषिद्धान्यथाप्येव
मामिनरा संवत्सरस्येति विंशतिरात्रे द्वाहार्थे सति
विश्वजिदभिजितौ करोति कस्य हेतोरिति सम्पूर्णां
विराजं सत् मुपक्रान्तावेतौ वैराजौ वा पञ्चसूक्तैः
स्तोमैः पृष्ठैरिति यद्वैव पृष्ठ्यमात्रौ तौ पृष्ठादनन्त-
रिताविति ॥ १९ ॥

पूर्वस्मिन्नेकविंशतिरात्रे तृतीयेऽभिप्लव आवृत्तो
भवती३ अनावृत्त इत्यनावृत्त इति शौचिवृक्षिर्न
ह्यावृत्तिर्निर्ज्ञायते ऽथापि कथं समाह्नो विषुवान्स्या-
दित्यावृत्त इति गौतमो रोहप्रत्यवरोही सत्र सुपक्रान्तौ

विषुवानिति यदेतदनादिष्टावृत्ति रिति नाभिप्लवस्या-
वृत्तिः क्वचनादिश्यते ऽर्थ एवावर्त्तयतीति यदेतत्
कथं समास्तो विषुवान्स्यादिति दृश्यते षडहो विषु-
वत्स्थाने चतुर्दशरात्रे तथा समास्तः संसत्स्वन्य-
थापि यदनावृत्तो ऽभविष्यदतिरात्रो ऽभिप्लवः षडहो
द्विरात्रो द्वावभिप्लवौ षडहा वतिरात्र इत्यभविष्य-
दिति रूढावृत्ताविति स्वनो नाना दिशत्युक्थ्या
नुत्तरस्मिंस्त्स्वरसाम्नो ब्रुवते पृष्ठ्योपधानात्तत्र नान्येव
विधनानि यान्येकविंशत्यहकारिणां श्यैतनौधस-
ब्रह्मसामानः स्वरसामानः पौष्कलश्चर्ध्यौषिणहा विषु-
वतः साम इत्यस्य लोक आभीशव मभीवर्त्ता पाया-
च्छायन्त इव सूर्यं मिति विकर्णं मिन्द्र क्रतोर पाया
न्यायक्लृप्त मां संसन्नः संसत्सु पृष्ठ्य विषुवत्-
स्थामीय करोत्यनिरुक्तं च तृचस्त्रिंशतं स्वलूत्तरस्य
त्र्यहस्य स्तोमैरभि विधत्ते वै विषुवतीय मत्याधि-
रसन्तस एष आवृत्तः स्तोमः पर्वस्त्र्यहो ऽनुपूर्वस्तोम
उत्तर एत विशालः पृष्ठ्य इत्याचक्षते पृष्ठ्यस्तोमं पुर-
स्ताच्चोपरिष्टाच्च रूढावृत्तामनिरुक्तं सप्तमं मात्र सम्पूर-
णायैकाहं तत्रानुष्टुभिबृहत्करोत्यजाम्यर्थो ऽथापि
वृतस्थानो भवत्यौपोत्तमादुभयसामवतमिति ॥ १२ ॥

न्यायकृप्तम् आ त्रयस्त्रिंशद्रात्रात् पञ्चाहविहितं तत्कतमोऽयं पञ्चाह इति पृष्ठ्यस्तोमः पञ्चाह इति कापटवोऽनादेशे कृप्तमन्यं प्रतीयामोऽथापि यत्र यत्र चैकाष्टको भवत्यादिशत्येवैनं तत्तत्राथाप्याह नानां ब्रह्मसामान्युपयन्तीत्येष नाना ब्रह्मसामा भवत्यथापि दाशरात्रिकैरहोभिः पञ्चाहान् संवर्गयन्ति पृष्ठ्यस्तोमपञ्चाहस्त्वादेवाथाप्याह त्रिवृता प्रयन्ति त्रिवृतोद्यन्तीति त्रिवृत् प्रथमं दाशरात्रिकं तदेवावृत्तश्चोदयनीयं भवत्यथापि विश्वजिता जानीमो विश्वजिद्यत्र पृष्ठ्यं विलोपसन्नवैतीति स वै नूनमभ्यासतोऽभ्यस्तो ह्यहीनेष्वनभ्यासस्त्वेतु मन्यामहे न हि विज्ञायतेऽभ्यास इत्यभिप्लवपञ्चाह इति गौतम आदिष्टः कल्पेन भवत्यथापि न पृष्ठ्यपञ्चाहः कृतोऽकृतो विश्वजितेन पृष्ठ्यस्तोमपञ्चाहोऽभिप्लवपञ्चाहस्तु विद्यते तं कृतवदतिक्रामत्यथापि कृत्स्नावेव पृष्ठ्यस्तोमौ नाभिप्रयोगं लभेते कुतो विलुप्तौ लभेयातामित्यथापि शश्वदेकेऽध्वर्युर्वाऽभिप्लवपञ्चाहमादिशन्त्यथापि कालबविनो व्यूहेनादिशन्त्यतिरात्रो ज्योतिर्गौरायुः पञ्चाहः स द्वितीयः स तृतीयो विश्वजिदतिरात्र इति यदेतदनादेश इत्या-

देशजातिरेषा भवति यदधिकारो यद्देवद्यच यत्र चैकाहको भवत्यादिशत्येवैन तत्र-तत्रेति पृष्ठास्तोम-पञ्चाहो वा अयादिश्यते पृष्ठावलम्ब उत्तरे नव-रात्रे छन्दोमवति दशरात्र इति यद्देतन्नाना ब्रह्म-सामन्युपयन्तीति कारणकारित मेतद्भवति यद्देतद्दा-शरात्रिकैरहोभिः पञ्चाहात्संवर्णयन्तीति सङ्ग्राभि-प्राय एतदाह द्वौ पञ्चाहौ दशरात्र इति यद्देतत् त्रिवृता प्रयन्ति त्रिवृतोद्यन्तीत्युक्तम एतत् त्रयस्त्रिंश-शद्रात्रे ऽभिवन्दाब्राह्मणं वदति त्रयः पञ्चाहाः पुर-स्तात् त्रय उपरिष्टादिति यद्देतद्विश्वजिता जानीम इति नेह पृष्ठार्धेन विश्वजितां गच्छति* विषुवदर्थं नैष आगच्छतीति नाना ब्रह्मसामान्युपयन्तीति यद्दै पृष्ठा-योरनुव्यत्ययं यैतन्नौधसे व्यत्यहरिष्यद्धुयान् व्यत्यय आकाचयो ऽभविष्यत् प्रतिपदा साज्यांना मौक्षिणहयो रिति श्यैतनौधसंवर्गानि बाहद्रथन्तरपृष्ठाद्याद्दु विश्व-जितं विषुवन्त मित्तौ यदपैति तस्यैतस्मिन्ननुग्रह इति ॥ १३ ॥

॥ इति निदानसूत्रे नवमः प्रपाठकः ॥

* "विश्वजिदागच्छति"—इति ख।

॥ अथ दशमः प्रपाठकः ॥

अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुदित्युक्थमग्नये करोति कस्य हेतोरिति सामान्या मूर्द्धन्वती वैषुवतीयेऽभिरूपा तच्चैतत्सत्रासाहीय मापन्नञ्च विश्वजित मपि च वैषुवतीयं विषुवत्युभे षोडशिसामनी करोति वैषुवतीय मन्यत्र वित्सन्नुत्तमः पञ्चाह आवृत्तो भवतीत्यनावृत्त इति तद्व्याख्यातं पूर्वस्मिन्नेकविंशतिरात्रे सत्र मासत उत्तरे तच्चैते सामर्थं निदधात्येकविंशतिरात्रञ्च द्वादशाह एते नानात्वक्लृप्ते इति पञ्चाहक्लृप्त मुत्तमं प्रथमे त्रिषमयुक्ताः पञ्चाहाः हन्त पञ्चाहानेव करवाणयेवं पञ्चसीः समाधिरिति तत्र कथं बृहद्रथन्तरे इति यथालोक मेव न हीह तद् ब्राह्मण मिति कथ मु ब्रह्मसामनीति श्यैतनौधसे एव न हीह तद् ब्राह्मण मिति यस्य तु स्यात् स एवायं पञ्चाह इति तथैव तस्य बृहद्रथन्तरे तथा ब्रह्मसामनीति ते चेद्यथालोकं बृहद्रथन्तराः प्रथमस्य प्रथमंस्याङ्ग एष प्रत्नानुरूप इत्यजाम्यर्थो यद्यु वा अयथालोकं बृहद्रथन्तराः प्रथम एवाथोपरिष्टाद्यद्यु ह यथालोकं बृहद्रथन्तरा उत्तरे बृहन्निधनं वार्कजम्भ मनुकल्पयेद्यद्यु वा अयथालोकं बृहद्रथन्तरा उत्तम

एवा ऽथ खल्वाह यदिश्वजिति छन्दोमानुपयन्तीति कथेदं ब्राह्मण७ स्यादिति षाडहिकाना७ समस्ताना मिति चतुरात्रता मिति छन्दसा मिति त्रिवृता प्रयन्ति त्रिवृतोद्यन्तीति त्रयः पञ्चाहाः पुरस्तात् त्रय उपरिष्टादिति त्र्यायकृप्त मां विधृतिभ्यो. त्र्यायकृप्त मां विधृतिभ्यः ॥ १ ॥

अथैता विधृतयो भूतानां विधारिण्यस्त्वेतान- हर्गणान् करोति त्र्याह७ षडहं दशाहं द्वादशाह मिति तानतिरात्रैर्विधारयत्येव७ सर्व मेवं विधृतं भविष्यतीति कानि तन्त्राणीति दर्शरात्रस्तोमविकृत इत्येके ज्योति- ष्टोम इति शौचिर्वाचिरनादेशं क मन्यं प्रतीयामो ऽथाप्याह ज्योतिष्टोमस्यायनेन यन्तीति शतसंवत्सरे ज्योतिष्टोमायनेन यन्तीति वैतदवोचदिति कौसुरु- बिन्दे इति गौतम एतेन कल्पेनाभिदृष्टे भवत इहो तद- भिरूपतरं यथो चाहीने सर्वे त्र्येव समासो ऽभिरूपतरो यथो चाहीन इति व्याख्यातानि संन्धिसामान्येवं चेत् संन्धिषाम स्यात् कौत्सस्य लोकं उद्द७शीय मेतेने- डाकामस्य सिध्यत्यजामिकल्पस्येति तदादेतास्वा त्वा विशन्त्विन्द्रव इतोऽता रात्रेर्विकृतौ दृष्टा इति नित्यासु वेति विचारयन्त्यथ्यकारित मद्द७शीय७ स किमर्थो

नित्याश्च्रावयेदिति पञ्चदशानां दशमस्य नानदं षोडशिसामैवं छन्दसा मनन्तरं यस्तु सन्धिसामैव भवत्यथौशनकावि समाचारयिष्यन्तथा रथन्तर मपचित्या रथन्तरं सञ्चरते ऽथापि काव तृतीयसवनेन समधिचारयिषीत्तइशेनौशनं तचैने 'वैश्वज्योतिषवासिष्ठे अपुरस्तात्स्तोभे पदानुस्वारे यद्यौशनकावे एकविंशेष्वकान् करोत्यन्तर्पर्थिणो हि स यन्नवमप्रभृतिष्वन्तर्पातित्वादेवाथाप्येते सप्तमप्रभृतिषु दशरात्रे दृष्टा उपपन्नं द्वादशाहे नवमप्रभृतिषु 'प्रयुञ्जीरन्निति कावस्यचं दीर्घतमसोऽर्कं एतासां हि स्थाग मापन्ने द्वादशे ऽहन्युत्सेधनिषेधौ करोति दशभादन्तान्वितौ यमातिरात्रास्वादित्याना मष्टावतिरात्रान् करोत्यष्टौ यमा आदित्या इत्यादितरानां द्वन्द्वदर्शनादभिप्लवानिरात्राणां द्वन्द्वानि करोत्यथ खल्वायुस्तोमे ह्यभिजिति वाजामिकल्पे सौभरं करोति तत् खलु हारिवर्णस्यचं करोत्ये तासां हि स्थान मापन्न मिति ॥ २ ॥

अथैता आङ्गिरसाव्यञ्जना: प्रजापतीषसा मुपक्रतास्तं च सर्वस्तोम मुपहारयेत्येषो ऽहस्त स्तोमतः संस्थातः पृष्ठत इति तद्य यत् षड्विंशस्थान मेव

मपर्वविलोप इत्युत्तसाकभिप्लवा वावृत्तौ भवता३
अनावृत्ताविल्यनावृत्ताविति गौचिवृत्तिर्न ह्यावृत्ति-
र्विज्ञायते ऽथाप्यमध्ये सर्वस्तोमो मध्यस्थानो विषुवा-
नित्यावृत्ताविति गौतमः प्रतिष्ठाकामसत्र एतस्मिन्
स्थाने क्लृप्तं करिष्यन् भवति नैतदन्यत्र मध्यरद्वाभ्तो
भवतीति यदेतदनादिष्टावृत्तिरिति नाभिप्लवस्या-
वृत्तिः क्वचनादिश्यते ऽथ एवावर्त्तयतीति यदेतद-
मध्ये सर्वस्तोम इत्यपर्वविलोपायैतद्भवति पञ्चाम-
ष्टामध्ये विषुवन्तं यथा त्रयोदशरात्रे संसत्स्वपि
संवत्सरसंमितासु प्रायणीये चतुर्विंशं प्रतिषिध्यत्
त त्रिवृदेव कार्य मित्याह निष्पन्नचोदितत्वादेतद-
पूर्वं प्रायणीयं चेति स्तोमविकार मेके तस्यैवाधि-
काराच्चतुर्विंश एवैवं कार्य मिति निष्ठा तथा हि
ब्राह्मणं ता एताः संवत्सरास्मि मुपक्लृताश्च
यदेतान्यहान्येवं संवत्सरस्य प्रयुक्ततमान्यहानि
भविष्यन्तीति तृतीये ऽभिप्लव इषीवृधाग्नि समन्तं
कुर्या३न्न कुर्या३दिति न कुर्यादित्याहुः पृष्ठ्यसान्निपा-
तिके ह्येते भवतो न चेह पृष्ठ्यो भवतीति कुर्यादित्य-
परं नाना पर्वणोरिमे सन्तामार्थे भवतो नानापर्वणो-
रेवैते अहर्गणस्यैकाहस्य भूयसा चैवं सांवत्सरिकाणां

द्रव्याणामविप्रयोगो भवत्यथाप्यत्र, विश्वजिदभिजित्सन्निपातौ भवत्येतौ च पृष्ठ्यसदृशाविव्यावृत्तेऽभिप्लवे कतमत्सामन्तनि कुर्यादितिं यावं मित्येक एतदे-कार्थं दृष्ट मथाप्येतदेषा माकृतानामन्ते भवति, मध्येऽद्वाय मिदं सच मित्यपत्य मित्यपर मेवं पुर-स्ताच्छन्दोमानां द्विष्यायुक्तानि भवन्ति. सन्ततीत्यपर मेतद् येषा माद्यं भवत्यसम्प्राप्तेरन्ततो लोपः शाक्वर-वर्णं मित्यपर मेतदेषा मक्तं भवत्यथाप्येतं सम्प्रा-प्यैयं भूयः सांवत्सरिकं द्रव्य मनुगच्छन्त इति ॥ ३ ॥

प्रजातिकामसत्र मुत्तर तत्र नवाहान्करोति न्यूनात्प्रजाति रिति षडभिप्लवस्य सच्चयेदं स्यानं स चतुरभिप्लवता मनतिचिक्रमिषन्नेतानेव षडहा-न्त्संव्युह्य चतुरो नवाहान् करोत्यथ खल्वत्र भाग-स्तोमान् करोत्येते स्या न दृष्टा इति तेषां यदेवंविधः संस्थायीग एव मुभे रूपे षडहरूपञ्च ककुब्रूपञ्चाथा-प्यैव तावत्यः संस्था यथा संस्था मभिप्लवाना मित्यु-इरत्यर्कं यो विधृतिषु दशरात्रे त्र्यर्कान् करिष्यन् भवति राथन्तरेणाह्ना त्रिवृतः प्रतिपद्यते बार्हतेन पञ्चदशान् राथन्तरेण सप्तदशान् बार्हतेनैकविं-शानन्यवैतानवाच्यस्तेन व्यत्यासः कुशलेनोपपद्यते

इति प्रतिष्ठाकाममसत्र मुत्तरं तदाज्ञनाभ्यज्ञनाभि-व्याख्यातं न्यायकृप मेकषष्टिरात्रा दथैतदेकषष्टि-रात्रं संवत्सरसम्मितास्थान मेव तत्र नवाह मभितः पृष्ठौ करोत्येवं सर्वं सांवत्सरिकं द्रव्य मनु-गृह्यात इति ॥ ०४ ॥

अथ केनासंस्तोमान्यभि विदधीतेऽतिरात्रिसत्र-न्यायेनेत्याहुर्यथा शतरात्र मित्यपि वा दशरात्रञ्च व्रतं चान्ते निधाय यत् सांवत्सरिकाणा मह्नां सम-वहारः सिद्धेत्तथा कल्पं कुर्वीत यथा संवत्सर-सम्मितास्वपि वा यत्र भागस्तोमानां समविभागः सिध्येत्तस्य कल्पं कुर्वीत यथा सवितुः ककुप्सु ज्योति-ष्टोमेनं वैष ऊनस्य पूरयितेत्यथ प्रायणीयोदयनीय-योरतिरात्रयोरादिशत्येकत्र षोडशिनं नैकत्र तत् कथं स्यात् षोडशीति यथा विराट्सम्पदं सम्पत्सं-मीनां मन्यीत तथा कल्पं कुर्वीत द्वादशाहस्य च गवामयनस्य विराट्सम्पदं षोडश्युपक्रान्तो स्थानुप-पद्यमानायां प्रकृतौ निर्णीय यथा मन्यीत तथा संशयेषु प्रतिपादयेत्तेषां यानि रात्रिसत्न्यायेन वर्त्तन्ते षोडशिमन्तेन तत् यथा द्वादशाहेऽथ यत्र रोहप्रत्यवरोहौ सत्र मुपक्रान्तमषोडशिकौ तंच यथा

गवामयने यत्रानुमध्यꣳ षोडशिकौ यत्र यत्रो न दृश्येत षोडशिमन्तौ तत्र तत्र कार्त्स्न्यायापि वा चतुष्टोमेष्वषोडशिकौ सर्वस्तोमेषु षोडशिमन्ताविति षोडशिमन्ताविति ॥ ५ ॥

अथातः सांवत्सरिकाणि तेषां गवामयनेन सामेति व्याख्यातं तद्यदप्रवदति व्यावृत्यर्थं वा तदपि ब्राह्मणेनैव कारणं वदति तत्रादित्यानामयने उद्भिद्बलभिदौ मात्रासम्पूरणाय करोति तत्रैक इन्द्रक्रतावुत्सेधनिषेधौ कुर्वन्त्येष औत्तरपाक्षिक इति तत्र निन्दा यत् षट् प्रगाथा भवन्त्यष्टौ प्रागाथिकानीति यथासमाम्नायन्त्वेवैवं पक्षयोः समाप्तिरिति पञ्चदशत्रिवृद्भ्यामुपहिते गोआयुषी ते पञ्चदशत्रिवृद्भ्यां प्राचिक्रमैषी छन्दोमस्तोमं दशरात्रं करोति पशूनां छन्दोमा इति तस्यान्ते चतुर्विंꣳशे सन्निपततस्तत्र पञ्चविंꣳशं करोति नानात्वार्थः स उ चतुर्विंꣳश एव भवति चतुर्विंꣳशो ह्येवैष ऐकाहिकप्रस्तुत इत्यालोभाद् बृहद्रथन्तरे पृष्ठे अथापि स्तोमक्लृप्तेनाथाप्येवं तावन्तः पृष्ठोपाया यथा गवामयने समूहति बार्हद्रथन्तरपृष्ठावुद्धरति षोडशिनं चतुर्थाहिराजा मन्वपायꣳ स्वराजोपेयुः स्तोमस्य वा

लोभादन्यथापि यद्यु हैम मेकविंशम् मकरिष्य दश-
यिष्यक्छन्दोम्यादिदि छन्दोमं मेकविंशस्यान्न वैक
मेकविंशो कृतावनेकविंशस्तथेह भवतीत्यथाप्येवं
तावन्तः षोडश्युपाया यथा गवामयने ऽथाप्येवं पञ्च-
दशसप्तदशरात्रस्य सिध्यति षट् स्तोत्रीयाः पञ्च-
दश मतिरिच्यन्ते त्रीण्यत्र सन्तनीत्येकास्तावानि
तेभ्यः षट् प्रस्तावा लुप्यन्त एव मेषा पञ्चदशसम्पत्
सिध्यतीति ॥ ६ ॥

दशमस्य चतुस्त्रिंशमेके ऽग्निष्टोमसाम कुर्वते
छन्दोमताये चतुर्विंश मेक एकाहस्तोमो भवतीति
त्रयस्त्रिंशन्त्वेव स्यात् क्रियमाणे ह्येवैतस्मिन् पुरा
छन्दोमस्तोमं मेतदहर्भवतीति यथाभूयस्त्वेनाथाप्याह
चत्वारश्छन्दोमा इत्येष एव संशय एकस्तोमेषु
द्वादशाहेषु सर्व एव द्वादशाहो विकृतः स्यादित्येके
द्वादशाहे च क्रियमाणे क्रिमर्थो ऽवयव प्रतीया-
दिति कृतप्रमाणाः संशया भवन्तीत्यपरं ते पश्या-
मोऽन्यावर्तिरात्रौ कृत्वाहाभिजिद्द्वादशाहो विश्व-
जिद्-द्वादशाह इत्यथापि नानापदि रात्रेः ससन्धि-
कायाः स्तोमविकारो विद्यते सा कथं संशयेषु
प्रतीयेतेत्यथापि महत्सु स्तोमेषु सन्धिस्तोत्रीयाम् प्रत्य-

कल्पयिष्यदथैतेन सर्व एकस्तोमा व्याख्याता अप्यहीनेष्वथ षोडश्येकविंशस्तेमो वा स्यादपि वा ये प्राक् त्रिणवत्रयस्त्रिंशाभ्यां मंहस्तोमं तेष्वन्विषाठेकविंश मुत्तरेष्विति तौ खल्विमौ द्वादशरात्रौ भवत उभयत्राह दशमंधर्मा मानसे तु विचरयन्ति पूर्वस्मिन्नित्येके एषो ऽयुक्स्तोमो विकृतो नानापृष्ठे धर्मीत्युत्तरस्मिन्नित्यपर मेष स्थानस्थे ऽथापीदं यंत्रनाम्न मेतदन्ते ऽभिरूप मथापेतं व्रतस्य मसंसंख्यावाव्यवायेन भवत्यथापेतं त्रिवृत्-पञ्चदशस-प्तदश-रात्रयोः सिध्यत्यथापि यत् पूर्वस्मिन्नकरिष्यन्नहीनाकृतेन मानस मध्यशाययिष्यदथापि यत् पूर्वस्माहशरात्राद् बहूपैति तस्मैतस्मिन्ननुग्रह इत्यश्व आयूंषि पवस इत्युत्तरस्य दशरात्रे करोति कस्य हेतोरिति शिशुंत्वत्र मिदं भवति सैषाग्नेयी पठिताभिव्याहाराशुद्धार्थे ऽभिरूपाथाग्न्याग्नेय्य आङ्गिरसः सैषाङ्गिरसी देवतेति ॥ ७ ॥

प्रतिष्ठाकामस्य मुत्तरं तत्र षोडशिकाम् मासभाजो हर्दावृत्तान्निवर्धात्येवं सिद्धौ रोहप्रत्यवरोहाविति व्याख्यातं व्रतं त्रिषुवांस्तत्रोक्त मयनेष्वपि पृष्ठास्तामे विहृतः स्यादित्यथापुरोदाहरन्ति

यज्ञसमास उत्तरं तच्चैतानि वादितानि स्थानान्यति-रात्रः शौनासीर्यो मासो दशरात्रो महाव्रत मिति कर्त्तव्यानीत्येकं एष सत्रन्याय इताकर्त्तव्यानीत्यपर मेव पुराणं वेदयन्ते ऽध्याप्यनादिष्टः प्रायणीयो व्यूढेन भवति तत्र यत् पुरस्तादतिरात्र मकरिष्यं लुप्तो रोहो ऽभविष्यदपि च सुत्याऽ हविर्यज्ञा वाव-स्थिष्यन्निति यज्ञसमासत्वाद्गोचासमासो हविर्यज्ञ-मक्रमत्वादल्पकैश्चमसैर्भक्षयन्त्यथ खल्वत्वं द्वौ गृह-पती सन्निपातनो होत्राध्वर्यवेनैकेन सुवर्त्तये इव स एष बृत्यर्थ एव द्वितीयः स यज्ञपतिरितङ्गास्थान मिति स्वर्गकामस्य मुत्तरं तत्र संवत्सराभिप्रयोगो भवत्यतं यज्ञतपसोरभिवृद्धिरिति तत्रोक्त मय-नेषु तेषां यान्येकाहैर्वर्त्तन्ते गौरीवितानि तानि यानि नानाहोभिः सगौरीवितानि नानाह्ना हि सन्तानार्थं गौरीवित मित्यथ पुरुषस्य नारायणा-यायन विश्वजितोऽभयोः पर्त्तसोः स्यादितरक एव पर्त्तसोः समाधिरिति यथासमाम्नायन्त्वेवैवं मवि-लोप इत्यथैतेषु दशसु विचारयन्ति कानीमान्यहानि स्युरिति ज्योतिष्टोम इत्येक एषो ऽविक्रांतः * पुर-

* 'एष विक्रीतः'—इति ख।

स्तात् भवन्त्यनापन्नान्येतानि पृष्ठानि ज्योतिष्टोम मित्यपरं पृष्ठं गृह्णमाणं महद्गृहीयादिति ॥ ८ ॥

अथैतत्क्षुल्लकतापश्चित मित्याचक्षते चत्वारो दैक्षा मासाश्चत्वार औपसदाश्चत्वारः सौत्यास्तस्य कल्पो गवामयनस्य प्रथमोत्तमौ पूर्वस्य पंचसोमासौ स्यातां तथान्तस्याऽथैतन्महातापश्चित मित्याचक्षते चत्वारो दैक्षाः संवत्सराश्चत्वार औपसदाश्चत्वारः सौत्यास्तस्य कल्पो गवामेवायनं चतुरुपेयु रपि वैतस्यैव पञ्चसो अभिवृद्धे स्यातां त्रयोविंशतिरयनमासाः पूर्वं पक्षसि युर्द्वाविंशति रुत्तरेऽपि वैतान्येव प्रथमानि चत्वारि समस्येद्यथा वौणि संवत्सर इत्यपि वा ज्योति- ष्टोमायन मेव कुर्वीरन्नेतेषां यन्मन्येरंस्तदपि वा यथा गणसंवत्सराणां तथा कल्पं कुर्वीताऽथै- तच्छौनकानाम् षड्त्रिंशत्संवत्सर तरसपुरोडाश मन्नसंरोधाद्यदन्तःपुरुषस्तदन्नदास्य देवतेति ते यस्मांसमया वा श्यामाकमया वीभे आपन्ने हविष्ट मित्यथैतानि महासत्राणि देवाना मेव दीर्घायुषो देवा इति मनुष्याणा मपि सिद्धानि स्युरित्यपरं बहवः सन्निविश्य सुनुयुः पुत्राः पौत्राः प्रपौत्रा इति तानि खल्वतिरात्राण्यविषुवत्कान्यूढायनानीमानि भवन्ति

तत्र यदतिरात्रं वा विषुवन्तं वा करिष्यंल्लुब्धो लोहो ऽभविष्यंस्तथापि न कल्पेनादेशो विज्ञायते नु ब्राह्मणानाथपिरव प्रराणं वेदयन्ते ऽथाप्याहैकविंशो ऽन्ततः स्तोमानां भवतीति शतसंवत्सरे ऽनतिरात्रस्यैव सत इत्यथैतदर्शनः सहस्रसाव्यं परमा विराज मुपकृत मपि वा सहस्रसंवत्सरेष्वा मेवोपकृतं स्यात्तन्नोक्त मयनेषु ॥ ८ ॥

स्वर्गकामः सत्र मुत्तरं तदंत्सारस्वत मेषा स्वर्गोक्ता भवतीत्यथैषा ऽग्नये कामायेष्टिः पृष्ठशमनीयेनैव भवत्यथ खल्वाह तस्या मश्ववाम्ब पुरीषीं च धेनुके दत्त्वेति केभ्यो दद्युरिति प्रसर्पकेभ्य इत्येके दृश्यते च प्रसर्पकेभ्यो दान मथापि व्रात्यस्तोमेष्वनृत्विग्भ्यो ददातीति पृथगेवैतरेतरस्मा इत्यपर कर्त्तृभिः संयुक्ताः क्रतुदक्षिणा भवन्ति तत्रात्मनिर्वर्त्यमाने किमर्थो ऽवयवं प्रतीयादित्यवचनायां कृष्णा मुदवसानीयाभिरिष्टिभिर्यजेरन्निति गौतम एव मुत्क्रान्तसंस्थं कर्म भवत्यथापि शौ लनेकोक्ता भवतीति सारस्वते एवोत्तरे कुशलं यत्सन्ततस्तुत्ये त्रिवृत्पञ्चदश मिन्द्राग्न्योरयन मेताविन्द्राग्न्योर्भक्तौ इति यज्ञायुषी इन्द्रकुत्सौ सप्राये चापि चैता मभ्या-

मत्याधिस्त्रिवृत्पञ्चदशयोरिति त्रिकद्रुकक्लृप्त मुक्त-मस्यैतेऽयने दृष्ट इति यद् विश्वजिदभिजिताविन्द्र-कुक्षी सम्प्राये चापि ताभ्यां मत्याधिस्त्रिकद्रुकाणा मिति ॥ १० ॥

अथैतद् दार्षद्वतꣳ स्वर्गकामायनं तस्यैते पुरश्च-रणे गौपाल्यञ्चाग्नीध्मनञ्च दीक्षाभ्यः प्रति गौपाल्य मुपसद्भ्योऽग्नीध्मनꣳ स यदृत्विजो वाचार्यस्य वैतौ स्यातामिनौ गुरू तयोः प्रैषचरण मभिरूपं तदेव मनुष्येभ्यस्तिरो भवतीति तत एवारण्य माविशेन्न पुनर्ग्राम माव्रजेदिति स्वर्गं लोक माक्रमत इत्येके व्यावर्त्तते श्रेयान् भवतीति वा ऽथैतत्तौर मिष्ट्या-यनꣳ स्वर्गकामाय त मेवाभिरूप तदेव संवत्सरसु-त्यान्नेदीयस्या माचर्येप्सीत किमर्थं उ तदिति सायुज्यꣳ स्यादित्यनतुभूतिजꣳ स्यादिति सिद्धिदर्शी वा स्यात् सिध्यति वै खलु संवत्सरसुत्याया इष्टा-यनेनाग्निस्तत्रापि सुत्या देवता भवन्ति यावदेव मर्थरूपश्चादीक्षितः कृष्णाजिनं प्रति मुञ्चते नव-नीतेनाङ्गान्यभ्यङ्क्ते दीक्षारूप मेतद्भवति वाग्यतः इष्टय इष्ट्यन्त वा पश्वन्तं वा सोमान्तं वा कुर्वीते-त्युभयोः पृष्ठ्यमनरूप मेतद्भवति ॥ ११ ॥

सर्पसत्त्रे क्लिं मयनं स्यादिति गवामयनं स्तोम-विकृत इत्येके ऽनादिष्टान्यहानि व्यूहेन भवन्ति संव-त्सर आदिश्यंते तत्र किमर्थो ऽवयवं प्रतीयादित्य-थापि विषुवदादेशेन रोहप्रत्यवरोहौ गवामयनो त्पादविती भवतो ऽथापराह षण्डकुषण्डावाभिगरा-पगराविति वृते ऽभिगरापगरौ भवतः कौसुरुबिन्दे इति गौतम एते कल्पे ऽनादिष्टे भवतो यद्येतदना-देश इत्यादिष्टे कल्पे न * भवतो यद्येतद्विषुवता-देशेन रोहप्रत्यवरोहाविति दृश्यते विषुवानेतयो-रेतन्वयोऽहनि वास्तवतो ऽयने तथा रोहप्रत्यवरो-हाविति यद्येतत् षण्डकुषण्डादभिगरापगरावित्यन्यत्र सतो रवदिष्यदपि वेहोपासकयोरपि वा वचनाद-भिगरापगरौ स्याताः तत् खलु रूढप्रत्यवरूढं ततो विषुवानिति व्याख्यातानि सर्पसामानि विषु-वति सर्पसामानि कल्पसप्रयाणीति तेषां यदेव मानुपूर्व्यं निधनान्येषा मादित्यद्वेषा मुपक्रतानि तेषा मेव मानुपूर्व्य मथापरेषा मेतद्गर्गान्निधनं तत् त्रिणिधनानुग्रहाय माध्यन्दिने ऽचिकीर्षीदानुपूर्व्य मितरे ॥ १२ ॥

* ख-पुस्तके 'न'-इति पदं नास्ति।

अथैते गौषूक्ताश्वसूक्ते भाजाभाजयोः स्थाने सप्राये चापि वैनयोर्ज्योतिः सप्राये निधने यथा भाजाभाजयोरिति दशिनं स्तोमं करोति दंशुका: सर्पा इति द्वादशं विषुवन्त मित्याधित्सन्नथापि शश्वद् द्वादशौ विषसेचनौ नाम सर्पाणां दन्तौ भवतस्तद्रूपं विषुवत्यचिकीर्षीत् प्रजातिकामसत्र मुत्तरं तत्र संवत्सराभिप्रयोगो भवति संवत्सरं हि प्रजाः पशवोऽनु प्रजायन्त इति हि भवतीति तचैतान्येव चोथि समस्य निदधात्येव सा तृतीयं पृष्ठाःभिप्लवयोर्दशरात्रस्येति विकार उपपत्स्यत इति तचैके गवामयनन्तत: कुर्वन्ति प्रजातिकामसत्रत्वादेतेन वै सर्वः प्रजातिं भूमान मगच्छत् प्र जायन्ते बहवो भवन्तीति स्तोमतस्त्वेव गवामयनाज्जां रोहो भविष्यतीति यथैतत्प्रजापतेः सहस्रसंवत्सरं परमाधिराज मुपक्रत मपि वा प्रजापतीपसा मेवोपक्रतं स्यात्तत्र खलु त्रिवृतं करोति यथान्तरं लघुस्थायस्तोमस्थाद्ये प्रजापतिरिति ज्योतिष्टोमं तत्र माग्निष्टोमं संस्थां रथन्तरं पृष्ठं तत्र खलु बृहस्पतिसवं करोत्येषोऽग्निष्टोमस्त्रिवृत्स्तोमो रथन्तरपृष्ठो ज्योतिष्टोमतन्त्रो भवतीति न्यायकृप्तमुत्तरं न्यायकृप्तमुत्तरम् ॥ १३ ॥

इति निदानसूत्रे दशमः प्रपाठकः ॥ समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥

॥ उपग्रन्थसूत्रम् ॥

(सामवेदीयम्)

॥ ऋषि-प्रोक्तमिदम् ॥

आवसथश्रीसत्यव्रतसामश्रमिभट्टाचार्य्येण सम्पादितम् ।

कलिकत्ता—सत्ययन्त्रत:

(१६—१, घोषेस् लेन)

श्रीहृषिव्रतचट्टोपाध्यायेन मुद्रयित्वा सम्पादकेन प्रकाशितम्

॥ शाका: १८१८ । संवत् १९५३ । खी० १८९७ ॥

॥ उपग्रन्थसूत्रम् ॥

॥ अथ प्रथमः प्रपाठकः ॥

॥ हरिः ॐ ॥

अथ सम्पत्तिर्विराजादेशे स्तोत्रीयानां प्रति विशेषः संख्या समस्ताख्ये प्रत्येकं मर्यादानियमो ज्योतिष्टोमे ऽथ तं मुख्ये त्रिपञ्चाशे द्वाचत्वारिंशानि स्वार्यतिरात्रे सवनानां भक्तिवाद्-च्छन्दस्तोमभक्त्यानदैवतैर्यानि सप्त चतुरुत्तराणीति गायत्री-जगत्यौ द्वे बृहत्या उष्णिक्त्रिष्टुभौ च द्वे पङ्क्त्यनुष्टुभौ सैव सप्तमी यैरुक्थ्यैश्च छन्दोभिरिति षष्टिस्त्रिष्टुभस्तासां त्रिवि-स्त्रयो विंशतिर्गायत्र्यः पञ्चचत्वारिंशतम् बृहत्यो द्वादश ककुभ-स्ततस्त्रिभिर्गायत्रीभिस्ता बृहत्यः स्युः सप्तपञ्चाशतं तावत्यक्षराणि गायत्र्यस्तैः स्तास्त्रिष्टुभस्त्रिवृन्मने पुरोजित्यां दशपद्यःपदान्य-नुष्टुप् शिरस्त्वाच्चर्य्यःप्रोत्यक्षरक्षोआयुषोः पूर्वस्यैकचत्वारिंशे परस्यैकान्नषष्ठे न्यूनातिरिक्ता सैनं सम्भानां विराजं सम्प-द्येते चत्वारि त्रिंशान्यतिरात्रयोरष्टादशायुषोभिका: पञ्च-द्विषष्ठान्यतिरात्रे गायत्री सम्पन्ने तासां त्रिविः ॥ १ ॥

द्वयं प्रकृत्या गायत्र्यः सप्त पञ्चाशतं बृहत्य स्ताः पञ्चाशीति-र्द्वादशाक्षरं च चतुर्नवति रुष्णिक् ककुभ स्ता नवशतं षोडशा-क्षरं च षड्त्रिष्टुब्जगत्यौ बृहत्यतिरिक्तेषु द्वादश सप्तोने नाम्न-धोरामया सार्धं मनुष्टुभस्ता द्वे षष्टिर्न्यूना चोष्णिक् ककुब्भ्यां

शिषेयाभिजिद्विश्वजितोश्चत्वारिंशे पञ्चैकान्नविंशान्यतिरात्र-योर्न्ते द्विषष्टिः शिरःपक्षपुच्छानां परिमाणस्त्रयः पञ्चविंशाः साहस्रे विंशतिस्त्रिवृतो दशाधिका बृहती चैका विराजस्ते चत्वारोऽचर्यास्त्रिवृतः भूरि द्वे साहस्रोत्तमभर्भयोर्द्वा नव तं ताः सङ्ग्रनुष्टुभः साद्यस्के षष्टशतं तास्त्रिस्त्र जगत्यैरा बृहत्यो विराट्-परयोर्विंशं पूर्वस्याश्चर्यं मुत्तरे चतुर्विंशतिरेकत्रिके ॥ २ ॥

वाजपेयविचारा: सप्तदशाश्चतुस्त्रिंशदतिरात्रे त्रिवृत् सप्त-दशाव्युष्टी सप्तविंशानि राज्येष्टावेकविंशाः परे विंशोपदशे द्वादशाधिकाः, प्रकृतेरन्ते: स्तोमे चैकोत्रिवृदभिदेन्द्राग्नेषु चतु-श्चत्वारिंशन्ताः षड् गायत्र्यस्त्रिस्त्रो जगत्यस्त्रोऽपचितुरुत्तरे त्रिवृत्सप्तदशयोः षोडशैताः षड् बृहत्यश्चतुर्विंशतिस्त्रिवृतस्ता-स्त्रिंशे त्रिवृतं स्तोमं सम्पद्यते बृहतीच्छन्द इति बृहती-च्छन्द इति ॥ ३ ॥

. चैत्ररथे पूर्वस्याक्लृप्तपञ्चाशे चत्वार्यष्टाचत्वारिंशानुत्त-रस्य समस्तयोः सप्तैकाधिकानि जामदग्ने प्रतरहं जगत्यस्त्रिस्त्रः षट् सप्तैकादश पौण्डरीके: षट्शतं, षट्त्रिंशा दशमे ऽनुष्टु-प्परीच्य चतुःसप्तति सातिच्छन्दः संसामने तासाश्च त्रिवृः षडनुष्टुभः प्रकृत्या त्रयस्त्रिंशच्चैकाधिका न ह्येकस्मादिति पञ्च षट् गायत्र्यस्तास्त्रयोर्विंशं गायत्री चाशीतिरतिरेकेना बृहत्य-स्ता अष्टाशीति, ककुभास्त्रा च षट् त्रिष्टब्जगत्यो नवोष्णिक-कुभस्तिस्त्रो त्रिपदा गयत्र्यातिशेषस्य न्यूनातिरेकैरेकेनाविंश-शतिस्ताश्चतुरक्षरश्चातिच्छन्दस्त्रिश्चतुरक्षरेण ताः प्रस्तानुष्टुभो ज्योतिर्विंनारिश्च्यक्षरतः प्रकृतेर्यावद्यावदधिकं तावदस्मादं प्रसते तस्मादिति निर्देशो बर्हिष्कासयोस्तदिति क्रावे प्रजातिकास्वयज्ञे

निधनेभ्यो ऽधि होतुःपृष्ठात्सम्पन्नं त्रिभिर्गोगामयादिसंवत्साहस्र-प्रतिरूपेषु रथन्तरात् षोडशाक्षरसांस्तदृचं ब्रह्मायन्तनीयाः षष्टिरभि-वरतो वषट्कारणिधनादिभ्यस्तत्पदाद्ययोः आयन्तीयावतु-विंशतिस्त्रयाणां कालेयाद्यायन्तीयकृतिष्ववमाने षड्वर-संसंज्ञात्तदुष्णिक्ककुभोः ॥ ४ ॥

आग्नेयेनोक्थप्रथया व्याख्यातास्त्वेषां त्रिभिर्निधनौष्ठा-क्षराण्यभ्यस्तादेकविंशतिश्चतुरक्षराणि पर्यायोद्यक्षराण्युत्तरे समा-नोभ्यास उत्तमे श्रीर्यणिगभ्यं चतुरक्षराणि लुप्यन्ते समाक्षराणि पंक्तिभ्यस्तदेकया पंक्त्या सम्पादयेदभ्यस्ते चैकं द्वणे आयन्तीय-वषट्कारणिधनाभ्याञ्चतुश्चत्वारिंशत्तत्कालेयोष्णिक्ककुबयत्नाय-नीयेभ्योऽतिरेके प्रातःसवनात् पञ्चदश गायत्र्यस्तत्पृष्ठानां ब्रह्म-सामाच्छावाकसाम्नोर्माध्यन्दिनात्सप्तदश बृहत्यस्तन्नायत्रसंहिलः-संफल्यावाख्याभ्योगवयन्नायत्रीयेभ्यस्तस्यानुव्याख्या चतस्रः त्रिभल्या बृहत्यस्तन्नायत्र्योऽनुष्टुभश्चाष्टो ककुभोऽष्टाक्षरश्च काकुभमानुष्टु-भश्च द्वादशाक्षरं ककुभोऽनुष्टुब्भ्यां त्रिभिः द्वादशाक्षरेण गायत्र्यो-ऽष्टाक्षरेण शेषस्त्रिष्टुप्समानेऽष्टौ गायत्र्यः आज्येभ्यः सप्तदशाष्टाक्ष-राणि आयन्तीयात् सप्तदश द्वादशाक्षराणि वैखानसात्तस्यानु-व्याख्या वैखानसातिशेषेण हृततरः त्रिभिः ककुभोश्च मध्यमौ पादौ आयन्तीयेनानुष्टुभोऽष्टाक्षरश्च काकुभमाज्यशेषः रूपवत्यन्त-न्तरे ककुभो सम्पञ्चित्रिविंस्तृतीये साहस्रप्रतिरूपे पूर्ववद्वलोपस्तत् कौत्सवरुणसाम्नोर्वृद्धं परयोश्चैवं रसंसर्गा हे ततुष्णिहः पुरोहित-कुलोनयोर्द्वादशाष्टाक्षराख्याकूपारात्तत् पृष्ठानां ब्रह्मसाम्नस्त-त्पृष्ठानां ब्रह्मसाम्नः ॥ ५ ॥

अथातः प्रायश्चित्तानुग्रहात्तस्य वर्णिश्चोऽदक्षिणः स यज्ञक्रतुः सं

क्षि स्याप्य इति ऋतुदक्षिणानां प्रतिषेधं प्रतियन्ति नाङ्गदक्षि-
णानां पुरा हि सर्पयकालादृङ्गदक्षिणाः प्रग्रहदेवोऽध्यर्थयोऽधीयते
तासु दत्तास्वदक्षिणत्वं नोपपद्यत इत्येतेन पाद्यदाक्षिण्यं
व्याख्यात मेतेन सार्ववेदसं ऋतुदक्षिणाना मेवैतत्परिमाणं
भवति नाङ्गदक्षिणाभिः सार्धं मितरथैतत्सार्ववेदसिकं प्राय-
श्चित्तं सर्ववेदसदक्षिणेष्वनुपपद्यमानं मन्यन्ते नितरतान्न हि
नित्येन प्रायश्चित्तार्थं उपपद्यत इति तत्र दक्षिणावन्ति
प्रायश्चित्तान्यहर्गणेष्वनुपपद्यमानानि मन्यन्त एकाह इहः ऋतु-
भूत मविक्लृप्तानि भवन्ति न पुनरहर्गणेष्वेक मेव ऋतुभूतं
विद्यते तत्रैकस्याङ्गो भेष इतरेषा मध्ये भेषजः कल्पो नोप-
पद्यत इतरथाप्यूर्ध्वं प्रथमादह्नो नैवादाक्षिण्य मुपपद्यते न पाद्य-
दाक्षिण्य मिति । तदु चेद् ब्रूयुरथवैतदेवाह दक्षिणं स्यात्तस्य
चैव पुनःस्तुतिः स्यादिति स दीर्घीपसत्कस्य वै ऋतोः प्रकृतौ
पुनः स्तुति मामनन्तीति ब्रूयात्तेनैतन्नोपपद्यत इति ॥ ६ ॥

अथ तच्छायन्तीयं यद्यविभ्रष्टस्य प्रगाथाभावात् तदन्यस्य
महर्गणेषु स्यादिति यद्वै आयन्तीयं मग्रसामेति ब्रूयात् आयन्तीयं
मग्रसामेति चोक्ते किं मन्य इत्यहरपादेव प्रतीयामेति तदे-
तदुपपत्तेरतान्निपातमान्यो येनार्यैकाह्नोऽन्यहत्या मध्यस्ता
वेकस्मिन्नाहनि कृत्वा मारुहितेन मन्यन्ते आयन्तीय मप्येकस्मि-
न्नेवाहनि स्यादित्यथापुनरपपद्यत एवैष आयन्तीयादिष एकस्मिन्
वाहन्यसम्भवाद्धिपूर्वापरयोरास्नाययोः पूर्वस्य प्रत्याम्नायो भव-
तीति क उ खलु विभ्रष्टय इति यः अत्र भेष इति नैतन्नो-
पपद्यते संस्थां ह्येवं यज्ञक्रतु राज्येत सर्वेषु चेदहःस्तोत्रेषु पुनःस्तुति
रेव स्यात्तस्येव विभ्रष्टश्या भवन्तीत्यौलाक्रमाणिकत्वात्तु रवन्येदः

सोमापहरणं सोमाभिदहनं सोमातिपवनं क्रतुविलोप एव पञ्चम एतेषु हि पुनः श्रुतिराम्नातः संयुक्ता नु खलु पुनः श्रुतिर्विभ्रंशेत हि यस्मिन् क्षेत्र यज्ञक्रतौ विभ्रंशेत क्षेत्र तस्य प्रायश्चित्तिरिति हि भवतीति कियति कालात्यये विलोपो भवतीति यत्राग्निहोत्राहुतौ अन्योन्यस्याः स्थान मापद्येते यत्र दर्शपूर्णमासौ यत्र वापि क्रतू सुत्याहः परस्याह्नः स्थान मापद्येतैकाहो वा परमाहरित्याहुः रिति। तदु हैद ब्रूयुर्यौगिकश्च कर्तान्यस्य कर्मण स्थान मापद्येत विलोम एवैवं वादस्य स्यात्तदेव मतं वस्याविलोपानां सर्वदिति तत्र ब्रूयात् पूर्वपक्षादिस्थानस्या आवास्यस्यापरपक्षापादने विलोप मध्यर्थेव आमनन्त्यपरपक्षादिस्थानस्य पौर्णमासस्य पूर्वपक्षापादने हरादिस्थानायाः प्रातराहुते रात्र्यापादने रात्र्यादिस्थानायाः सायमाहुते रहरापादन एतेन मन्यन्ते ऽहरवरार्ध्यं वा कालात्यये विलोपो भवतीति नित्यं ज्यायस्यभिजानन् स्वयं न हरन्तरात् कालात्ययानेतदवरार्ध्यं विलोप माम्नासीदिति ॥ ७ ॥

यदि सत्राय दीक्षेरन्नथ सामुत्तिष्ठेत्सोम मपभज्य विश्वजिताऽतिरात्रेण यजेत सर्ववेदसेनेति भवति स खलु विश्वजिद कामादुत्तिष्ठतः स्यात्र त्वेनं समन्नियो बाधे ऽन्यत्र वा यज्ञो विलोपः स्यात्तत्र वैनन्दरूपो व्याधिः स्वभेदेनान्तः सत्रं प्रायश्चित्तं तवदुत्थाय विश्वजितातिरात्रेण यजेत कामापत्तिषु किं प्रायश्चित्तं विधीयत इति तदु यद् ब्रूयुः पश्यामो नापद्वि कामादुत्थानं यथा दशसु मासेषु गवां षट्सु वातवतः समद्मेघो नैमिषीयाणामित्यवेलयां वै खलु वा क्षपानां पद एवोदस्याविलोपानुपवादरूपं तस्य प्राप्य । मथ ये गावश्च नैमिषी-

याश्च वेलाया इत्यर्थः एकोदकस्यासन्न पयो ह्येव गावो बभूवुस्तथा नैमिशीया आसंस्तु खलु सर्वत्र प्रमाणं भवत्यथापि सिद्धिमेव गता मामनन्ति तथा नैमिशीयानां नवे खलु विलोपे सिद्धि मान्नास्यदिति तदु हवेद् ब्रूयुर्येऽस्य प्रजाया मध्याते स एतत् सत्रं समापयादिति विलोपानुवादरूपं ब्राह्मण मितुपपद्यते वा एतद्विलोप एवं ब्राह्मणं वेला हि यत् प्रजायै न्यायः सप्तपर्वा साधिष्यन्ति इति ते खल्वेते द्वे पर्वणी सत्रे यथा त्रिपर्वा ज्योतिष्टोमश्चतुष्पर्वाणि सारस्वतानि ताहृश मेतद्भवति ॥ ८ ॥

स खलु विश्वजिद्दीक्षाभ्यनुत्तिष्ठतः स्यादितोऽके सोमाप-भागेन जानीमोऽक्रीतो हि दीक्षासु सोमो भवतीत्यपि दीक्षाभ्य दुत्थाचार्याः सासुत्यान्नकारितो हि भवतीति यद्देतत्सोमाप-भागेन जानीम इति क्रीते सोमे संयुक्तो भवति नाक्रीते तद्यथा विश्वजिता धर्मा एकाहे ऽहःसंयुक्ता भवन्ति नाहर्गणेषु ताहृश मेतद्भवति तत्र कथं सोमक्रय इति न विद्यत इतोऽके विश्वजिति चेद् हिः क्रेतव्यो भविष्यत् किमर्थः सोमापभाग मान्नास्यदित्य-थापि सोमसंस्कारार्थः सोमक्रयो भवति सोऽयं पुरस्तादेव संस्कृतो भवतीति कलङ्कलोपो ऽक्रीयमाणे सोम इत्याचार्याः क्रेतव्य एवेत्यथाप्याह सर्वस्मा एव दीक्षते सर्वं माप्नोतीति स चेऽन्या-दीक्षोपसद आमनन्त्यथान्यं सोमं न क्रीणीयादग्राघातरूपोऽन्यस्मिन् सुक्रीते सात्विकं सोम अपि सृजेयुर्यद्देतत्किमर्थः सोमापभाग मान्नास्यदिति सत्रसमाप्ति मेतेनोपाप्नुम इत्यत एवं पश्यामः सायस्केषु सद्यस्कृते सत्याख्ये दास्तं यत्रापि सर्गात् सद्यस्त्व माम्नायमानं ताहृश मेतद्भवति यदि चापि सोमसंस्कारार्थः सोमक्रयो ऽभविष्यत् क्रीते सोमेऽपकृतेऽर्थः पुनः क्रेतव्यो ऽभविष्य-

दपुनः श्रयणमु खलु दर्शयति स खल्वेकस्तोत्रिष्ठत प्राम्नातस्तं लथ सामान्यात् सर्वेषा मभ्युच्छितां प्रतीमः प्रतीमः ॥ ८ ॥

यदि पर्यायैरस्तुत समभिव्युच्छेदिति तत्वयं सामान्यादप्येकस्मिन् पर्याये प्रतीमोऽपि द्वयोरभिविवासाच्छक्नुमाना ऽद्वया-र्थं यकल्पोऽनभिवासार्थो हि रात्रिसंरोधो भवति यद्येतदभिव्युच्छेदिति ब्राह्मण मपीरष विभक्त्यपनिपात एव स्यादभिव्युच्छेदिति त्वेव शाट्यायनिब्राह्मणं तथा भाल्लविनां तथा भालविनां तथा तैत्तिरीयाणां कीथ सर्वेषां विभक्त्यपनिपात एव स्यादथापि चेदनभिविवासार्थो रात्रिसंरोधो ऽभक्ष्यदपरिमितः स्तोमो ऽभविष्यदथा नाभिविवसेत्तथा सुवीर्यमित्यभविष्यन्नन-भिविवासार्थं रात्रिपरिमाण मुपपद्यते ते न परियाणेनैव स्तोमस्य जानीमो व्युष्टा संयुक्त एवायं कल्पो भवतीति क उ खलु गर्म-त्रिरात्रे प्रथमस्य रात्रिपर्यायस्य स्तोमः स्यादिति पञ्चदश इतरेऽ पञ्चदशभिर्होत्रे स्तुयुः पञ्चभिः पञ्चभिरितरेभ्य इति ह्याहेति तदेतन्नोपपद्यते पश्यामः प्राकृतान् कल्पान् प्रायच्छतैरन्वाम्नायमानाच्चैतद्‌जोऽग्नीषोमीय ऐन्द्रामारुता उच्चाणो मारुत्यो वत्सतर्यसत्री वत्सदशत्रीबद्धविशोनं मिति चैतेन मन्यन्ते पञ्चदशभिर्होत्रे स्तुयुरित्यपि प्रायच्छतैरन्वाम्नातो भवति तस्मात् षोडश एव स्यात् ॥ १० ॥

अथ खल्वर्वाक्सुवातिष्ठ्योपर्न स्तोत्र मधिकृत्य भवत स्तोत्रार्थसामान्यात्समानस्तोत्रेऽपि प्रतियन्ति प्रथमे चेत्पर्यायेऽतिष्टुतं स्यादुत्तरयोः प्रतिनिरस्येयुः पूर्वयोर्वातिष्टुत मुत्तमे चेदतिष्टुवन्तो विनीतायां स्तोत्रायां प्रस्तुतायां वा रन्नसमाप्यैव तां विरमेयुर्न च तेनातिष्टुतं मन्येत यथर्वाक् स्तुयुःप्रामितोभिर्न संस्थुर्यदातिष्टु

युर्यावतीभिरुतिष्ठेयुरिति हि भवतीति कल्पानां स्तोत्रीयाणा मधिकारो भवति न स्तोत्रीयेतराणां मित्यर्थाक् एतच्च स्व-जपिता स्वच्छिद्रासु ऋध्येरं स्वेरेव ताभिः स्तोत्रीयाभिरिति मन्त्रो व्यवायो हि स्तोत्राङ्गैः स्तोत्रस्य न्याय्यन्तरो यथा चेत् स्तोत्रीयालोपोऽथाप्येवं सत्युत्तरं स्तोत्रं यथाप्रकृति भवत्यथे-तरयोर्भे एवायमप्रकृते भवतस्तावतीभिर्वातिष्ठेयुर्भूयोऽन्तरभि र्वेति सच्छन्दस्या अधिकृता मन्त्रा एव मिव च ह्येतस्य वाक्यस्यार्थो भवत्ययने तत्र प्राकृताच्छन्दोयोगाद्भवति तदाथा स्वारयौडयोः क्रियमाणयोर्नैवाक्षरसामान्यात्साम्य मुपपद्यते न छन्दःसामान्यात्साम्य ताद्वय मेतद्भवति समानस्तोत्रे चेन्न स्तोत्रीयाविपर्यासः स्यात् अतः सं गणयितव्य आनुपूर्व्यार्थं न ह्यभ्यावर्त्तमाने स्तोमातिरेकः स्यान्न चानुपूर्व्यं न व्यवाप्येत तत्र सर्वप्रायश्चित्त मेव स्यात् ॥ ११ ॥

तं चेदस्तुते गायत्रेण संहितस्यैकस्यां स्तोत्रीयायां स्तुतायां ऋध्येरंस्तत्समापयेयुरेव संहित मिति मन्त्रास्ते स्तोत्र-सम्बद्धानि हि नाना सामानि पवमानेषु भवन्त्यवान्तरसम्बन्धस्तु वस्यं साम वाह्यतर इ खलु सम्बन्धो व्याहन्तव्यतरो यथा वेद-वान्तरसम्बन्धोऽथाप्येतदथा ऋचे संहितं पुनः प्रयोगे भवति तच्चरचे साम् विद्यात इति तदु चेद् ब्रूयुरथ वै गायत्रस्य च सन्नि-पातः स्यात्कृत्स्न च तच्चामि स्यादिति विद्यते जामिकल्प इत्या-हुस्तेषु च गर्भेषु च तदाहियते तदेव संशये प्रत्येतव्य मित्यथ यत्किंस्तोत्रे द्रव्य मनुवियते चेत्समस्ताः सुवीरन च तेना-तिष्ठेत मन्त्रे स नित्यानां साथ द्रव्याणा मधिकारो भवति ना-नित्यानां न ह्यनित्यानां लोपे प्रायश्चित्त मा भवतीति ब्रूयाद-

प्यपि यः सर्वेषां द्रव्याणा मधिकारं मन्येत सर्वेषा मपि स्त्री-णामा मधिकारं मन्येत तस्यैवं नावीस्तवातिहवी स्याता मथ खलु विद्वांसोमं संसुनुयाद्दित्येके कामापत्तिषु हि प्रायश्चित्त विधीयत इति नाविदुषां संसव उपपद्यत इत्यौडाहमानिर्न हि ज्ञानाविषये संसवः स्याद् दौर्बल्यादध्वनो विद्वांस्त्वेव संसुनुयाद् यत्रासंस्तु सुन्वन्यज्ञात्यया च्छडेत यदेतदकामप्राप्तौ प्रायश्चित्त मिति पश्यामो न कामापत्तौ प्रायश्चित्तं यथाहिताग्नेः प्रवासका मिष्टिं तादृश मेतद्भवति ॥ १२ ॥

मद्दति रात्रेः पूर्वतरमनुवाक मुपाकुर्यात् पूर्वो वाचं पूर्वश्छन्दांसि पूर्वो देवता वृङ्क्ते पूर्वोऽभिषुणुयुरिति तां न पूर्वचिकीर्षा मनेरतैवं पूर्वकल्पस्त्वेवैष भवति यदि पूर्वचिकीर्षा भविष्यत् पूर्वं प्रातरनुवाक मुपाकुर्यु रित्यभविष्यत्तु कालनियोगात् प्रातरनुवाकस्य जानीमो न पूर्वकरणात् पूर्ववादा भवन्तीति यद्यपि पूर्वकरण मुक्त मनेरताशक्यमाने स पूर्वकरणेन प्रायश्चित्तं कुर्यात् परेषां हि देवतासु परिगृहीतासु देवतापरिगृहीतार्थं प्रतिजानानः कस्मात् कुर्यात्तदन्वह मेहर्गणेषु स्यादित्येके हरयेतसंसूयेतेति कृत्वा रात्रेवेत्यौडाहमानिस्तच्छायन्तीयेनैव व्याख्यातं तत्र व्यूढेष्वहःसु स्वस्तिष्टुब्जगतीरेव वृषण्वतीः कुर्यादेवं प्रायश्चित्तं च कृतं भवति व्यूहश्चानुगृह्यत इति नियुक्ता वा आग्नेयकल्पेन वृषण्वत्यो भवन्तीति चेज्ज्योतिष्टोमे ता नियुक्ता भवन्तीति ब्रूयात् तद् यथा सर्वाणि प्रायश्चित्तानि ज्योतिष्टोम आम्नायमानानि सर्वक्रतूणि प्रतियन्त्येव मप्ये तद्वृषण्वद्रूपं ज्योतिष्टोमेषु नियुक्तं सत्सर्वक्रतुगमक्रतोमोऽथापि य एताः सर्वक्रतुगा मनोता षष्ठे दाशरात्रिके ऽविकृतदृष्टाहरिति सप्तांश्येह बहिष्पवमाने चाभवे दाग

पुनः समानाह्नि स्तोत्रीयाध्वारो विद्यते ऽन्यत्र विद्यमानात्त-
देतन्नोपपद्यते यदि ह्येना ज्योतिष्टोमे नियुक्ता मन्येत सर्वत्रैवैना
नियुक्ता मन्येत न ह्येतदुपपद्यते समानत्वादेवास्यान्येषु क्रतुषु
नियोगो भविष्यत्यन्येषु प्रथव इति यद्यु वै ज्योतिष्टोमेऽपि प्रथवं
प्रतीयादन्येषां यथादेशानां प्रथवम्प्रतीयाद् यथा स्वाराणा मति-
छ्वे नौधाना मर्वाक्सूवे वैष्णवीयानां मनुष्टुभां कलप्रदरणे
यामानां स्तोत्रकल्पत्तु मिति ब्रुवन्नार्षेयकल्प मभिक्रियामन्त्रेति ब्रुवं-
स्तद्वर्ग व्याहन्यात् कस्मादन प्रायश्चित्तेन व्यूढो व्याहन्यं ताथे-
षस्तीहति प्रतिपद मेव व्रषण्वतीं कुर्यादसच्छ्रायाय निकल्पा ह्येवैष
भवति प्रतिपदा व्रषण्वती कार्या सवनमुखेषु चेति सवनमुखेषु
चेति ॥ १२ ॥

॥ इति उपग्रन्थसूत्रे प्रथमः प्रपाठकः ॥

॥ अथ द्वितीयः प्रपाठकः ॥

॥ हरिः ॐ ॥

यदि सोम मक्रीत मपहरेयुरन्यः क्रेतव्यं इत्येतावदेतद्भ-
वति तत्र न प्रायश्चित्त विद्यते दीक्षित आगमयेतासोम-
लाभादपि गिरिस्थावेयुरित्यपि शाण्डायनिब्राह्मणं यदि क्रीतं
यो ऽनेशा ऽभ्यासन्न स्यात्स स्याहृत्यो न दूरादाहृत्यो न ह्युपसदां
विकर्षो विद्यत इतीवार्थो भवति स खल्वो समा दाध्यायनकाला
दागमयितव्य इति मतान्ने व्रत्याभिषवो हि आयान् भव-

त्याख्यायमानानां यथास्थानकरणादिति तद् यद्येतत्प्रत्यक्षोऽधिगम्येत यदि परोक्षो नैवैनं पुनः क्रीणीयात् पूर्वस्यैव हि स क्रयणक्रीतो भवति सोमविक्रयिणे तु किञ्चिद्दद्यान्न पुनः क्रेतव्य इति वार्थो भवति क्रयाय तु किञ्चिद्देय मिति ग्राह्यायनिब्राह्मणं तच्चेद् यजुष्कृते परोक्षे प्रत्यक्षोऽधिगम्येत परोक्षेणैव वर्त्तेयेयुरिति मन्यन्ते न हि यजुष्कृतस्यापघातो विद्यत इति प्रत्यक्षालाभादेव हविषः परोक्षो भवतीत्यपरं प्रत्यक्ष मेव प्रयुञ्जीरन्नित्यथाध्यनग्राय यो यत्संवत्सरं वा परोक्षेणैव वर्त्तयेयुरिति यद्येतन्न यजुष्कृतस्यापघातो विद्यत इति पश्यामो यजुष्कृतानां मात्राव्यापादाद्धविष्यानाम्नायमानानात् पञ्चशारदीये यथा ते मात्राव्यापादीद्धविष्या अवन्त्ये व मपि प्रत्यक्षे ऽधिगते ऽद्धविषः परोक्षो भवतीति स खल्वधिगमनं तदेव प्रत्यक्षं प्रयुञ्जीतानभिषुतश्चेत् परोक्षः स्याद् यद्यु वा अभिषुत उत्तरस्मिन्नभिषवकालेऽभिषुणुयु रथ परोक्ष मपो वाभ्यवहरेयुः सकृदेव वा सर्व मभिषुणुयुः तच्चेदनभिषुते परोक्षे प्रत्यक्षोऽधिगम्येत तत्र सर्वप्रायश्चित्त मेव स्यात् ॥ १०॥

सन्निपाते हौतरदीक्षात भवति क्रीतस्य चापहरणे परीक्षाभिषवे च तत्र विप्रयोगे कल्प मथ खलु सत्रेभ्यापियात् पाञ्चदक्षिणं साम प्रायश्चित्तं तु क्रियेतेत्येके तद्यदेतदहीनैकाहानां सन्नाख्यापद्यमानानां दक्षिणा अपयन्ति ताभ्यो नेतद्भवति न तु प्रायश्चित्तानां मङ्गावलोपेन वृत्तिं पश्यामः कल्पानि ह्येव त मर्थं साधयन्ति तद्यथा दग्धप्रायश्चित्ती मूर्ध्वं ब्रह्मसाम्नोऽतीतकालं ब्रुवते ब्रह्मसामात्यया देव मपि पाञ्चदक्षिण्यस्यासिद्धेः सामैयोगोऽपि नैं सिध्ये तत्र सर्वप्रायश्चित्त मेव स्यात्तच्चेत् तृतीय

सवनात् सोम मपहरेयु रामाध्यन्दिनात् सवना॰ दुपनिहत्य माध्यन्दिने सवने ऽभिषुणुयुरिति मन्यन्ते न हि तृतीयसवने सोमसंस्कारो विद्यत इति तदेतन्नोपपद्यते यदि ह्येन मापदो हेतो रसंस्कृतं पुरस्ता माध्यन्दिने सवने ऽभिषोतव्य मन्येताथेम मापदो हेतोस्तृतीयसवन एवाभिषोतव्यं मन्येत न च हि साधु ज्ञातस्योपनिहन्तिर्विद्यते ऽपि च तृतीयसवने तैत्तिरीयाः सोमा- भिषवं मामनन्ति पयो वा हिरण्योदकं वा प्रतिनिदध्यादित्यपर मेतौ ह्यनभिषवकाले सोमप्रतिनिधी भवत इति यदि तु पूत- भृतिसोमसंस्कारो विद्येतार्थेतदेवं स्याद् यद्यु वै पूतभृदपि हृतः स्यादन्य मेवाभिषुणुयुर्न ह्यविद्यमाने सोमातत्त्वने पयसि वा हिरण्योदके वा सोमत्व मुपपद्यत इति ॥ २ ॥

यदि कलशो दीर्येतेति भवति त मेके पूतभृदाधवनीययो- रधिकारं मन्यन्ते कलश इत्यात्मा सर्वेषां सोमधाराणां कतर मनुकतमं मनोमहीत्यनियुक्तं तु पूतभृदाधवनीययोः कलशत्वं कुम्भाविति हि वयं मधीमहे ऽथापि पश्यामो द्रोणकलश मेवा- भिक्षतं ह्यस्य कलशः उपदस्यतीत्येतेन वचनेन पूतभृदाधवनी- ययो र्दीर्णयो रुपसदनं विद्यते यावान् ह्येतयोः सोमो भवति बहुरेव तावान् भवति. तद्यदेव कलशो दीर्णः सिक्त तदिदं प्रायश्चित्तं कृत्वा नैवादीर्णा सिच्यमानेनोप वा सिक्ते दीर्णे ऽथ सोमातिरेकात् स्तोत्रोपजनः सवनसंख्यासाम्याद्वो भवत्यग्नि- ष्टोमातिरात्रयोश्च तत्स्वर्थसामान्यादितरास्वपि संस्थासु प्रतीमः स खलु नाविद्यमानां संस्थां प्रणयेत्तस्य तस्य कर्तो ज्योति- ष्टोमं त्वधिकृत्य प्रायश्चित्तान्याम्नायन्ते तस्मादग्न ज्योतिष्टोमोः [illegible] ,मनुष्यानमीति [illegible] वेद मतो: प्रवृत्तो प्रवृत्ता:

संख्याया अतिरिच्येत द्वितीयां वा संख्यां प्रथयेदेकस्तोत्रं वोपदध्यात् ॥ ३ ॥

तच्चेदुक्थसंख्या ऽतिरिच्येत विष्णोः शिपिविष्टवतीषु गौरीवितं चतुर्थं मुक्थं कुर्यादक्रतं चेदहःकल्पे स्यादथ चेत् क्रतं मच्छावाकसामजातीय मेव शिपिविष्टवतीषु कुर्यात्तच्चेत् षोडशिसंख्यातिरिच्येत विष्णोः शिपिविष्टवतीषु गौरीवितं द्वितीयं षोडशिसाम कुर्यादक्रतं चेदहःकल्पे स्यादथ चेत् क्रतं षोडशिसामजातीय मेव शिपिविष्टवतीषु कुर्यादथ वाजपेये क्रत मेव गौरीवितं भवति क्रतौ शिपिविष्टवत्यस्तच्चेदन्याभिष्टुभः शिपिविष्टवत्योऽधिगम्येरंस्तासु बृहन्निधनं वाकजम्भं कुर्यात् काण्वं बृहद्वा यद्वा वेन्न त्रिष्टुभोऽप्यन्यच्छन्दस्याः शिपिविष्टवत्यस्ते व यद्वा न शिपिविष्टवत्योऽपि वैष्णव्य एवा न्वैवात्र देवता प्रयुज्यते तच्चेद् बृहत्सन्धिषाम्णोऽतिरात्रादतिरिच्येत विष्णोः शिपिविष्टवतीषु रथन्तरं द्वितीयं सन्धिषाम कुर्याद्वा द्वितीयं सन्धिषाम क्रियमाणं कि मन्यद्रथन्तरादेव प्रतीयामोऽथामोर्यांगिरा गौरीवित मेव शिपिविष्टवतीषु कुर्यात्तिस्रो ह्य तिरोरात्रां णस्योपसचार उपसद्वाः ॥ ४ ॥

नैदिष्ठिनि दीक्षिते प्रेतस्यैव पूर्वपुरुषैः सह मामाग्निष्टोमीयुः संवत्सरेऽस्थीनि याजयेयुरिति भवति त मेव उभयोः प्रेतकल्पयोर्मन्यन्ते ऽन्वयस्थाने ह्याम्नाता भवन्त्यरस्यै वेत्यमन मेतदयुक्त्युरिति हि पूर्वं कल्प मपहन्योत्तरेण संयुज्याम्नातो भवति स खलु संवत्सरे ज्रियन्तो भवति यद्वा हैनं चिन्वः कुर्युः सर्वान्तांस्तत्सरं गणयेयुर्यद्वा नैदिष्ठी प्रायश्चित्ता इव प्रायश्चित्तानतरेणीस्थियाजनं च प्रेताग्ने दीप्येरन्त स्वैतुषदन्ति

होमꣳ हूयेत न दर्शपूर्णमासाभ्या मिज्येत प्राणावभृथे ह्येषोऽग्नि-
होत्राहुत्योश्च दर्शपूर्णमासयोश्च सम्बन्धस्तस्मात् प्रेते नार्थोऽतो न
याज्या न प्राणावभृथा भवन्ति तस्मात्ते प्रेता अपि समापयि-
तव्या असम्मितꣳ स्तोमꣳ स्यादिति भवति तत्रैकेऽसमीक्ष्य स्तोम-
स्यैकान्त्यꣳ सुत्यौरं नित्यसम्मितं प्रतियन्त्युपपद्यते च ज्याय-
यस्त्वं कनीयस्त्वं च स्तोमाना मपि प्रेत्यासम्मितं ब्रूयादेव
मसम्मितं भवतीति न त्वेवं पर्यायधर्म आराध्यते नविष्टावधर्मो
न ज्योतिष्टोमानि च तत्सामान्यूर्ध्वं वै त्रिवृतो याथाकामो
स्तोमानाꣳ स्यादित्यपर मेव मेतत्सर्व माराध्यत इति तत्र त्रिवृतः
स्थाने दशप्रभृतीनां याथाकामो स्यात् षोडशप्रभृतीनां पञ्च-
दशस्याष्टादशप्रभृतीनाꣳ सप्तदशस्य द्वाविंशप्रभृतीना मेक-
विंशस्येति ॥ ५ ॥

कलशे उपदस्ते हिरण्य मेवापोऽभ्यवनयेद्धिरण्य मभ्युन्नये-
दिति भवति द्रोणकलशे हिरण्य मवधाय तत्रापोऽभ्यवनयेयु-
र्हिरण्य मेव चमसेष्ववधाय तेष्वपोऽभ्युन्नयेयुः प्राणा वा आपो-
ऽमृतꣳ हिरण्य ममृत एवास्य प्राणान्दधाति स सर्व मायुरेतीति
भवति नाराशꣳस उपदस्यते तत्रापु अवनयेदित्यस्य अवनये-
दित्यर्थं मन्यन्तेऽमु मिति हि भक्षदक्षिणाना प्रत्यक्ष माचक्षते यदि
पीतापीतो सोमो संसृज्येयाता मिति हुताहुता विभ्यर्थं मन्यन्ते
न भक्षिताभक्षितो न च प्रच्छिष्टहोमो विद्यत उपपद्यते च हुता-
हुतयोरिव पीतापीतत्वे हुते ह्येवाभक्षिते पीतवन्मन्त्रवर्णा भवन्ति
यदेवेन्द्रपीतस्यत इन्द्रियावत इत्यत्र खल्वदृष्टभक्षीनाजानꣳ-
छन्दो नादिष्यति तद्यस्य छन्दसः कालः स्यात्तच्छन्दसा भक्षयेयु-
रिति मन्यन्ते तदेतन्नोपपद्यते यद्येव मभविष्यत्तच्छन्दस इति

वाग्वास्यदृच्छन्दस इति वा यथामुथरीत्यायेत्वंनाजानन्न राजान मामनत्वथापि विकृतो भवति तद्यथाग्निविकार एव सप्यग्निम्न च्छन्दस्त्वाविकारोऽथापि चेदनाजानऽञ्छन्दो नाद्रेत्यदिदं पीतता मपि नाट्रेत्येव लिन्दविन्द्रपीतस्येत्याहैते न मन्त्रो प्रस्थित मधिकृत्यामनन्तीति प्रस्थित मु चेज्ञानन्निलैवच्छन्दो भाद्रिवत्यच्छन्दस्त्वादेव भक्षस्य यस्यो हेवोः प्रस्थित मधिकृत्या-मनत्यन्वयस्यान आम्नातं सर्वस्तोत्रेषु प्रत्येष्यतीति ॥ १ ॥

तत्र नाराशंसानां मिन्दुरिन्द् मवागात्तस्य ते देवतः पितृभिर्भक्षितस्येति प्रातःसवने समानं पर मोर्वैः काव्यैरिति परयोः सवनयो रथ षोडशिन इन्दु मवागात्तस्य ऐन्द्रं सहोसक्षीति समानं पर मथ सन्धिभक्ष इन्दुरिन्दु मवागात्तस्य त इष्टयजुषस्तो देवसोमस्तुतः स्तोमस्येति समानं पर मथ खल्वाज्येनाभ्युपाकृतस्य जुहुयादिति भवति यत्र सदसोऽनिष्टं तं नाराशंसं स्तोत्रेणाभ्युपाकुर्य्युस्तदिदं प्रायश्चित्तं कृत्य किमु खलु होतव्य मिति सोम इत्येक आजीरनाभ्युपाकृतस्य जुहुयादिति स्वाजीरन्नभ्युपाकृते प्रायश्चित्तं जुहुयादित्यभविष्यन्न चेत्सोमाहुतिरभविष्यदनाचारस्तन्नोभ्रेये सोमाहुतीनां न चोच्छिष्टहोमैश्चिद्यतेऽथापि वषट्कारप्रदानैः सोमो भवति न च सोमः सोमदेवतो विद्यतेऽथाप्याजीरनाभ्युपाकृतस्य जुहुयादितुमन्ये च मन्त्राद्याहुतेरेव प्रतीयामितिं तदु चेद ब्रूयु राजीरन स्तोत्रेणेति वा वितुस्याथो भवत्यत्र हि प्रथम मभ्युपाकरणाद्वयं भवति यदा अशक्य सर्वं मधिकृत्याम्नातु तदन्वयस्यान प्रामनन्तीति ब्रूयादथेद स्तोत्राण्यधिकृत्याम्नातं भवत्यथाप्येति कात्यायनीयानामध्ययूनां स्मृतिर्भवति यस्य चमसोऽभ्युपाकृतः स्यात् एन

मुत्तरसदसि प्रावस्थाप्य पूर्वया द्वारा सदसोपनिहृत्य पुरस्ता दाग्नीध्रीयस्य निधायाज्यं जुहुयादिति यद्वै तदाज्येनाभुग्नाकृतस्य जुहुयादिति प्राजेरनाभुग्नपाकृते प्रायश्चित्तं जुहुयादिति वा एतदुपपद्यते ॥ ७ ॥

सोमेऽभिदग्धे सोमभक्षमन्यभिषुणुयुरित्यध्वर्युब्राह्मण मन्याभि रोषधिभि रभिसंसृजेतेति प्राच्यायनिब्राह्मण मौदुम्बर्यां भग्नायामहृतो वृक्षात्तद्वर्णरूढाया मन्या माहृत्य तथैवाहृतोच्छ्रित्यो-च्छ्रितास्वग्नीध्रीयं गत्वा महाव्याहृतिभिर्जुहुयादथ खलु न बहिरवभृथं यूपविरोहणे श्रेषं मन्येतापि न कलशदरणे ग्रावापिधौरणे महा-वीरभेदन इति बहिरवभृथं श्रेषं प्रतीयाद्य इहैवं मन्येताथ यत्र विप्रुषिद्वप्रायश्चि... श्रेषाः पूर्वापरे युगपत्सन्निपातेयुर्यथा श्रावदक्षिणस्योत्तरयोरवच्छेदयोः सन्निपातेऽसिद्धिप्रतिषिद्धानि सर्वोत्तराणि प्रायश्चित्तानीति विद्या दथ चेत् सर्वे युगपद्विच्छिद्ये-रन्नसिद्धिप्रतिषिद्धान्येव तत्रोत्तराणि प्रायश्चित्तानीति विद्या दथ चेदनेको ग्रावापि शीर्येत पूर्वस्मिन्वाभिषवेऽपि चोभयोरुभयोर्वा सवनयोः प्रतिहर्तावच्छिद्येत यूपैकादशिन्यां वानेको यूपो विरो-हेद्विभवेत् स्वित्तत्र सकृत्कृतं प्रायश्चित्तं विभवेदिति ब्रूयादेका प्येव स्तोत्रीया होतृमाताऽतिष्ठयमाना स्वारं वा जनयति चौडं वाथ बहुषु सकृत् कृत मेव विभवेदित्येतमनुरामहे बहूनपि समानजातीयश्रेषात् सकृत् कृत मेवं विभवेदित्येतेन ब्राह्मणः प्रायश्चित्तं व्याख्यातं सकृत् कृत मेव विभवेदिति तत्र ग्रावाहुनयो महावीराभिमर्शनं च तद् ब्रह्मा कुर्यात् प्रायश्चित्तिरनुज्ञाता वा प्रकरणादध्वर्युकर्म त्वेवैतन्मन्यन्ते एष च हि श्रुतिस्मामा माङ्गलीनं होता महावीरेषु भवत्यपि नोपातुमनुसंधाय

वैमाहुतिर्विद्यते, न ब्रह्मणो नो मंहगौरवराविम भवत इति भवत इति ॥ ८ ॥

पृष्ठाना मनुकल्पः प्रथमे हनि रथन्तरयोन्ये त्रिणिधनमध्ये निधनयोः स्थाने तृचस्ये स्यातां प्रतिष्ठेवोहगीतिपृष्ठरहस्या-पूचित तस्माद् बृहद्रथन्तरे एकर्चे न कुर्वन्तीत्येडक्रावमत्य मैधातम्। वैखानसं वेडानुग्रहदृष्टान्तात् स्तोमासंभवाद्विहलभिदेकनिक-दर्शनेर्नित्येर्वा सहैकर्चाः यज्ञगीवमध्यो वा बृहत्यां साम तृचो नित्ये अन्तरानुष्टुभि पृष्ठोदर्के हो प्रथमायाः सर्व एकर्चास्त्रिणि-धनमध्ये निधनानुग्रहवृत्तेः, स्वारान्तं, नरायद्दष्टे वैखानसो-हगीतिरेवं प्रायणीये त्रिवृति स्थाने च तृचेषु पराणि स्तोम-सम्भवोद्गीत्यादिभिरागन्तूनि, प्रत्यहं दैवश्रवसमेधातिथपूर्वा-भीशवेहारायणकौलमलबर्हिषाणि हवहामदेव्ये सयासोमीयं व्यूढि-मांगीयवं निधनवच्चेद्रानुष्टुभानानुरूपाग्निष्टोमसाम्न श्चोहो-निके स्वारे द्वितीयपञ्चमयोः शुद्धाशुद्धीसए, समूढे प्राहृषाभि-निधनवद्वे दागन्तु संयोगेनेकर्चानित्यानुग्रहस्तोमोपपत्तेस्तृचा कार्यो जामिस्थानपृष्ठान्वयप्रतिदर्शनैरागन्तु पृष्ठ थान्ते परि-स्वामायां च प्रीणव्याद्धिति विषाक्तो—चेदेडं चेद्यन्य प्राग् द्वाभ्यां निधनवन्नेत् पृष्ठं तृतीये बृहत्यां माध्याद् विपरीते पञ्चमि-चाव्येत्यतिकल्प्य, नरायस्य मागन्तु स्तोये ऽष्टमे प्रव्येवागन्तु बृहतीषष्ठे गौरीविताद्विपरीते व्यूढे ॥ ८ ॥

द्वितीयस्यामेवे गायत्र मेकस्या मर्वादनुष्टुभा वापसंक्रमोऽ-भिवेचनीयवत्तथोत्तरयोर्जामि चेद्यन्ते नेत्यनयोर्मध्ये विपरीते व्यत्यास मेकर्चस्तृच इति चतुर्थे वा ककुबादंयत्वात्र्येकर्चा-स्तृचामानीतरत्र्य षष्ठे विपृष्ठाभिमानितत्वात् पुरस्तादुपरिष्टा-

दित्युभयोः स्यादुपाङ्गपृष्ठान्याहार्य्यपृष्ठयोश्चैवं प्राक्वादिषु हिसा-
मत्वाच्छन्दस्य वारवन्तीयं स्यादुभयोः पवमानानुकल्पः पृष्ठानु-
पूर्व्येण स्तोत्रीयानामाब्रवदा प्रत्यक्षपरोक्षाभ्यां सामानादेशा-
च्चोभे पावमानिके रेवतीसंयोगाद्वारवन्तीयेन प्रत्यक्षार्थे दाढ़े-
कुरुते न परोक्षार्थं प्रत्यक्षाणीति प्रकृतिपृष्ठत्परोक्षाणीत्युभयतः
पारोक्ष्यात् प्रत्यक्षपरोक्षकालसर्गाद्विभिर्दर्शनाच्चैकत्वे वा प्रत्यक्षेषु
विष्टुतीनां छन्दोधिकारत्वादुभयेषां च दर्शनात् तु पञ्चमे
भेदान्न हि महाभाक्तोष्वन्यदभीवर्त्तकालेयानुकल्पइति चेतो-
भयासम्भवाद्नूवष्कारत्वाच्च स्यात्तु विकल्पनियमात् सम्भवस्य
प्रथमेऽहनि रथन्तराभीवर्त्तयोर्वाजयानि सामत्वेनाज्यामि-
त्यत्वाद् गर्भिवत् रु... वैकर्चाः पञ्चदश्यां पञ्चगौङ्गवाभ्या
व्यवधाय त्रीन् प्रथमाया मेव द्वितीये तदादिवार्हताच्चादभी-
वर्त्तकालेये यथाजाति षष्ठे तु हर्षे चेत्सामत्वस्ततोऽभिविध-
न्वत् पृष्ठं तृतीयपञ्चमयोर्गायत्र मेकस्यां द्वितीयपञ्चमयोर्द्वि-
तीयतृतीययोः ॥ १० ॥

विश्वजिति प्रमाताः पृष्ठदेशास्तेषु तस्य तस्य प्रकृतस्य
पृष्ठान्यनुकल्पयेद् यथाशक्ति न पावमानिकानि पृष्ठव्यपदेशाः
स्युः सुपुराभावाद्विश्वजिति प्राप्तस्य पृष्ठदर्शनादुभयसामानराय-
त्वाच्चोक्त आवापसंक्रमो जाम्यन्त्तिनापदेशानि गायत्रीत्रष्टुत्यो-
र्येष्वोक्त मजामिक्रमेण विश्वजितोऽव दर्शनात् सिमास्विष्टप्चस्यैव
मेवाभवे यज्ञायज्ञीयं न्याय्यानि च हविष्पाङ्गपृष्ठान्याहार्य-
पृष्ठयोश्चैवं प्रत्यक्षाणाए स्थाने परोक्षाणि वृहद्रथन्तरपुरस्ता-
दुपरिष्टाज्ज्योतिष्टोमीयस्तरां जराबोधीयान्तः सामत्वं एव मेका-
नानुकल्पे रथन्तरवृहतोर्मैत्रातिथ्यमंध्यः सामत्वान्न प्रकृत मेव

आर्भवे गायत्र उष्णिक्ककुभो वैकर्च्याः सामर्हच प्रमितौ रथन्तर-बृहतीतृचयोः पाङ्क्त्यादिषु यत् पूर्वं तदादितो बृहत्यां पर्याय-वदिति चेन्न तृचा कार्यात् सप्तराभ्यां स्वैत्योऽच्छावाकस्य वारवन्तीयं यत्तत्कृते पृष्ठार्थं छन्दस्यद्विपञ्चास्वेकत्वचे त्वग्निष्टोम-सामनी पार्ष्टिकनित्वन्ते दैवतभेदादेवाचानुगृहीतबृहद्रथन्तरे नित्यकृतत्वादसप्ताराचानुगृहीतपरोचेतरे यथोक्तं माध्यन्दिन आर्भवे गायत्र्या ऐडं सौपर्णं सामतृचान्ता अनुष्टुभाद्यं बृहत्या परोक्षः बृहद्रथन्तरपृष्ठस्य ॥ ११ ।

आहस्याद्यात् पूर्वे सवने तृतीयाहाख्यानि श्येतं सिन्धुक्षिता-बुष्णिक्प्रभृतित्वतादेतस्मिन् पाङ्क्तपृष्ठान्वाहार्यपृष्ठौ तन्नामधेया-द्गायत्री बृहत्यां वैरूपान्तोनां परोक्षाणि सामतृचो क्लृप्त्यावेद्यः तिष्ठेरेद्वनाम्यर्थमारम्भणकृतत्वादनुष्टुभि गौरीवितात्तृचस्थानीति चेत पूर्वं एकर्चानुगृहीतप्रत्यर्चे जराबोधीयस्य स्वारं सौपर्णं श्यावाश्वं बृहत्यां समन्तस्य वैरूपं नित्यानुग्रह इति प्रैषप्रवस-पूर्वयोर्मेधातिथिसमन्ते आर्भवे ककुभादयस्त्रय एकर्चा गायत्र-नुष्टुभन्ते आर्भवीये यथाच्छन्द एवमेवोत्तरे प्रत्यर्चाणां स्थाने परोक्षाण्यनुगृहीतप्रत्यर्चे वा नित्यः सर्वपृष्ठत्वादनुग्रहो हि यथा यतनं न्याय्यः कृतान्ताच्च सम्भार्याण्याद्यवारवन्तीयानि च पृष्ठ-संयोगात्कालेयवामदेव्ययज्ञायज्ञीयानां त्वनुग्रहः सौम्येषु यथा प्रत्यनुगृहीत बृहद्रथन्तरे चैवं बृहत् पृष्ठं बृहद्रथन्तरपृष्ठ-त्वाद्वैराजं मग्निष्टोमसामव्यत्ययनायत्वात्तस्य स्तोत्रीयं निष्के-वल्येऽनुषङ्गसंयोगादिरात्रनुग्रहाय च बृहद्रथन्तरपरोक्षयोरुभयतः परोक्षार्थोऽभीवर्तकालेयैन्द्रक्रतुवन्नित्यइत्यनित्यः प्रधानविकारात् पृष्ठ्याग्निष्टोमस्य सौर्यधायतनमिति न यथास्तोमं साद्यस्कानां

यामणोः क्रमान्नादिति षड्हे यस्तेनातिदेशाच्छन्दसे विश्वजि-
त्यव्यपदेशानुसञ्चाराच्चानुग्रहीत बृहद्रथन्तरे इष्यन्ते चोभय-
सामतन्त्रे सर्वपृष्ठं यथासोर्यामपि तत्र चेद् गुणात् सम्म-
तेन ॥ १२ ॥

कन्दोमवत्स्तोमयोरनुकल्पः पृष्ठातिदेशा एकविंशत्वहेना-
र्थात् प्रतिषेधाच्च नीसूराणि तत्पृष्ठे तदाख्यत्वाद्ब्राह्मणैक-
सामान्याद्यत्वात सञ्चारार्थानुग्रहाणि द्विविदुतत्येतरपवीत-
वत् स्युस्तु हादशपृष्ठदर्शनात्पुरस्ताज्ज्योतिर्ब्रह्मसाम्नि च पृष्ठदर्श-
नाच्चौभपुरोऽहितयज्ञोस्तनूपृष्ठ इति] प्राधान्यादेकसामान्या-
यत्वादिति बहूनि गर्भेषु वचसंस्कारार्थे सधर्माणि विष्टुत्य
नुपपत्तेर्महावैष्टम्भं भवावापेष्वितराणि स्युः सुन्तृचस्य स्तोत्रौ-
यांख्यानसंक्रमकुलार्यिनो चतुष्टोमाग्निस्तोमसामदर्शनाद्विष्टुत्य
श्रवने च विष्टुतुपपत्तेः सप्तदशवर्जिहिंकाराः कुशादिधानं च
तस्य प्रयोगः पञ्चभ्यो हिङ्कृत्य महावैष्टम्भन्तिसृषु रेवत्य एतस्यां
रथन्तर मेकस्यां पञ्चभ्यो हिङ्कृत्य शक्वरीभिर्मध्यमः पर्य्यायः
सप्तभ्यो हिङ्कृत्य वैराज मेकस्यां वैरूपन्तिसृषु बृहत्तिसृष्वपि वा
सर्वेषां महावैष्टम्भमेव प्रथमो विष्टावो वैराजं मध्यम उत्तमो
वैराजं मध्यम उत्तमः ॥ १३ ॥

॥ इति उपग्रन्थसूत्रे द्वितीयः प्रपाठकः ॥

——————— १.

॥ अथ तृतीयः प्रपाठकः ॥

॥ हरिः ॐ ॥

अथ खलु वैश्यस्य वर्णकल्पे काकुभमुत्तर्यं कण्वरथन्तरस्य सम्पं-दद्दिह विद्याद्वैश्यस्य स्तोमे हि सर्वं बृहतीषु भवत्यथ यज्ञायज्ञी-यानुरूपे बहिष्पवमाने त्रिहिङ्कुर्युर्नानासामत्वात् सकृदित्यपरं हिङ्कृत्य विकारात्सम्पदुपपत्तिर्थ्यद्बहिष्पवमानं सकृद्धिङ्कृताभिः पराचीभिः स्तुवन्तीति नोपपद्यते च हिङ्कारस्तस्या विशेषात् साम्नि साम्न इति चेन्न विशेषश्रुतेस्तस्य रथन्तरबृहत्पृष्ठं नौधसः श्यैतं ब्रह्मसामेति षोडशसाम्नि भवति तत्र खल्वाचार्याः षड्-चैषी गायन्ति रथन्तरस्य पूर्वं देशं बृहत उत्तरं रथन्तरस्तोत्रीये नौधसस्य पूर्वं देशं श्यैतस्योत्तरं नौधसस्य स्तोत्रीये एवं षोडश साम्ना भवतीत्यन्यायः सामेतराङ्गानां लोप इत्युद्गाहमाने रथन्तरस्यैव स्तोत्रीये बृहद्रथन्तरे व्यत्यासं स्यातां नौधसस्य श्यैतनौधसे यत्र हि त्रिस्तत्पञ्चदश इति वा मनति बृहद्रथन्तर-पृष्ठः षडह इति वा व्यत्यासप्रयोगः एव तत्र भवतुपपद्यते च यदेकसामीकृत्य स्तवनात् षोडशसामेत्यवचद्यथायुभय-सामायं भवति कृत्स्नाभ्यामेवोभयसाम्न उपपद्यते न सामेतरा-ङ्गाभ्यामित्यथैके बृहद्रथन्तरं नाम समाधीयते तदिह प्रत्येतव्यं षोडशसामेति ह्याहाष्टादशसामा ह्यभविष्यद्बृहद्रथन्तरयोश्च श्यैत-नौधसयोश्च क्रियमाणयोरिति तदेतन्नोपपद्यते न हि श्यैत-नौधसं नाम सामाधीयते न पुनर्व्याहरते करणीये ॥ १ ॥

अथैतेषु बर्हिःषु संशयः समूढाहा प्रत्येतव्या व्यूढाहे [illegible]

समूढ़ादित्याहुर्वा हीमान् व्यूढ़ान् प्रतीयादविष्टुबजगतीका मस्य स्तोमप्रवर्ही: सवनप्रवर्हीस सुर्न्नो खल्वित्रिष्टु जगतीक मह: पञ्चामो ऽथापि सवनप्रवर्हाणां चतुर्थं चारयेद् यन्नायन्नीयं माध्यन्दिने सवने तृतीयसवने च न पुनः समानाह्नि साम्न: संचारो विद्यते ऽन्यत्र गायत्रादिति व्यूढ़ादित्यपरं व्यूढ़ो हि द्वादशाहस्य प्रकृतिः प्राकृतेनो एवं प्रदेशा वर्त्तन्त इत्यथाप्यन्यार्थं परिजिहीर्षन्नत्याय मेवा पश्येत यद्वैनमानन्तकल्पेन प्रदिष्टा-मन्येत 'प्रथमस्याह्न' प्रातः सवनं चतुर्थस्य माध्यन्दिनं सवन मिति चाह नो खलु बृहत्पृष्ठेषु राथन्तरं प्रातःसवनं विद्यते न रथन्तरपृष्ठेषु बार्हतं तदुभयं वा न्यायप्रत्ययोपनयेदुभयं वा देशबल: कुर्या दथापि यो द्वादशाहस्य दशाहानीति चापि चाध्यान् द्वादशाहविचारान् यथाविराट् सम्पन्न मनुरूपाग्नि-ष्टोमसर्म्मान मिति व्यूढ़ात् प्रतीयेत्तथेमांस्समूढ़ान् प्रतीयात बहुशब्यावाधात् ॥ २ ॥

अथैव भावापवर्गमेकाह ऋत्विज मकाम्य मपोह्याम्यं चर-यिष्यत इतीव मंथौ भवन्त्यथैते वाचस्तोमा बह्व्यादित्याहानि भवन्त्येकं कल्पाहस्तोमैवैकाहा वचनीया न हीना अन्यैवेयं तृतीया जातिर्भवति तद्यथा चातुर्मास्यानि राजसूयं च नैवे-काहो प्रतिजानते नाहीनो ताद्दृश मेतद्भवत्यथ यावञ्जिरात्युगे-षब व्यवच्छिन्नानि स्तोत्राणि वर्त्तिष्यमाणानि मन्येतादित एव तावन्ति वृणीत तेषां सर्वेषां सोमप्रवाकप्रभृतिकर्माण्यास्ते सर्वं सर्वाण्याज्ञातकर्माणि कुर्युर्यथा हियज्ञमाहुयज्ञेषु सर्वे यज-मानाः सर्वाणि याजमानानि कुर्वन्ति ताद्दृश मेतद् भवति सौत्राणि . त न सर्वे कुर्युर्यै एवौद्गात्रा स्तोत्राणि भजेरन् स

स्तोमं युक्त्याय स्तोत्रान्तं स यजमानं वाचयेत् केन त्विमानि स्तोत्राण्यपि न सर्वं कुर्युर्यथा न मूर्वं सर्वं स्तोत्रं भजन्त एव मर्यामानि स्तोत्राण्यपि न सर्वं कुर्युः केन त्विमानि स्तोत्राणि वर्तिष्यमाणानि मन्त्रैसाभ्यामाराशक्तिभ्यामिति मन्यन्ते तावत् क्लृप्तो ह्युपनिवर्त्तन्ते तावत्क्लृप्तः स्तुवतइति स्तुवतइति ॥ २ ॥

अथैते षड्हविचारेषु यत्र प्रत्यक्षाणीत्याह रेवतीस्तोत्रेके प्रतियन्त्यथ यत्र परोक्षाणीति तत्र वारवन्तीयं अत्यन्त मितुरक्ति सन्त्रेवतीभ्यः प्रतीयामिति तासां हि पृष्ठवादा विद्यन्ते ऽथापि पृष्ठस्तोमात् पृष्ठानि खावयन रेवतीश्रावयन्ति तथा परोक्ष पृष्ठोपांशुपृष्ठ्यां रमुंश्ट्ङ्गोतेपरोक्ष इत्यथाप्येनुगट्ङ्गोतपृष्ठे रेवत्या रेवामुगटङ्क्तीति हिपृष्ठमेतद्भवतीत्यर्थं तद्यथा वहूव एकान्हा उभयसामतो भवन्ति तन्माध्यन्दिन एव संतानां रेवतीनां पृष्ठवाद्यास्तद्यत्रैव संतीनां रेवतीनां पृष्ठवादास्तत्र संप्रतीत् प्रत्येतव्या इत्यथापि वारवन्तीयस्यैव पृष्ठवादा विद्यन्ते रेवतीषु वारवन्तीयं पृष्ठं भवति तद्वारवन्तीयेन पृष्ठेन स्तुवत इति स यो वादवलः स्याद्वारवन्तीय मपि प्रत्यक्ष मेव मन्येताथापि यत् प्रकृते षड्हे ऽन्यतरादाने प्रत्यक्षं कननीयं कर्म हि वीरेभ्यः प्रमाणतरं भवतीतीतरत मन्यन्त उभे एतेत प्रत्यक्षे भवतस्तयो स्त्वन्यतर मितरेषां पृष्ठाना मनुधर्मि करोति तत्र न परोक्ष पृष्ठ्यो रेवतीरनुधर्मिकरोति वारवन्तीय मग्नुष्टामिष्टोमसाम्नि मध्यसाम पृष्ठं च षड्ह एतत्प्रमाणा एवेतरेषु षड्हविचा रेष्वनातरदनुधर्मि कुर्युर्यतरस्मिन्, साधीयोऽनुधर्मित्व मुप पद्यतेति ॥ ३ ॥

अथ मु न्दिन् षाड्हिकानां पञ्चमो पवमानगतानां साम

योगिका धर्मा इति न क्रियेरन्नित्येके स्वस्थानानि हि भवन्ति स्थानस्था धर्मा इत्यथापि कथं नु केवलस्तोत्राणिधर्म्मांल्लभेरन्नित्यथाप्यनन्ततरांस्तेऽपि जपाञ्जपेदन्वेषु स्तोत्र जपाद्यषु वै पुरस्तात् स्तोत्राणोपरिष्टाणां पुरस्ताज्जपान् जपेदुपरिष्टाज्जपान् व्यन्वेयुर्जपादयानि सामानीति कर्त्तव्या इत्याचार्याः सम्प्रयोगाद्धेषा मेते धर्मा भवन्तीत्यथापि स्थानादपेतानां क्रियमाणान् पृष्ठ्यासो ब्रह्मसामपृष्ठे च षड्हे ब्रह्मसामानि पृष्ठानि पृष्ठानि ब्रह्मसामानि सस्तोत्रीयाणि सधर्माणीत्यथापि स्वःस्थानानि च रान्ति होतुः स्तोत्र मपन्नान्यथापि स्वस्तोमानि भवन्त्यथापि स्तुतिपत्कानि भवन्त्यथापि स[?]ययो लोपो लोपाद्यायतरो भवतीति यथा एतत्स्थ नु केवलस्तोत्राणि धर्म्मांल्लभेरन्नित्येके केवल स्तोत्रे वै खलु बृहद्रथंतरे व्रते धर्मांल्लभेते यथो एतद्राज्ये युज्जपाव्यन्यानि सामानीति व्यवेति वै खलु बृहद्रथन्तरयोर्जपान् व्रतं एतेन संयुक्तेषु व्याख्यातं यथा विश्वजिति विश्वजिच्छिल्पामोर्यीम इत्याचापभूतानि गर्भभूतानत्यामोर्यीम इति गौतमस्तेनाकर्त्तव्या इत्यथानुग्रहीत पृष्ठे च षड्हेऽनुग्रहीतबृहद्रथंतरे च नोत्तरे चतुरहे बृहद्रथंतरयोः साम्प्रयोगिका धर्माः क्रियेरन्निति भन्यंते न ह्यवान्तर्यविप्रयोगी बृहद्रथंतरयोः साम्प्रयोगिकाः क्रियंते कर्म्मोमिच्चिति कथं विप्रयुक्तानामपि न क्रियेरन्नित्येके सम्प्रयुक्तानां माज्यावान् कथं विप्रयुक्तानां प्रतीयामेत्यथापि बृहद्रथंतरयोः सम्प्रयुक्तौ रैवतरे पृष्ठे रथ व्यतिवर्त्तनं च दुन्दुभ्याहननं च भवतो मासंयुक्तयोर्मद्दानाम्नीनां विप्रयुक्तानामपि भव मुदघोषं मन्यंतेऽपि ह्यस्तोमे सं स्वाध्याये धर्मो भवतीति मन्त्रपाणिनयं यथा स्यात् ॥ ५ ॥

तान् खल्विमान् षडहविचाराननङ्गभूतस्यैके मन्यन्ते यथा ज्योतिष्टोमविचारान् द्वादशविचारानित्यत्र यदि सात्विक इति न्वनङ्गभूतेनोपपद्यते संवत्सराङ्गभूतस्येत्यपर आह च हि बहवः षडहविचाराः पृष्ठ्यं मन्तरुपयन्ति इति स सांशयिकः संवत्सराऽथ य एव संवत्सरे षडहस्य पृष्ठतो विचारास्ते विश्वजित इति तु भवति यथाहीनिक इति तु संवत्सराङ्गभूतेषु नोपपद्यते द्वादशाहाङ्गभूते तूभयमुपपद्यत आहीनिके ऽथ यदि सात्विक इति तस्माद् द्वादशाहाङ्गं स्यादित्येतरान् पृष्ठ्यादत्र तस्मादिष्यते भवन्ति सांशयिकेन च सांशयिकानि तज्जातीयानि प्रमातव्यानि भवन्त्युपपद्यते यत्सांवत्सरिकैर्विचारैर्विश्वजितं प्रदिशेत् षडहसामान्याचान्तरं पृष्ठ मामनेन ॥ ९॥

अथैतस्य बृहद्रथन्तरपृष्ठस्य द्वादशाहस्य नानदस्तोत्रीये गौरीवितं षोडशिसाम स्यादित्येके पृष्ठस्तोमेन ह्येवं प्रदिशतीत्यथापि विराजा मपाया स्वराजोपयन्तीति हेतु बृहद्रथन्तरे तस्यैव पद्यो बृहद्रथन्तरपृष्ठताच्च लोव समूढ चाभिप्रे पृष्ठस्तोमेन प्रदिशति यो हि सर्वमेव पृष्ठस्तोमस्य प्रतीयाच्छन्दोमवतः सन् दशरात्रस्य सभायाः प्रथमादह्नोपनयेत् कण्वरथन्तरं सप्तमस्य माध्यन्दिनादो मिति ब्रुवन् जामिकत्व मापद्येत नेति ब्रुवन्तस्तृचव्याहव्यादयोऽपि यत् समयुक्ता विराजः स्वराजश्चाभविष्यन्त वैराजपृष्ठादन्यत्र स्वराजो ऽभविष्यन्त च वैराजपृष्ठे ऽन्यं संशयः षोडशिस्तोत्रीयसाम्ना स्यादिति नन्वेवं न भवत्येते न मन्यन्ते स्वराज एवेह प्रत्येतव्या इत्येकाहे प्राकृताश्च भवन्ति न्याय्यतराश्चेन्नायैवानादेशे सर्वक्रतुषु प्रतियन्त्येतेनावच्छिन्नस्य बृहद्रथन्तरपृष्ठस्य

षडहस्य षोडशस्तोत्रीयो व्याख्यातो यथैव षडहविचारेषु यत्र सप्तत्रिंशमि सप्तत्रिंशति ॥ ७ ॥

अथ छन्नानिधनानीडोपायासुक्ताकृतिरूपोऽर्वं रहस्यवद्ध्यन्दा-स्वर्गोध्यमि सोमान्या पूर्वा वा काशीतार्कद्वदाङ्गिरसदैवोदास-कुम्भानीयेकिने स्वरा मुज्ञाने मां न इन्द्रेति यथा निहतः स्वनेद् गुरुपाभार मभिनिधायाभि त्वा पूर्वेति वषट्कारः कायमायां वाग् गव्यो षु णः सखाय आयाहीन्द्रस्येन्द्रपृत्सु यथाप्सु पिप्पिल मवपदेतापो वा प्रमिवाय क्षिष्कत्य दिवं गच्छा२३ हृष्टा दिवं गच्छा २३ इति ह्रीष्टिदामस्येद् ग्रहकामस्य न कत्येत्यभि वस्त मिन्द्र जोहार्चिकेकस्त मिन्द्रपरे स्वर्ज्योतिषी पृथक् कुत्सः को कस्त्वद्रोदिस्पावद्भि र्न मिन्द्र इव दस्यू२ण् रमृणा२३४५ सूर्य इव दस्यूँ२ण् रमृणा२३४५ वजिन्स्वर्णी२३४५ नपिबैव तेषा मेकं द्वे पूर्वे वोत्तरे वा सर्वाणि वा समस्यान्नाम्स मेव स्वरयेद्यथा वाथाभस्त्र मन्युरपादन्यासकिङ्किणीनां पृथक् यौतानयोरा२ईन्द्रा२ आ२ ना२ था२ना२३४५यि सप्तस्थानेषु यथाधीत ब्राह्मणस्य सञ्जित्यै विजित्यै रुञ्जित्यै सजित्यै जित्या इति चोद्रियस्य सम्पुष्ट्यै पिपुष्ट्यै सत्पुष्ट्यै पुष्ट्या इति वैश्वस्योपगवयो रथकामस्तु नानाभिवर-धीयेषु मन्यत्राग्निर्ण् होतेति यथा महादिवाकीर्त्यस्थाम्नतोऽन्ततो निधनं पाद्विप्रेतिः कालेयमि च तयो विकल्पा दयित्वं वेऽह२३ दयित्वेऽह२३ अयित्वे ह२३४५ एव मेव सामान्ते ना२कमा२ न्या२३ पौ२ दो२वा२ दम दमृताः पञ्चिण्यो दा२म दमृता२३ इति वाक् सहस्रथन्तरयो: ॥ ८ ॥

अथातः प्रतिहारस्य न्याय मुद्देशं व्याख्यास्याम उत्तम प्रति-हारस्थानं तत्र पदसञ्ज्ञा ऽनादेशे चतुरक्षर मात्रं न्याय्य प्रतीय तृ

सङ्ख्याविवृद्धिकारी च सङ्ख्याशब्दे वार्त्तीभिकान्यक्षराणीति विद्यात्तस्य पुरस्तात् स्तोभा न्यायेनोद्गात्रुपरिष्टात् प्रतिहर्त्तुः समानान्तु पुरस्तात् प्रतिहर्त्ता स्तोभं भजते न्यायप्रतिहाराणां मिडासंचाराश्च सूतैः स्वारवार्षाहरस्वारकौत्सयोराङ्गिरसाभ्यासयोः क्रौञ्चानां पञ्चानामुपरिष्टादुद्गाता सोमिधयोर्षायवयोर्ऋषभपावमाने निधनमार्गीयवाणां मनेकप्रतिहाराणामुत्तरमसादृश्यात् पूर्वपदेषु पदसङ्गगीतीनि विभाज्यानि तत्र पदं पदं विभजन्त उपोत्तमं पदं प्रतिहर्त्तुः स न्याय्य आ समपदाभ्यो धर्मविधर्मयोश्चैवं चतुष्पदाकारे त्रिपदानां तु तृतीयस्य स्तोभाद्यष्टकस्य मे द्वैधं बर्हिर्निधने दीर्घं सुतमिति यथा वैध मन्त्रनिधने यथा गोराङ्गिरसस्योष्णिहान्तु विभाज्ये तृतीये ऽष्टाक्षरं चतुरक्षरमुद्गातुर्यथा दैवोदाससोमित्रयाविच्छन्दःस्वक्षरवृद्धिलोपयोः तत्र गीतेन प्रतिहारं विद्यात् प्राग्यच उपायतान्तस्तोभः पदनिधनेषु यथा श्रेष्ठप्रतोदयोः ॥ ९ ॥

छन्दान्मेधार्थीयाणां विच्छन्दसामनुच्छन्दस विनियोगमन्यत्र तु जागतमासवाजजितौ विच्छन्दसो भास मनुष्टुभो बृहत्पृष्ठे विषुवति द्विपदा वाजजिच्छन्दो भवति दशरात्रे छन्दसा जाम्यसञ्चारस्यामेव समीक्षेत प्रतिहारग्रहणेनेदन्ताः सामः प्रतीयात् सन्निपाते च पूर्वं क्रमलिङ्गाभ्यां स सङ्ख्यानादीं वमाद्यमन्त्यमिति दशतः सन्निपाते ऽनन्तरस्याः सामपूर्वग्रहणेन न्याय्यमथान्येषु सङ्ख्यामीमेकप्रभृतीनां यथासङ्गं पदं प्रतीयादुत्तरयोरिति वैकं चेदार्षेय मुद्रानेकाः साम ब्रूयात्तावतां तदार्षेयं प्रतीयात् प्रतीयात् ॥ १० ॥

/ बृहद्गारद्वाज मस्य या२२ ज्ञा३ नि वा३ रा४२ इत्यौशनं न्याय्यो

वा साकमश्वꣳ सया२३ हा३यि तदुक्थेषु वात्स मग्नायित्वा३
का३ जराबोधीयꣳ स्तोमाꣳ रुद्रा२३ वारवन्तीये वारवन्तं वन्दध्या
नमोभिः संम्राजन्ता मित्युत्तमे स्तोभौ वेहेति तदनादेशे सैन्धुक्षित
माक्षानप्त्र२३ खल्वेतस्याꣳ सैन्धुक्षितं स्वार मुक्थेष्वेडं पाव-
मानेषु चतुर्था स्वारं माध्यन्दिन मापद्यते ऽभिषेचनीये गोसवयो-
श्छन्दोमपवमानयोश्चाक्षानप्त्रो२३ हा इहवद्वामदेव्य मग्निर्नो
वꣳ सुतार२३ यामि समूहद्वदाणि तयोन्यायौ काशीतꣳ ꣳयोरभी
तऽभिप्लवस्वरसाम्नोर्गौराङ्गिरसस्य सामो होइ हू३ वार३यि
भुवः गोपातस्थ यज्ञायज्ञीयं दा३सान्नामेध मूर्जाम्याता चताश्वभा
इति च स्तोभान्तौ भरद्वाजस्य पृश्निरेवास्यार वा३ होवा३ हाइ
पौरुमद्गं द्विवासायौत्म ओ२३४ ना माक्षव मद्यादा२३ यिवाꣳ
गौतम मायिवासा३ हा हो३ दैर्घश्रवस मधो३नं पा३ माया
इति च पौरुमीढ मग्निः सू२३ दी मानवे यज्ञमस्या२३ यज्ञा-
मा२३ स्या इत्युत्तरे तदनादेशेऽन्यत्र पृष्ठाभिप्लवयोरभीवर्त-
लोकात् ॥ ११ ॥

समन्तं चक्ना३यि या३सौ२३ हो३ वा३ हा३यि श्यावाश्व मि उा२
स्पद३यि सर्वं पद न्याय्यो वैमꣳ स्तोमं यज्ञसारथि वसिष्ठस्य
वैराज मन्त्य तन्मर्यायः भरद्वाजस्य प्रसाह मन्त्यं त्वेषस्ते यामं
बृहदाग्नेयं वा३ सा२३उवा३ यद्वाहिष्ठीय मुत्तरं त्वदा३ना३ बृह-
द्वर्ण सञ्जिवीवेति च विवतिहारं वैदिशोविश्वीध मो३ हुवा३यि
शू२षा३ पूर्वो वा द्व्यक्षरस्तोभान्तः परो वा द्व्यक्षरस्तोमादि रावेयं
मत्तो३ सो३ दा३ चारूढवदाङ्गिरस मासिते तयोन्यायावुत्तरं
द्विरष्टमे छन्दोमवतो दशरात्रस्य नवमपौण्डरीकस्य पूर्व-पूर्वमतो
ऽन्यत्र श्रुधिया इति ग्राम्य मष्टाचारो वा ककुप्सु नाना न्यः घोक्ष्य

बृहतीषु दश नेदं व इति चतुरचरी गायत्रीषु प्रेमं छिष्ठीय मुपा३ श्री३ हो३ गायत्री सामासित मुपा३ हो३ ई नुता३ हो३ वाजभद्या स्या३ हा३ त्वां३ सा३ सौभरं ई३ वता२ हव्य मू३३ हा३ साध्य मा३ स्वया३ म्रा२३ अगस्त्यस्य वाचोग्नो मर्त्यं यदा उ विप्रपतिरिति ॥ १२ ॥

अंयन्नी औ३ हो३ यिगा२ वा३ यि तदनादेशे अंयन्ना२३ इवे३ आश्व ते२ ननु न्ना२३ म्मा३ ऐटत मंह्नीया३ वान् उभाकर्णेति च दारसु निधने न्याय्य इडानां संतारे च स्तोभादिर्गौषूक्तं स्तो२ ता२ मे२ गो२ सखी३ हुवा३ इ हुवा३ इ आश्वसूक्त मा३ स्तोता२३ मा३ ई गो२ गारं मा३ ना३ भा३ या३ न् सौपर्णानां मैडं सामभिकं स्वारं नावमिकं निधनवदाष्टमिकं तद्दिलं सौपर्णं मत्स्यं न्याय्यो द्यचरी परयोः शाकलं सा३ र्वा२ मुषिाञ्च रोहितकुलीये वा३ र्षी३ वा३ र्षी३ ष्ठा३ मू२ इत्युत्तरे तदनादेशे दारसहिन्ना२३ ईस२ वा३ ३ ऐश्मराह मनादेशे येषा२ मिन्द्रो२ युवा२ इन्द्रा३ ये३ षा२ न्ना३ यिन्द्रा३ ओ२३ वा३ इत्युत्तरे समस्य मरुतां सावेश्रीयं हाविषत् हाविष्कृत योन्यावयो काचीमतं य औहो३ वा३ दचनिधनं तन्मोचं परा२ दूरे३ ष्वा३ हो३ वा३ हा३ औपगवे तं सौश्रवसे इन्द्रो२ रा३ यिन्द्रा३ यवा२ र्शा३ इरा३ इति न्याय्यो वा पूर्वं मर्षिष्विष्टा होत्रीयं निष्कामकाम मिहा२ हो३ वाजदावर्य्यः चू२ मा३ ॥ १३ ॥

॥ इति उपग्रन्थसूत्रे तृतीयः प्रपाठकः ॥

॥ अथ चतुर्थः प्रपाठकः ॥

॥ हरिः ॐ ॥

वैतहव्यं यद्वोकोनिधन॰ आ३ता३आ३तू३॰ षडक्षरो वा गौरीवितं तच्छायं दा३ना३या३ता३ चतुरक्षरो वा काण्वं आ२३र्गी३: औतकक्ष मा२कंमर्वा३हा३ दैवोदास॰ रात्रिषामे२२ हा३यि मा३ष्या३ आकरवर्ण॰ साध्यकेषु गुहू२मा३सा३ औदल॰ षडु-वाँ२मा३ इति न्यायो वार्षभं ता३म्पर३ कौत्से ऽपरे तयोर्न्याय्यौ पूर्वमर्णादेये सौमेध॰ सरता॰य आ३ दैवातिथ॰ हयायि सा३खा२ यशो२ म॰॰ औ३हो३ं आश्व॰ षष्ठे गायत्रीसामं पिबा२ तु वस्या३ गवा३हा३यि घृतश्चुन्निधनं माधुच्छन्दसं ऽपिबा३ तुवी२ हो२वा२हा३ आकूपार॰ रात्रिषामे२ हो३यि महा२ह ऽा२हा३ होइ३ गौरीवित॰ सुनु॰॰सत्रा३ वामदेव्य॰ छयौहो३ इम्मा२ न्याय्यो वा समासाहीयि॰ सियी२३ होवा३हा३यियि न्याय्यो वा त्वाष्ट्रीसामं गायत्रीषु वम्बांगौ३सा३चतुर्थे त्रैककुभे अदीचीनेडक्षा-मीतं प्रनपा२यु॰श्षो३ ता३ सार्कमश्वं तद्दुरा॰ साम वय मिन्द्रा३ आसि स्वातरि-ति च स्तोभान्तो हरिश्रीनिधन मिन्द्रा३स्वा३दा२ आ त्वा सिन्धुषाम सौमित्रं वा३जी३ सामहीयव मुक्थेष्वा३इवा३ ते२रान् ॥ १ ॥

औत॰ सहस्रे२षा३यि आ२३षा३ आभीवर्त्त इन्द्रा३इषा३इ-

भीँ२.नोधस मा२यिन्द्रा३मु चुल्लककालेय ,हुवे२हो३यिभा१राम् कालेय हुवा२यि भरी३वा२ ओ३ वा२ गौस्कं नेरसिं तष्टे२ वसो३वा१ ओ३ वा३ पृष्ठ मस्मा२ आ२वा२ जमदग्नेरभीवर्तोऽस्मा ३ ओ१वा३ हा२ कौल्मलबर्हिषं मे१हो यि गाविष्ठया३यि षड्चरो वा स्तोभान्तो जनिते वा३यिष्वे२१हो३यि पिबा२३हो२वा३यिष्वे१ पिबन्तुकौ२१हो१ अनुपूर्व मौपद नवसमदशयो: पूर्व मतो ऽन्यत मैधातिथ बा३यि षा३वा३ख्या२ता२उवा१ सन्वा भुतेन्द्रनि च वैखानसं तस्योत्तमः पादः प्रागभ्यासाद् भारद्वाजं वहा३न् भू२सो१ काण्वद्ध्वतस्यैष एव स्तोभान्तो गौङ्गव मा३यिन्द्र व्रा२ ओ२हा१ इन्द्रस्य यशो ऽनु२१ हो२३ साध मा१ना१ ओ२१ वा३ता३वा१ ओ५वा२यौक्तसुच मा२यिन्द्रा१३ गौतमस्य मनाज्यं काण्व२ षमू२३४५ ॥ २ ॥

हारायणं वायिदा२३ षड्चरो वा स्तोभन्तो वर्णसाम स्तो२त बा२जसु गा२यत स्वो१ द्वाचरो वाभ्यासादि अहृकारणिधन सत्वा त आनानि वासिष्ठं औ२कु३ ज्यो३ती२र्नवतन्त एवाकारणिधनं च काण्व अभिनिधनं च दिङ्निधनं महावैष्टम्भं तयोन्यांवादे द्वाचरो इगत सुतां१ पूर्वो वा दशाक्षरः आयन्तीये प्रतिभागं न दी३धिमः प्रा२तौ२ त्र्यचरो वाभ्यासादि-चतुरचरो वा प्रागुषिद्धाराद् वाम मा२यिन्द्रो२हा३ई१ पूर्वो वा द्वाचरो वैयश्वे परां३ मा२ व्या३स्तुञ्चौल्क नवमतन्त्र एव वासिष्ठ मा२नू२नी३४५न् भूं३ वहृनादैषे पौरुहन्मनं तस्योत्तमः पादः प्रागभ्यासादिनपं तद्वाभ्रुखं जन्द्रा३ यिमौं२१तौ२३ नैपातिथ मसा२ म्रिप्रा३प्रा२२हा३ औ२हो२३हु३ यज्ञं विपा२ गिरौ३वा३ ओ१३वा३ धर्मा२व्यो२ वा२ ओ२३४ वा३धि वैयश्व धियां अविष्ठ पा२३ होई

वार्हदुकथं गकिटा१दार्२ वाम्रं मन्दा१ना भीं१ माधुच्छन्दस सुपा१खा१दा१ औ२ह्रो२१ वा२हा१ ॥ ३ ॥

असावि निहवं औरुत्तय॰ सूजा हा रा२३ पूर्वं वातः पदं पार्थं मो२१ ह्रौ१ह्रो१यि जग्ध्या वात्सप्रं तृतीयोत्तमे उत्तम मनादेशे नाके रामं परिगणेषु ब्रह्मयज्ञान मृतुसामनी हवस्य वीनानं त्य मु ताच्यंसामनी वार्तंतुरं विसा३यिना१भिभयमा१ना२न् उद्द॰- श्रोस मुद्द॰ग्र मी१ वया१३यि मी२१रे चतुरुत्तरं वाभ्यासादिरेया- वती आष्टाद॰ष्ट्रे पूर्वं सक्रुद्ध्यक्थे हीनरात्रावुकथं द्विरुत्तर मभि- प्लववेदत्रिरात्रयोर्ज्योतिष्टोमे च पूर्वेण विकल्पो महावैश्वामित्रे गौतमं धा२रा३ औ२हो१ वा२ ऋता३ औ२हो२२वा१ वसिष्ठस्य प्रियं धा१रा२ ओ२३ग्र्रै१आ२र्त्ता१ ओ१२३४वा२ आकूपार मनादेश उभया॰ हा१ वीङ्क तस्यैव पर्वोत्रादिस्तैरश्चा॰ रा३या३स्पू१र्द्दी२१ हा२१हां१यि वैश्वामित्र॰ रजा१: मूर्ध्यौ१वा१ ओ१वा३ शुद्धाशुद्धीये तयोर्न्याय्यौ॰र्पूर्वे मनादेशे नानद मा१ पश्चा दा१ मधुश्चनिधनं दा३यि वे२ षुधा१ हा१हा२॰ औ१हो१वा१ श्रा छिद्रौ१ मारुतं धर्त्ता१वज्री१वा३ औ२१वा३ त्रैशोक मुतो१ हा१यि ग्रैखण्डिगमच्छ त्रासदस्यव मुत्तरं वैधन॰ सौमसाम यस्यधायो२ नदि चरन्तौ१ मा३नु१षमो३ हा२र्ह्रो१यि वरुणसाम विष्का१भा१यिते३ श्येनः सन्नौ२हीं१मह्रो१ हो१ पूर्वा वाताः पदे ॥ ४ ॥

क्रोश॰ स्या२द२ब्रा१स्या१ कौत्स॰रात्रिषाम महा१॰ हा३यि षा:१ पूर्वं वा॰ चतुश्चरं तदोकोनिधनं हारिवर्ण मुलो१का१ ऊ२ ह्रो३अ१हा३ वैतं यहा२ मिरुसुमा२टा३बो३हा३यि मार्गनं चो१ दयता३यि मा३ह३ वैश्वमनस॰ग्तिया३ये३ सौमित्र मौ ह्रौ हो३यि औ३हो३ इषो१२३४५ वा६५ त्रैककुभं तृतीय॰ प्का१३१गा३

आत्मर यज्ञा३२३ऽसि वाच दैवोदासे ग्रस्या३२,३ या २३ सांवर्त गिरा३यिनं वौ२ हो३वा३ म्हो दैर्घतमस सोतुर्वा२ हुभ्या३ऽसुंयता३३: सुवता३: शार्करं लिना३यता३ स ३ वसुषा३यि न्याय्योवा वहत्व दृढाचौ३ड्डा३: येषिरमू३ दे३ वागमा३ प्राहा यात स्तोग्मत मिषा३ऽ स्तो३तृ३ सञ्जय मिषऽ स्तोमृ३भ्या३ आ३ सौहविषाणि पू२ष्णो२भा३ हा३यि तदनादेशे पू२ष्णो२ भगा२या पू२ष्णो३ वा३ ओ२३४ भा३ कं पर्युष्विति मध्यमं धर्मविधर्मणोर्द्विपदाकारे दशभिः स्तोभैः षडदशभैर्वा द्वौ चेत्स्तोभ-विभागेवा पञ्चाक्षरशो वाजिनां साम श्लोकानुश्लोके उद्वंशपुत्रो वा३यिं प्रा२यगा२थं गा२३या३४ ता३ गूर्दः शिवो२भुवा३: भास्ता-पत्य मतिच्छन्दस मयऽ सहोद्वा इत्यग्नि ऽद्योतोत्तरे काहंसत्ये अग्नेर्वा व्रताचोपे ॥ ५ ॥

ऋषभाभीकयीकयऽ शा३२४मा३ शतनिधनं बाभ्रवं भू३या३ हा३यि शामा३ हा३ शैशव मुयऽ शा३४३मा३ आमहीयव मुश्र शर्मा३ आजिग मिन्द्रा३ या३ पा३ अष्टमिकं सुरूप इन्द्रायमा३ इया२३ इया३ इन्द्राय मौ३ ही३इया संहितं मा२३ इन्द्रा३ औशुभार्गवं विश्वादा३ भा३ यौक्ताश्वं ओहोहो३ हा३इ विश्वा विश्वा ओहोहो३ हौ३इ एकपूर्वः परे पूर्वं तनादेशे सोमसाम दाइवा वा३इ रा३ हा३उ उत तदनादेशे भासं दा३यि वा२३ पूर्वौ वा हरवरो ऽपरेर्ड सोमसामं दैर्घ्यावौ२रा३ हा३ई कुत्सकं-वैष्टम्भं हुरायि रा२३यि तौ३ई हौ३ा३ हा३यि पार्थौ कनी३ हुवा३यि हो३ वा३ दूषोव्रधीय मर्कस्यायो३ च्यावन ता३यि मा३ हा३यि वैदन्वतानि मदा३इ पु३सा३इ३या३ इति प्रथमे सर्वधा३ अमा३ई उभयतस्तोभे हे स्तोये वासस्तोभ मुभौ वा

ओ३४हो३ई, न्यायेनानुपूर्वं मौर्णायवे स्वानैर्यो२३ती३ उत्तर मनादेशे अस्तोभावुभयोः ॥ ६ ॥

शाम्मदे वा३यू३ गारो३४५ अचिक्रदद्द्दषोहरं परिगाणेषु वाशं पा३नमा३ई३४५ या३ वैरूपं ता२ आ२३ ना३या२३ द्राच्चरो वैरवद्दार्च्युत मुत्तरयोर्द्राच्चरा॰वयासोमीयं मा२न्दा३नआ३ ये३ सच्छन्दसां सोमसाम्नां माहुष्टुभि चाभिषेचनीयगोसवयोरू२त्तो३ दा३यिवा२३: साध्यव्कैष्वायास्य मू३ तो३ दे२वा३४५ उद्व्राजा- पत्यं मुत्सा२३हो२३यिदा३यि वो३४५ आयास्य मेकार्थे त्रिणिधन मा२रा२३ औ१हो३वा३ उत्सा२३ औ१ हो३ वा३ उभे च तदनु- पूर्वं ज्यावरथन्तर मुत्तो१ दा३यिवा३: सौसमिक मायास्य मुत्सा३ औ३ हो३ सदोविशी॰ मुत्तो३दा३यिवा२३ स्तोभान्तो हावो प्रवो रौरव मुत्तो२ दे१वो२ हिरा२३ हा३औ३ हा३उवा३ यौधाजय मुत्सा३ ओच्छद्वरयिष्ठयोस्त्वयः प्रस्तावसदृशा आभीशवे दा१ धा२ नुषेति हं स स्तोभान्तो पूर्वं भवमतन्न एव द्वादशं माण्वं तत्सोम- क्रतु तपध्हा२ चु१ हो३ तु१वा प्रतोदगोष्ठी नाथुवं जा३ ना३ औ२ चा३ना३ पा३ औ२३४वा३या३ सदोदन इति चाग्ने- स्त्रिणिधनं मा३ध्ओ३: पा२या१ अर्च्छार्कोश मिनि च हिहिङ्कार वामदेव्य मेच्छा१ औ१शाम्भधौ२ हो३४५मा२३ न्याय्यो दोत्सेध- निषेधयीर्यथाग्नेस्त्रिणिधनं स्तोभान्तो वैष्णवे परिधी॰रतिता२३ परा३ औ३ हो३ अनुपूर्वं मेवज्ञातीयान्धीत्वारम्भ्रो पवमा२ना३ औ२ हो३ पवमा३ना३ हा३टा३ भद्रपूर्वं वाजलितावा२३ हो३ स्वःपृष्ठ माङ्गिरसं मत्सरासो२ ॥ ७ ॥

औशन मश्वं न त्वा१ वा२जिनं मा३र्जया३त्ता२ भाय्योवा इहा३उ वाराह मङ्गिरसां शार्कोश उपुवाधि हाउहुवेति वासिष्ठं

अनुपूर्वं मष्ठमनवमयोरिहवद्द्वितीयेऽह्न्यनादेशे तज्ज्ञनित्वं समूढे-ऽपि च समूढरूपिण्यभित्रिसम्भृत् कुलंस्याधिरथीयं प्रसेनाद्यं प्र ते धारा इत्यतस्त्रीणि विश्वं ज्योतिषाणि दाशस्त्यं हन्ता३यि रचो३ वरा३यिंवस्त्रणवन्निति प स्तोभाल्लो दोदिद्दीति औष्टं तस्य तृतीयं पदं सस्तोभं कात्तयशं मपस्वारनं अथा१२३यि श्रा३ना३ औध्वसद्मनं सा३खा१यो१ दा३यि श्यावाश्वं श्टा१ना१ आन्धीगव सा३खा३ उवा३ क्रौञ्चानि प्रथमाष्टमिके समधान्यत्र च्छन्दोमपवमाने ऽन्त्यर्वसी चतुर्वीरे षष्ठे षष्ठवारन्तौनिके सप्तमे त्रैककुभे छन्दोमदशा-हस्य द्वितीये ऽहनि विराट् सम्पन्ने षोडशिसाम सत्रान्योग्य मो३यि वियख्या३द्रो३ उत्तमं स्वयोन्यन्यत्र प्रायणीयात्स्त्वेष एवास्तोभस्वाष्ट्रीसामानि पवा३यि तवा३दा३बिवा३नाच्छा इमधरो वा देश्वा२नाच्छा३ देवा३ वो३यि सो२ हा३ अन-न्यासं वा स्वारे आद्यं तृतीये स्वारयोश्च पूर्व मुत्तरं पञ्चमे सप्तमे चाहनि छन्दोमदशाहस्य चतुर्वीरायुष्कामयोश्च तृतीयेऽहनि विराट्सम्पन्ने षोडशिसामैड मतोऽन्यत् ॥ ८ ॥

क्रौञ्चं षष्ठे मुवा३यिया३ सभो३नो३ वा३ इति च पूर्वं परित्य-माकूपारं मैडं काव ओ३ वाजजिद्दिश्वा२ धना३नो३ काव मा१ सूर्यस्य वृहतो२ बृहन्ना३धी३ न्याय्योवोदन्नागवं सामराजे हा२उ हो२वा३ हा३यिहो३ आ२यौ२ ना२सा२ परं वा चतुरुत्तरं पूर्वनवमाह्न एव सिमानां निषेध उत्तरयोद्वरुत्तरौ चतुरुत्तरौ वा वैष्टुतं वासिष्ठं सौभयोः पूर्वं मनादेशे प्रवद्भार्गवं याम मा३ इया३ इषा च स्वारं मनादेशे महस्तं धेनु चा३रू३या१२३यिचा३ इन्द्रस्यापामीवं वायोरभिक्रन्दो द्वा२ वी३णा२वा३ पूर्वं वा पदं श्रावाश्वेति शार्गं मर्कपुष्परोः पूर्वं मनादेशे पौष्कलं श्रुष्टा३यि शौक्तं शा३यि शा३औ२ वा३ हो चेच्छा३यिषा३ कार्णश्रवसं गा३यि

श्रुनं हवी१ खदया हुम्रानं मग्ने२ वा३ चा२ म्रातीषादीयं पव-मा२ना२ सर्फ महा३यि वाचस्साम वा३ना१म्रा२चा३ऽ९ मंकु वा३ यिम्रा३ वा६ सू३ तत्सौदन्तीयं भरद्वाजस्य लोम सा२९मा३ेम्ता-ह्मीर्घं गाथलपाम्र्चं क्रौ१डा३नू३र्मी२ सन्तनिनस्त्रयः प्रस्ताव-राट्प्राः ॥ ८ ॥

यद्योऽजोरूपे तृतीये दशाक्षरो हस्ता बृहद्दीपशा न्याय्यो वै-रूपे पदद्वैवते व्यत्यस्याख्यायाः पुरस्तात्स्तोभा अन्तरिच्चं पिबा व्य-रिष्ट पिबा देवस्थानं तस्य तृतीये चतुरक्षर मन्त्यं समतोभं शन्न आदर्दा मुत्तरयोश्वतुरक्षरो पुरस्तात्स्तोभौ हृदृत्वामित्स्वादिस्वा-धिरामकौ धर्त्तेति दीर्घतमसोऽर्कौ मरुतां सं स्तोभो अग्नेरर्कं आज्यदोहान्युषभरैवते तृतीये मध्यमो ऽभ्यासः शाक्वरे चतुर्थं स्तोभ मांभ्याम्यांद्ध्वौ तृतीयके धर्त्तेतिपदस्तोभा द्वादशनिधनाः स्तोभैः पूर्वेण वाच्ये परेणान्त्ये विभागस्त्वेव प्रागन्त्यात्पदभाज इडे चाभितः प्रथमे युजश्चोत्तरे शेषे पदमध्ये उत्तमे ऽयुजश्चत्वारि चाक्ष-राणि युजस्तोच्छेषः पदं मिडा च चतुरक्षरशो ऽयुजौ द्वैध मितरौ सं सर्पाणि सर्पसामानि लिङ्गतो नियमस्त्वं तूर्यं स्त्रिषन्धि परो वा वामदेव्यसदृश एकवृषा त्रिककाद्यमो वान्ता न च कृष्टैकवृष-स्योपायवन्तः स्तोभाः पदानां निभक्त्वाद्वैवती तूत्तरयोश्चतुर-क्षरावुच्चा शाक्वरवर्णं तस्योत्तमायां षडक्षरः स्तोभान्तो नित्यव-त्सात्वतीर्षिङ्गवतं पञ्चाक्षरो रथन्तरे समहं सामनो त्रयाणा माद्ये काय पञ्चनिधनं वामदेव्यं पिबा वैराजं तस्य तृतीये मध्यमो ऽभ्यास-स्तोभो विभाग्यं वा ॥ १० ॥

इन्द्राद्ये प्राणापानौ पञ्चमषष्ठे प्रतपञ्चावुप त्वा बलभिदौ (भर्गयशसौ प्रसोमद इति घर्मस्य तन्वौ वार्गाहरे त्वमितसोऽस्त्रवसं यदिन्द्रशोत्तरे ऽष्टाक्षरो नानापश्चो धेनुपयसी चतुर्थ्यां यवः-

पत्थयो रुत्तरयोः स्तोत्रीययोः स्तोभे मध्यमे पदे . आयुर्नवस्तोभे रायोवाजीयबार्हद्गिरयोः षडक्षरः स्तोभान्तः संक्रतिनि चतुर्थे स्तोभाः पार्थुरश्मे प्रस्तावसप्तमाः श्येने च भद्रश्रेयसो रष्टमैः स्तोभैः पञ्चमाष्टमैर्वा द्वौ चेड्वार्कजभे.प्र व इन्द्रायेत्युत्तरं विभाग्यं नाके यामे परिमात्सु प्रथमं वसिष्ठप्रफो शुक्रचन्द्रे स्वराणि यज्ञा- यज्ञस्वत्वाय्युत्तमे विभाग्यः ॥ ११ ॥

सतस्यर्द्धि चतुर्थे मन्त्ये सोमव्रते सुर्परा‍ग्नीष्वग्निमीडे यामं तस्य तृतीये क्रमान्त इमा उ.वा मश्विनोर्व्रते गवा मुत्तरे सम्न्यायन्तीत्यपार्व्रते श्रीह्नोरात्रयो रुत्तरे राजनरोहिणे चतुर्थ्यन्ते इडान्दं पञ्चानुगानं विभाग्य.मविभाग्यं चेदाद्य उत्तमस्त्वाणु स्तोभानां मध्यमेन स्तोभेन प्रतिहार उत्तमश्चानुगानस्य.षडक्षर- स्तोभान्तो वसन्त ऋतुष्ठा यज्ञायज्ञीयं कया ए.व्रत मेकानुगानं लोकसमान्यश्यस्य साम प्रजापतेर्हृदयम् ॥ १२ ॥

शुक्रियाद्य मग्नेर्व्रतं भ्राजाभ्राजे विकर्णभासे महादिवा- कीर्त्यं पञ्च तस्यात्मा स्तोभाविभाग्या द्विप्रस्तावं चैतस्मान्नस्याद्ये रैवते विपरिह्वरेत्साद्यन्तसमाधये त्वचस्याः षट् परिधयः प्राक् परिधिभ्यो ऽग्नेरोचनं मिन्द्रस्योत्तरं महानाम्न्यः सिमाः शक्वर्यो मह्या वचनाद् द्विप्रस्तावा द्विपदायाः प्रस्तुत्य शक्वर्याः प्रस्तौत्यूध्वा ऽतीषङ्गवदूर्ध्वं पुरुषात् षडक्षरश्चैके स्तोभान्तं प्रस्तावं चाध्यास्यापुरीषपदेषु पुरीषपदशेषाणि निधनान्याचार्याः स्वरितान्तानि. यथाभीतं सेतु पाप्मविध्यं चैतोयिकाराद्यागन्तो वागतः ॥ १३ ॥

॥ इति उपग्रन्थसूत्रे चतुर्थः प्रपाठकः ॥ ग्रन्थश्च समाप्तः ॥

॥ सामप्रकाशनम् ॥

(सामवेदस्य)

॥ सामगाचार्य-प्रीतिकरत्रिवेदि प्रणीतम् ॥

॥ आचार्य्यश्रीसत्यव्रतसामश्रमिणा सम्पादितम् ॥

कलिकाता—सत्ययन्त्रे

(१६—१, घोषेस् लेन । सामश्रमिव्यवसायितस्य)

॥ श्रीमहेन्द्रनाथसरकारेण मुद्रितं प्रकाशितञ्च ॥

॥ संवत् १९५१ ॥

॥ अथ ॥

॥ सामप्रकाशनम् ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

गजवदनचरणकमलं नत्वा सामप्रकाशनं ग्रन्थम् ।
रचयति सामसमूहात् प्रीतिकरः सार मुद्धृत्य ॥ १ ॥
यद्यपि मया निबद्धो लक्षणनिवहः साम्नाम् ।
एकद्वित्रिप्रभृतिभिरत्र कीर्त्तितं भवति ॥ २ ॥

(१)

सं त्वा हिन्वेति कथितं मृग्वजितं मेवा मेवाच ।
स्तोभादिनिर्मित मस्मान्न कथितं मित्यपरम् ॥ १
पञ्चग्रहणं पञ्चपदं पञ्चविहृत्तिकं समाख्यातम् ।
वेये यस्ते नूवां मिति सामैवं नान्यत्र ॥ २
एकं सप्तस्वरयुतं क्ये सामप्रकीर्त्तितम् ।
मो षु वाघतुश्चन द्वितीयं मिति कौथुमे ॥ ३
एकं पंचस्वं सोमेति मह्ने दत्ताय संयुतम् ।
विहृत्तिरहितं साम होवित्यस्याक्षरः स्मृतः ॥ ४
वेये ऽष्टग्रहणं चाष्टपदं चाष्टविहृत्तिकम् ।
प्रोक्तमेकं हि यदाऽर्जं नेदृशं विद्यते क्वचित् ॥ ५
सन्त्यन्येषा उस्त्रियेकं त्वयी साम प्रकीर्त्तितम् ।
नवैव ग्रहणं चात्र वेये नवविहृत्तिकम् ॥ ६

एकं नवपदं साम प्र यो रायि प्रकीर्त्तितम् ॥ ७

ऋक्पादहीनं संक्षीणं तृतीयं यत् प्रकीर्त्तितम् ॥ ८ ॥ १ ॥

(२)

ऋक्पादे प्रयुतं सामद्वयं वेगाने द्विस्वरम् ।

उपांशु जात मादिम मर्षा सोमादिमन्त्रथा ॥ १ ॥ २ ॥

(३)

अथ क्रुष्टस्वरत्रयं वेये साम यथाक्रमम् ।

मोषु त्वेति त्रयं प्रोक्त मेक मिन्द्र सुतेषु च ॥ १ ॥

पुनरुक्तं पाद मेक मादावन्ते यथाक्रमम् ।

उप नो हरिभिः सुत मा न इन्द्र पराक्षणक् ।

तरत्स मन्दी धावति वेये प्रोक्त मिति त्रयम् ॥ २ ॥ ३ ॥

(४)

ईतिनिधनसंयुक्तं मत्र सामचतुष्टयम् ।

द्वितीय मग्नि वा प्रोक्त मय मग्वाय चादिमम् ।

ये ते पन्था अधो दिवो यस्य त्यच्छन्तृतीयकम् ॥ १

एकविंशत्तिक भुक्त वेये सामचतुष्टयम् ।

त मिन्द्रं वाजयामसीत्याद्यं गव्यो षु णस्तथा ।

परिप्रधन्वा द्वितीय मिन्द्रो विश्वस्य आदिमम् ॥ २

षड्ग्रहणं षट्पदश्च प्रड् विंशत्तिक मुच्यते ।

प्रेष्ठं वो हाउ इतीतद् यत्सोमा इन्द्रविष्णवा ।

अपामीवां मपाविश्वा वेये तत्र चतुष्टयम् ॥ ३ ॥ ४ ॥

(५)

प्रस्तावपञ्चकं प्रोक्तं वेये गाने यथाक्रमम् ।

कनिष्ठानामिकामध्यातर्जन्याङ्गसमुद्भवम् ।

अग्निं होता चतुष्टयं त्वं त्वं नये मित्यतः ॥ १ ॥ ५ ॥

(६)

असम्पूर्णानि कथ्यन्ते वेये सामानि षड् यथा ।
मा नो हृणीथा युगलं यस्त्वाहादिवर्जितम् ।
अग्ने त्वन्नो द्वितीयं च चतुर्थं च विवर्जितम् ।
वरूथ्य इति शब्देन धारा पृष्ठं विवर्जितम् ।
अया रुचा इय मिति सम्पूर्णा ऋच आर्चिके ॥ १
अग्न आ याहि वीतये अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत् ।
अग्निस्तिग्मेन शोचिषा अग्ने त्वन्नोऽन्तम तथा ।
दूत ऊतो वा अजर पुरो जितो व इत्यपि ।
अकार ओत्व मेतेषु षट्सु सामसु कीर्तितम् ॥ १ ॥ ६ ॥

(७)

शुक्रास्ते अन्यदित्यस्मिन्निड़ा अग्नेऽप्यरः पुरस् ।
अवद्रप्स अंशुमती अपो षु शृणुहो गिरः ।
पुना च दशमं सोमः पवते ऽत्र द्वितीयके ।
अभीनोवाहोऽजसेति साम समाचन्त्यूनम् ॥ १
ऊकारो निधनं वेये गाने सप्त यथाक्रमम् ।
तमूडयाद्ये च पिबासुतस्य धिय संयुतम् ।
आ त्वा सहा तृतीये च त मु अभि द्वितीयके ।
एतो न्विन्द्रं सखायास्मिन्नृचां ते नवमे तथा ।
प्र सोम दे चतुर्थे च प्रोक्त मेतेषु सामसु ॥ २ ॥ ७ ॥

(८।६)

यस्योदाहरणं नास्ति तस्य संख्याक्रमो न हि ।
अष्टादिसङ्ख्या नामावृत्या प्राप्ता सैव कीर्तिता * ॥ ८, ९ ॥

* अष्टसंख्यया नवसंख्यया च पुस्तकेषु प्रकाश्यमान विषयस्य वेयेऽभावात् तयोरत्रानुल्लेखः ।

(१०)

वेये साम दशैवोक्तं दशोपा-निधनान्वितम् ।
उप ह्वरं गिरोणा मित्यैन्द्र पृत्सु कासुचित् ।
प्र शिभाय म न इन्द्रेत्येतयोः प्रथमं ततः ।
वय मेना द्वितीयं च को अद्य युंक्त इत्यपि ।
एष ब्रह्म पञ्चमक मुपप्रत्ने ततः परम् ।
अर्चन्त्यर्कं मरुत इत्यर्च्या मिन्द्र इतीरितम् ॥ १ ॥ १० ॥

(१२ *)

अहृणेन विना वेये सामानि द्वादशैव हि ।
प्र व इन्द्राय योनिष्टं इंद्रनर इतीरितम् ।
इममीत्यन्तिमं काई मिन्द्रो त्विवा द्वितीयकम् ।
यस्ते मद्रो उरे हृय मसाव्य मिति चाष्टमम् ।
प्रवस्व मध्वभिद्राख मेतयोश्च द्वितीयकम् ॥ १ ॥ १२ ॥

(१३)

आच्छानात् 'सत्त्रा (ति) स्वातो हायि'- समानि च ।
पदान्यत्र प्रकथ्यन्ते वेयगाने त्रयोदश ॥--
आच्छानात्र । प्रस्तोमाया । हाइवाआवा । वार्षीष्ठाम् ।
माहात्माहो । वाचास्तावोत् । हुम्माबा ।
साग्रांष्काग्वानोत्वाश्च । नाजातामा । आइन्द्रात्वाश्च ।
दाईवाइरा । वाइम्वाधास् । आमात्रीवा ॥ १
वेयगाने समाख्याता माउवा ये त्रयोदश । —
कयाश्रमूमुह्वाषणागिरमेयाग्रथा इति ।
यज्ञामहास्यदाग्निवाच्चिता त्रयोदशेत्यतः ॥ २ ॥ १३ ॥

* एकादशसंख्याया: सङ्ख्याभावाच्च त्रयोदशक्रमे एव सत्वरपाठः सर्वत्र बोध्यम् ।

(१५)

पञ्चदश वेयगानि कथितः स्थितिसम्भयः ।
अदर्शि विशो विशो वो अग्ने वाजस्य द्वितीयके ।
अभि प्र गोपतिं मध्ये नक्यनाकीति कीर्तितः ।
अरन्त इन्द्र श्रवसि तं वो दस्म चतुर्थके ।
इमा उ त्वेति वर्गाद्ये अन्ते दधामि सप्तमे ।
आ ते अग्ने द्वितीये च ततः स्वादिष्ठयाष्टमे ।
इन्दुः पविष्ट द्वितीये परीतो षिञ्च षष्ठको ।
सोम उ ष्वा णः इत्यन्त एषा गायत्रपार्श्वके ॥ १
वेये पञ्चदश प्रोक्ता ओवाञ्चोवेति मध्यगः ।
शन्नः परि प्रके परि ऽद्य नो देव द्वितीयके ।
अत्राह्यद्ये ऽभि त्वा पूर्व जग्रह्मः ततस्तृतीयके ।
पञ्चमे च पवित्वानाम इन्द्र द्वितीयके ।
अया वीता ऽऽपवस्वाभि प्रिया पञ्चमके तथा ।
पवित्रन्त द्वितीये ऽथ प्रधन्वा युक्मतुर्यथाः ।
सोमः पुना द्वितीये च वा शब्दः परिकीर्त्तितः ॥ २ ॥ १५ ॥

(१७)

दीप्तश्रुतं सप्तदश वेये सामं प्रकीर्त्तितम् ।
अभि त्वा वृषभायां य इन्द्र चमसेऽग्रिमम् ।
वामदेव्यं मद्याल्वा सहस्र मिति चतुर्थकम् ।
शन्ध तृतीय मोषु त्वा द्वितीय क्रुष्टशेषजम् ।
नर्के सुपर्ण मित्था त्या सखाय इत्यतः परम् ।
गायन्ति चेति तृतीय प्र व इन्द्राय विप्रहन् ।

अग्निं होतार मित्याद्य मिन्दुः पविष्टचेतनः ।
आद्यन्त्वस्मात्र सोम दे तुर्यश्चाथ पुरो जितो ।
प्रथमर्द्ध द्वितीयश्च प्राणाः शिशुरतः परम् ।
द्वितीयश्च तृतीयश्च कश्चिद् दीर्घां स्तुतिं वदेत् ॥ १ ॥ १७ ॥

(२०)

य दाचीकेद् स्वं मुक्तं विंशत्याख्य मतः परम् ।
वेये सग्रहं दीर्घं प्रत्युत्क्रमयुतञ्च तत् ।
प्रगाद्य ममार्त्तिय प्र वा या मुज्जिह्वा ततः ।
नस्वसरेषु धेना वा इन्द्रा सबाधयुग्मकम् ।
तिमाभु समवा यद्दा ज्येष्ठममातिय स्वदस् ।
आराङ्गमाद्ययुञ्चान्तं पवमानाभियर्षसि ।
मनीषिणो द्वय यस्मादिन्द्रे सोमास्ततः परम् ।
वधनान्ततः सामा ऽस्व नः स्तोम मिति द्वयम् ॥ १
अन्त्यैकैकाः समाम्नाता वेये विंशतिसंख्यकाः ।
असावि दे द्वितीये च जगद्या ते द्वितीयके ।
चतुर्थे चाथ इतस्य त्वा द्वये च सखान्तिमे ।
गणे तदिन्द्र प्रथमे यस्य त्यच्छा चतुर्थके ।
पवस्व सोमा मन्द्रे नः स्वादिष्ठयाष्टमे ततः ।
इषे पवा पुना प्लव इन्द्रो इन्द्रेति कीर्त्तितः ।
अपा मिवेदूर्मयस्ता वाहयता द्वितीयके ।
धर्त्ता दिवो द्वितीये च पवित्राद्ये तथैव च ।
इन्द्र मच्छे द्वितीये च ततीये च ततः स्मृतः ।
आ सोता परि षिञ्चतेत्यथ प्रथमसामनि ॥ २ ॥ २० ॥

(२१)

वेये छन्दाः समाख्याता एकविंशतिसंख्यकाः ।
अग्नः प्रथमे मूर्द्धान्य आ वो राजानमध्वरे ।
इन्द्रो दधीच प्रथमे ऽभित्वा शूर यज्ञते तत ।
अभि पूर्वपीतये सान्त्वाहिन्वे तथा शिशु ।
अन्ते चैव जगच्छान्ते अग्नाम्ले स्वरतोत्तमे ।
अया वीती द्वितीये च होइया ऽपध्वसंज्ञकी ।
तवाह माद्य ऽया पवा अवस्वेति द्वयोः स्मृतः ।
पवित्रं ते द्वितीयेऽथ प्रधन्वासो तृतीयके ।
सोमः पुना द्वितीये च कीर्त्तितः छन्दसंज्ञकः ॥ १ ॥ २१ ॥

(२४)

ई-निधनं वेयगाने चतुर्विंशतिरुच्यते ।
मूर्द्धानं दिव इत्यन्ते ऽग्निवरो इये पुरुहये ।
तद्वो गाय चतुर्थं च गव्यो पु णो द्वितीयके ।
कदा वसो प्रथमके पिबा सुतस्य मध्यमे ।
असावि दे द्वितीये च जगृह्मा ते च पञ्चभिः ।
प्र वो मह्वे द्वितीये च यं इन्द्रेषु इये तथा ।
अत्ताद्ये च सखाः मध्ये पिबान्ते च प्रकीर्त्तितः ।
स्वादिष्ठयाष्टमे परि प्रियेति प्रथमे तथा ।
होइयोपध्वसंज्ञे च प्रोत्तमे तेषु सामसु ॥ १
इ सु अ मं पि गं प्र स्व चि क्र स सु
रा त वि नू इ भ इ हो अ च्चि ग वृ ।
इति वेये चतुर्विंशत्यक्षरं मध्यधायकम् ।
सल्येऽक्षितादिर तेन पाद्निनाव प्रकथ्यते ।

शश्वत्तम॒ ह । गर्भदूत सु । यदि वीरो अ ।
प्र मं॑ । सोमः असुत ि । छतेर्ग । अभि प्र ।
न त्व । न ह्रि । किष्ट क । शुदुतेरम । शग्ध्यू दु ।
गो वा । क । यस्मत्राह्वा वि । उपोपेन्नु । सघा तं वृ ।
पूषणेभ । अया रुचा ह । मिशं हो । आ सोम स्वानो अ ।
यो देवान्वि । गुदेन मह्ह ग । इन्द्र मच्छ सुता इमे वृ ।
इति त्रयोविंशत्सामसु चतुर्विंशदक्षरं
मध्यधाय्यसंज्ञ मुक्त मिति ॥ २.
चतुर्विंशतिः सामात्र टहदूपासमन्वितम् ।
अन्न माद्य सुरूपाद्य योगेयोगे द्वितीयकम् ।
आ याह्युप नेतुरक्त त्वामिद्धि प्रथमं तथा ।
न सो मदे व इतुरात्त दस्त मिन्द्रेति चादिमम् ।
इन्द्राग्नी अपादिय मितीन्द्रा हरउ सखाग्निमम् ।
चन्द्रमा अन्तर तुर्यं पञ्चमञ्च तथाविधम् ।
उच्चा ते सप्तमं प्रोक्तं यस्ते षष्ठ मतः परम् ।
उपोषु जा द्वितीयं च प्रयद्भावः अया पवा ।
आ ते दक्ष परीतो षि द्वितीयं धाटमन्तथा ।
तवाहं प्रथमं प्रोक्तं प्राणा शिशु द्वितीयकम् ।
आ सो द्वितीय मितुरात्त मेत सु त्य च पञ्चमम् ॥ ३
चतुर्विंशतिरचोक्त या श्रीह्नोवेति मध्यतः ।
अश्वमत्ता द्वितीये च कागृणाना द्वितीयके ।
मूर्द्धानन्दिव इत्यन्ते प्रहोता जात आदिमे ।
पुरुहये ऽरमश्वाद्ये तमिन्द्रं वा तृतीयके ।
य आनयद् द्वितीये च गसंम्राजं चतुर्थके ।

श्रावाचेन्द्रो दधीचाद्ये महित्रीणां द्वितीयके ।
पिबा सुत तृतीये च यद्दिन्द्र नाहुषीषु च ।
मदद्दत्परे च यं वृक्त इद द्वितीयेऽन्तिमे ।
अघध्ं सहस्र प्रथम उच्चा द्वादशके स्मृतम् ।
परि प्रिया द्वये प्रोक्त मया पवा द्वितीयके ॥ ४ ॥ २४ ॥

(३३)

त्रयस्त्रिंशद्वेयगान आद्दिच्छेक: प्रकीर्त्तित: ।
अग्न न त्वा द्वितीये च शन्नो देवी द्वितीयके ।
कायमानो द्वितीये च प्र होता जात आदिमे ।
स मिन्द्रं वा तृतीये च य आ नयद्द द्वितीयके ।
ऐहो यैहो प्र सम्राज चतुर्थ न्ना ह गोर द्वये ।
महि त्रीणां द्वितीये च पिबा सुत तृतीयके ।
येदिन्द्र ना अभि वो वोर कुष्ठ: को वा मदद्दत् ।
द्वितीयेऽथ जग्ध्वा ते दचिणन्तु तृतीयके ।
शुद्धाशुद्धीयके चाद्ये ऽभित्यम्मे ष य ऐका इत् ।
द्वितीये च तृतीये च ततोऽधा हीन्द्र गिर्वण: ।
तृतीये ऽथ द्वादशक उच्चा स्वादिष्ठ सप्तमे ।
परि प्रिया द्वये तत: परि स्वाना द्वितीयके ।
आ पवस्व सहस्रिण प्रकाव्य मुशने द्वये ।
अभि प्रिया पञ्चमके प्र धन्वा युग्म-तुर्ययो: ॥ १ ॥ ३३ ॥

(३५)

पञ्चत्रिंशद्वेयगाने मध्वीपानिधन स्मृतम् ।
शन्नो देवी रिति युग्मे कायमान द्वितीयके ।
आरोह्यर्निति जज्ञान श्चचा युग्मके तथा ।

गौङ्ग्यादो कया मध्ये इन्द्रो दधीच आदिमे ।
गव्यो षु णो यथेत्याद्य उक्थस्त्वनाथ ग्रक्‍ीर्तते ।
इ मा उ त्वा पुरू मध्ये ऽभि त्वा पूर्वं ग्रादिन्द्र ना० ।
कस्त मिन्द्र त्वा द्वितीय इम मिन्द्राय सुन्विरे ।
कुष्ठः को वा मश्विना आ ततोऽयं वाम्म इत्यपि ।
कश्यपस्य सुवर्विदा अभि त्वं मेष इत्यसौ ।
सखाय आ शिषेत्याद्ये यस्य त्यच्छायसामनि ।
आ याह्ययं त मिन्द्रञ्चो ऽग्निं होतार मितीरितम् ।
परि स्वानास द्वितीय आविशन् कलशं तथा ।
आ पवस्वेत्युप प्रते प्र धन्वा सोम पश्चस्तु ॥ १ ॥ ३५ ॥

(४२)

वेये सामानि कथ्यन्ते स्तोभैर्विरहितानि च ।
द्विचत्वारिंशदेतानि क्रमस्तेषां मथोच्यते ।
अग्ने मृड महाॅं आद्य आ वो राजान मध्वरम् ।
पुरु त्वा दा नतुर्थेष्व गन्यं पन्य इतीरितम् ।
सदा व इन्द्र स्तरणि रिश्विषास्त मतः परम् ।
ए दु त्वे मधु येरेनिष्ट विधुं दद्रा त्य मू षु च ।
आद्यं चतुर्णा मेतेषां चातारञ्च ततः परम् ।
संत्राहणं द्वितीयश्च तत आ नो वयो वयः ।
अर्वता प्राचेता गारो विभोष्टो इन्द्रराधसः ।
आद्य मेदु मधोरुक्तं यदिन्द्रयोतुजे तुना ।
वेत्या हि निर्ऋतीना मथाभ्रातृभ्यो अनातुवाम् ।
योना इद मिदं साम इदं वः प्रथमं ततः ।
आविर्मर्यो मथाष्टम इन्द्रा ते जात मन्धसः ।

इन्द्रायेन्दो द्वितीय मित्यथा सोमसु क्रत्यया ।
पुनान्त्यं पञ्चम प्र,यो जनितादि तथैव च ।
प्र गायतेत्यधि यदा एष प्रकोश इत्यपि ।
प्रो अयासीदाद्यचत्वारीन्द्राय प्रथमं तथा ।
प्र देव मच्छा क्षितुरक्त मिन्द्र मच्छेति पञ्चमः ।
सोमः पुना द्वितीयञ्च पञ्चमञ्च ततः परम् ।
आद्य प्रोक्त मभिद्राम्न ससुन्वेयस्वतुर्थकम् ॥ १ ॥ ४२ ॥

(५२)

द्विपञ्चाशत्समाख्यात वेधे प्रद मतः परम् ।
तर्जन्याद्य कनिष्ठान्तं यांतातेऽस्मिंविंदग्नंनम् ।
तिवोवा गीतमे यो विश्वा तृतीयं तुवो स्मृतम् ।
रायाग्ने यपोवा च प्रमं द्वितीयके सओ ।
द्वितीये च चतुर्थे च स्तओ मानो हणी स्मृतम् ।
एषो उषा श्विनोवाथ स्यपोवा च इमास्तई ।
अया धिया मओवेन्द्र इषे प्रथमके तुषो ।
इमा उ त्वा सुते नधोवावृषिदिन्द्र नः स्तवो ।
कद्रु प्रचेतसे स्यवों मितोवा च त्वमङ्गके ।
इन्द्रं क्रतु मशोवेति तृतीये वयमहां मद्दो ।
हिरोषा पाहि या युग्म स्थाव इन्द्राय सामि ऽपरे ।
यदिन्द्र भासो अव्रत धिवोवा पंक्तिकीर्त्तितम् ।
कदाचनस्य योवेति युंक्ष्वा हि वृत्रहन् तिरो ।
आ त्वा गिरो रथी नधोवा प्रत्यस्मै च दधुने ।
प्र प्र वस्त्रिष्टुभं विवो चन्द्र तृतीयके हरो ।
कृत्वा महाअं अमोवेति अस्तु श्रौषसिधीतयः ।

असाविया द्वितीये च निमोवा परिकीर्त्तितम् ।
धोवेति परिस्रानः प्रथमे पञ्चमे ऽन्तिमे ।
अमृत्वं रयोवेति पवस्वदेवए ह्यो ।
पग्स्रानाम्र आदिमे तिधोवेति प्रकीर्त्तितम् ।
अया वीति परिस्रव प्रथमे च ततो स्मृतम् ।
पुभ्नः सोमधेत्यत्र ह्विरोवा सप्तमे स्मृतम् ।
एकादशे परीतोष्यां मनोवेति ततः परम् ।
त्वाहं सोम रारणे तृतीये च तितो नथा ।
मज्य प्रथमके तुर्ये पञ्चमे षष्ठके भियो ।
पवस्व देववीतये द्वितीये च मनो स्मृतम् ।
त्वं ह्यङ्ग तृतीये च चतुर्थे च यथो स्मृतम् ॥ १ ॥ ५२ ॥

(१३४)

वेयगाने नकारान्तपदगत मुदीरितम् ।
चतुस्त्रिंशत्पदयुतं क्रमेणात्र विलिख्यते ।
उप त्वाग्ने स्थिरन्नन्न जरितइये ऽप्रोषिवान् ।
अदर्शि यस्मिन् काये देसान् प्र वो यह्वं माद्दान् ।
चिता प्रथमके चरान् द्वितीये च चरन् चरन् ।
ऋतुथ शुक्रन्ते धावानश्नावो राय् ततः परम् ।
प्रातर्यास्मिन्नथारोहानत्र धान् सप्त प्रकीर्त्तितम् ।
राधे अग्ने इये वृषन् त्व मिन्द्रा च नये वृषन् ।
इदं वसो वये भयिन् यदद्य कृष वृत्रहन् ।
वय मिन्द्र नुमोवृषन्निहेव शृण्व यद्दरान् ।
दोषो आगाद्, बृहद् गोमत्वा तू न इन्द्र वृत्रहन् ।
सादा ष इन्द्राः सांपर्यन् नक्ये नाक्तो च वृत्रद्रन् ।

त्वꣳ ह्येहि चेरवे प्रोक्तं युगले मघवन्नतः ।
अभि त्वा पूर्वपीतये समस्वरन्-समस्वरन् ।
वयं घ त्वा चतुष्टये यच्छक्रासि द्वये तथा ।
आ नो विश्वा त्रये प्रोक्तो वृत्रहन्तंवसामसु ।
मो षु त्वाद्य रमन्त्वासान्द्वितीये च निरीरमन् ।
सुनोत सो द्वये पृणन्नुमयम्मघवान् ततः ।
यदिन्द्र शासो मघवान् कुत्स: को वा ऽुवान् तथा ।
अदर्दरु मर्णवान् प्रथमे ह्वान् द्वयोः स्मृतम् ।
वयो ह्राह्राउ वावाधान् यं वृत्रेषु द्वयोर्द्वयम् ।
उपज्मन् को अद्य युङ्क्ते दुर्हृणायुश्च ततः परम् ।
इन्द्र विश्वा अवीवृधन् सर्वेषु न हि पञ्चमे ।
इममिन्द्राक्षरन् नाद्य एतो न्विन्द्रꣳ स्तवामयिमे ।
शीर्वानिति वयश्चित्ते प्रारान् अत्ते अर्हानिति ।
नीद्रे नान्ते च वर्गेऽस्मिन् समेते तृतीये चषान् ।
इमे तं इन्द्र ते त्वादन् नादौ यस्यां त्रये धयन् ।
वय नु त्वादिमे वज्रिन्नाविर्मर्यास्तथा चास्मान् ।
ऽ द्वयो रवर्द्धायान् विश्वस्या युगले वसान् ।
आविशन् कलशं प्रोक्तं द्वयोरर्षन् ततः परम् ।
पवस्व वाजसा धर्मन् प्रकाश्चि भान् चतुष्टये ।
अस्य प्रेषा द्वये प्रोक्तं तिरिभानिंसि ततः परम् ।
अक्रान्त्समुद्रो मान् कानी सायिदामित्यथ त्रये ।
प्रसे क्षगवान् प्रते ऽस्मग्रान् देवा प्र गायतेति च ।
तत्वधदो द्वये मायन् क्रवीयानधियत्ततः ।
महत्तदु दाञ्रवान्क्षव माद्यवजं तु तोचरन् ।

सप्तमे कथितं द्वेवान् हृष्मा ह्यान्दि वाङ्गान् ।
पविमन्नं द्वयोरन्ते योमान् प्राणा च पञ्चमे ।
छिन्वम् त्वा ह्यङ्गत्यत द्वितीये घोषयन्निति ॥ ९ ॥ १२३ ॥
जहुवदहाउवां पञ्च सामान्तं परिकीर्त्तितम् ।
आंधा तृतीये — —, सौदन्तस्ते वय छर्त्तरि ।
लिंचतुर्थे परीतोष्यां वेयगाने यथाक्रमम् ॥ ५ * ॥

॥ इति सामप्रकाशाख्ये वेयगानस्य कीर्त्तितम् ॥

(इति वेयगानस्य)

(अथ आरण्यगानस्य)

——०००——

॥ अतः परं मरण्ये गेयस्य गानस्य कथ्यते ॥

(१)

एकं कौथुमशाखीयम मारण्ये काह्नसंज्ञकम् ।
सप्तस्वरयुतं सामः प्रोक्तं मत्र निदर्शनम् ॥ १
इमं वृषण मित्येकं त्रिष्टुप्छन्दसि कीर्त्तितम् ॥ २
एकं त्रिसाम गीतं त्रिषन्धिसामेतिकीर्त्तितम् ।
नाम्ना त्वमिन्द्र मरण्ये गेयगाने च नामत्र ।
बृहता रथन्तरेण च संयुक्तं वामदेव्येन ॥ ३

* अत्र मेतत् परिगणनं व्युत्क्रमेणेह प्रदर्शित मिति चिन्त्यम् ।

न कथितं मार्चिकमध्ये नैव स्तोभे चैवोक्तम् ॥
ऋक्पदसीमान्यरण्ये गेये चाक्रन्दयेत्युक्तम् ॥ ४ ॥
एवाह्येवप्रभृतिभिर्यथार्चिकमध्ये तथा पदे स्तोभे ।
हिंशब्दसहित मभिहितं मरण्ये गेयं सिमसाम ॥ ५ ॥
औहोवाहोइडायुक्त मेक मेवेद मीदृशम् ।
आजन्त्यग्नइतीळान्दे ऽरण्ये गाने प्रकीर्त्तितम् ॥ ६ ॥ १ ॥

(२)

आन्तरं स्वर मारण्ये इय माद्ये ऽश्विनोर्व्रते ।
होइहाइहोइहेति निधन मोहोसंलग्नं मीरितम् ॥ १ ॥ २ ॥

(५)

उकारो निधनं प्रोक्तं पञ्चैवारण्यसामसु ।
यद् द्याव इन्द्र ते ऽष्टम आ तू न इन्द्र वृत्रहन् ।
रौहिणे चोहुवीहोवा ऽथ द्वितीये वयोमनाः ॥ १ ॥ ५ ॥

(६)

आरण्ये ऽष्ट समाख्याता ऋग्युग्मेन समन्विताः ।
अतीषङ्गाश्च ते सर्वे तेषां स्तोत्राय कीर्त्तनम् ।
पुर उद्वासंज्यसाम्य मभीनवन्तरस्तमम् ।
उदुत्यं चित्रं मुनय स्त्रिसूर्ये खञ्जकेऽपि च ।
उदुत्यं जातवेदस मिन्द्र नरश्च मंवरे ॥ १
अरण्ये हाउवास्तोभस्तजन्यादिः प्रकीर्त्तितः ।
पृथक् प्रतुत्क्रमारभ्य षडेवात्र यथाक्रमम् ।
स्वया तृतीयं ओवेति होवेत्युक्तस्सामनि ।

हावीन्द्रा इति हावीन्द्रो मतस्त्वा वैराजसामनि ।
आहो एन्यौ समाख्यातौ न्याशब्दो वाग्ददे तथा ॥ २ ॥ ६ ॥

(८)

कथ्यन्तेऽष्टौ द्विस्वराणि सामान्या —
अग्निरस्मिजन्मना च तथा धर्म्म विधर्म्म वै ।
सं त्वा भूता उवोगुम्स्, माद्यपर्ज मतः परम् ।
अष्टम कथितं चात्र प्रतिष्ठासाम वागिति ॥ १ ॥ ८ ॥

(९)

अरण्ये नव सामानि ऽचानि कथितान्यतः ।
उश्वा शाक्कर यणवाख्य मिन्द्र मिन्द्राग्निनो ऽयत् ।
अपत्य भुश्वा तं जातं भ्राजादिप्रभृतोनि षट् ॥ १ ॥ ९ ॥

(११)

एकादशैव सामोक्ता मारण्ये दोमसंयुतम् ।
हावीहोहाउहो शब्द इन्द्र ज्येष्ठ न आ स्मृतः ।
ए आसा सानिव शब्दः त्वमिन्द्रेष्वा प्रकोर्त्तितः ।
हाउवेति दाजामा नयः शब्दः प्रकीर्त्तितः ।
असाविदे परे प्रोक्ता ईकारा दश पञ्च च ।
मावो यादा च तत्रैव हुवौहो इति हो-स्वरः ।
आप्रागादिति हो-शब्दः प्रत्नस्य वृष्ण उद्दयम् ।
वृत्रहत्याय वेदय उक्तमय मितीरितम् ।
पञ्चत्रिंशदिति प्रोक्ता आरण्येऽदोमसंज्ञकाः ॥ ११ ॥

(१२)

आरण्ये द्वादश प्रोक्ता यत्कौहोवेति नध्यतः ।
इयाहोइ प्रथमतो याराया च ततः परम् ।

अग्निमूर्द्धेतुऽदुत्तम मियहौई सर्वाहयम् ।
अयंवा हाउधामयदोहाओहाइ धेनु यत् ।
आनोब्रुवे दग्रस्तौषे प्रोक्त मेतेषु सामसु ॥ १ ॥
अरण्ये द्वादश प्रोक्त अग्रौहोवेति मध्यतः ।
उव वीहा उवाओवा कायमानाग्निमे ततः ।
ओवासन्तेपयाएस्युक्त विश्वाधनाति रौहिणे ।
उहुवौहोवेतुयदित मियौहोवेति कीर्त्तितम् ।
रूपं वाक् च वयोहोइ द्वादशैव यथाक्रमम् ॥ २ ॥ १२ ॥

(१५)

पञ्चदश सामसहितः स्थितसन्धिः कथित आरण्ये ।
इन्द्रषट्संज्ञे स्तौभः सर्वत इकारे कोर्त्तितोऽयान्यः ।
औहोवेति तवेदिन्द्रा प्रथमे ह्रस् सुहृत्तमः ।
चिदोहमिति इङ्कारो विद्रथे ह्रस् सहृत्तमाः ।
अभ्याभूरिति ह्रसप्रह्रस् सकारस्युगल तथा ।
वीहायवा यमत्रिति यशस्यास्मिन्निरौरितः ।
अग्नेयुंत्वेति ह्रस् प्रोक्तो यज्ञार्य-निधनत्रये ।
आतून इति चत्वारो निधने स्वरवर्जिताः ।
षट् सकारे ह्रसि प्रोक्त औहावङ्गिरसांव्रते ।
अर्चिः शोचिः प्रत्यये द्वे सकारे ह्रसितौरितः ।
नम इति स्मृते द्वैवव्रतमध्यमके ततः ।
एवाह्येवेति हङ्कारो ह्रस्वः सर्वत्र कौर्त्तितः ॥ १ ॥ १५ ॥

(२३)

उक्ता आरण्यके चैक त्रयोविंशतिरन्त्यजः ।
वयोहहङ्कतएहविद्रत हंकार ईरितः ।

एह्रिया शब्दनिधनि प्राणे सत्या प्रकीर्त्तितः ।
आनोह्रिय मन्त्रौ दोहा हा शब्दो बलभिद्-द्वये ।
भद्रसामनि ह्रा शब्दः श्रेयःसामनि या स्मृतः ।
इमस्तवादिविष्टये इहा शब्द इतीरितः ।
इडासामस्विडा शब्द इहौहो हा प्रकीर्त्तितः ।
आयुःसामनि ता एवाह भूमिर्या प्रकीर्त्तितः ।
घोसाम्नि कथितौ मेति ज्योतिःसामनि ता स्मृतः ॥१॥२२॥

(२७)

ऋग्वर्ज्जितं स्तोभमयं सप्तविंशच्च संख्यया ।
आरण्ये कथितं साम तेषा मुल्लेखनं ततः ।
पतिर्द्दिवस्ततो हाउं होहायिप्रभृतीनि च ।
यज्ञाविवर्जितानीह इवेवाचाद्यन्तथा ।
अर्भज्योति रेवाहि सोमासोमेत्यतः परम् ।
इलांदप्रथम देवव्रतानि त्रीण्यहोश्रहो ।
इभा इड़ा इयमिति रायंस्कुन्वा वयो इयम् ।
सहोभ्राजोदांत्रौलोकानुन्नयामीति कीर्त्तितम्* ॥ १ ॥ २७ ॥

(२८)

जनचत्वारिंशत्साम आरण्ये ष्ट्य ईरितः ।
भगमायं ततो ऽग्निर्मूर्द्धा होवाईया ततः ।
इयहोइ दे आज्यदोहे चर्षणो हे सुपस्ततः ।
सुपा चोणि इयोः स्वादोरयंवाक्रदयेऽपि च ।
अभ्याभूः प्रिय-वीहाय हावीन्द्रा मित्युवा तथा ।

---

* आयुरेवाहित्यर्मविधर्मादीनि च वानिविदिह श्रुतौ न गह्णीतानीति विन्त्यम् ।

धामयक्लाग्रमानोऽग्ने प्रसीऽग्नेऽचित्रंदद्व द्वये ।
विश्वे षां॰शुक्रचन्द्राभ्या मोवा संक्लेपया तथा ।
समितायो दशस्तोभे ऽभिप्रघेत्यंच सर्वतः ।
उहुवोहो तथयेहो अथास्मिन्नितोदृति ।
स्वयंस्कृत्व ततो ऽस्तदेवेषु इत्थ प्रकीर्तितः ॥ १ ॥ ३९ ॥

५४

अयामाया मौहोवाए हियाहाउ ततः परम् ।
तस्मात्संखानोनवुह्रोहोवाईयेति होवेवि च ।
इन्द्रोराजा द्वये प्रोक्त मुदुत्तमसिति-द्वये ।
चिदोहुमाश्लोहा श्रुम प्रयच्चक्रमरादिमे ।
होऽयाहोऽया थथ प्राणाविद्दशकेऽपि च ।
विश्वतोदावन् प्रथमे स्वादोरित्थोमहाग्निमे ।
विश्वे षामथ याम्याख्यं नाकेसुपर्णसामनि ।
हाउहोहाइ यज्जेति पञ्चमे वाग्ददेति च ।
कश्यकह्वाविंद्रामेरयन्नाप्राणादिपुञ्चकं ।
हुप्सामनोहोहो वाचस्ततोविराङ्जायत ।
वयोमनो वयश्चाद्य ज्योतिर्दीदोहि षट् तथा ।
सर्वत्र चैव कथित मौकार निधनं तथा ॥ १ ॥ ५४ ॥

(९३)

त्रिर्वतितम मिह कथित मरण्ये गेयपदं मकारान्तम् ।
तत्पदसहित मभिहित मभिह्निसिमां च भंथविंशत् ।
थद्याद्वितोये त्वावश्रिमक्रान् रपिवासुतद्वये ।
हावाभोद्वये स्वरानाक्रन्दय प्रथमे ततः ।
मनु-शब्दद्वयं मताश्रवोहायवे संभ्रमन् ।

दुस्तरान् द्वादश प्रोक्तं वैतुषाग्नि ततः परम् ।
उपत्वा जामद्वयं स्थिरन् धामन्यज्जनयन्निति ।
यश्चास्मिन् षळित्युक्तं यच्छद्वये च वृत्रहन् ।
यद्दिन्द्रशाम्येभवर्तं-युग्मे शुम्भाधावान्निति ।
तृतीये हाउहोहाइ पञ्चधोक्तं समैरयन् ।
अयम्भज्योतिरत्र चिद्देवान् सोमव्रते ततः ।
सोमाराजान् ततो गावोहाउ जानानतः परम् ।
ऐरयव्रतं कथित मष्टादशपदं तथा ।
भायुर्यन्निति षट् प्रोक्तं दशस्तोभे च सामनि ।
अहाग्-द्वय मह्मेकं वृत्रहत्याय-सामनि ।
अग्निरश्मिजन्मना ऽऽसन्नक्रान् अर्भान्-तयं स्मृतम् ।
एवाह्येत्यत्र पूषान्, सन्त्रेति न्यैरयन्-द्वयम् ।
उवीति तय मायुर्वन् तरणिर्विश्व मानुषान् ।
स्विमसामभि वृत्रहन् पूर्वमप्यत्र कीर्त्तितम् ॥ १ ॥ ८२ ॥

(६)

उहुवा३हाउवेति गान मारण्यके च षट् ।
हावौहो ऽभित्वावृषभा औहोआलामह्ना तथा ।
इन्द्रज्येष्ठं वृहत्साम हुवौहोइ च पञ्चमम् ।
यज्जायथा हसन्त घोरयि वोऽत्र प्रकीर्त्तितम् ॥ १ ॥ ६ ॥

॥ समस्तमिदं मारण्यम्—

(इति आरण्यगानम्)

(अथ ऊहगानस्य)

—ऊहस्याथ प्रकथ्यते ॥

(१)

एकर्चमखिले ऽप्येक मेवद्वैव प्रकीर्त्तितम् ।
अयापवस्वदेवकुरित्यूहे सप्तसञ्ज्ञकम् ॥ १
एकविंशतमः प्रोक्त स्तासु ह्नः प्रपाठकः ॥ २
सुताइन्द्रा सोमसाम ग्रहणोद्धातवर्जितम् ।
हाउकाराक्षरं तस्य विज्ञेयान्यत्र नेष्टयम् ॥ ३
सप्तसंज्ञं पवित्राधेत्युक्तं ग्रहणवर्जितम् ।
यिसंज्ञमक्षरं प्रोक्त मस्याप्यन्यत्र नेष्टयम् ॥ ४
एकपादा प्रथमा सा ओहोहाइति या स्मृता ।
द्वितीया च तृतीया च त्रिपदा परिकीर्त्तिता ॥ ५ ॥
ऊहे द्वात्रसंज्ञश्च स्वरः संचारसामनि ।
द्वन्नानि मानुषाणा मितुदाहरण मीरितम् ॥ ६
पञ्चविंशत्तिकःमूहे पञ्चग्रहणं तत्पदम् ।
एकः मभिद्रोणेति च प्रोक्त सरमाख्यसंज्ञकम् ॥ ७
सोद्वात पञ्चग्रहणं पञ्चविंशत्तिक सास ।
ऊहे सुज्ञानाख्य मिन्द्रमच्छा कथित मित्येकम् ॥ ८
दशभिर्ग्रहणैर्दशविंशत्तिभिर्दशप्रदैः ।
ऊहे आयन्त गोष्ठाख्य साम कथित मित्तेकम् ॥ ९ ॥ १ ॥

(२)

ऊहे सामद्वयं प्रोक्त मेकचं स्वासुतंत्रकम् ॥ १
आसोताण सखाय इति काचःसोक्त मिति द्वयम् ॥ २
सामद्वय मिदमूहे धर्म-विधर्मेति कीर्त्तितं नाम्ना ।
त्रित्व मुभयमिलितं न च पुनरुदितं मपरम् ॥ ३
एकस्य वेयसाम्नोऽत्र गतिरूहे द्विधा स्मृता ।
वासिष्ठाङ्गिरसाङ्गोष्ठे स्तोभयुक्तं निदर्शनम् ।
धर्तादिव असाविसो साम्नोर्वासिष्ठसंज्ञयोः ।
औणन्तोगोभि नानोवा साम्नोर्गोष्ठाख्ययोः स्मृतम् ॥ ४ ॥ २ ॥

(३)

सामत्रय मिदमूहे द्विस्वरसंज्ञं कीर्त्तितं चास्मिन् ।
दार्दच्युत मिन्द्रयिन्दविति मरायेऽपि च तवाहञ्च ।
खिलपरिवर्जित मूहे ऽविव प्रोक्तं प्रपाठकत्रितयम् ।
नवमो विंशतितम इति तथा त्रयोविंशतिश्चेदम् ॥ २
द्विसाम गीत मत्रोक्त मूहे सामत्रयं ततः ।
अग्नारेण च संयुक्तं यौधाजय मिति स्मृतम् ।
श्येतेन चापि सम्पृक्तं नौधसेन च संयुतम् ॥ ३ ॥ ९ ॥

(४)

चतुष्कञ्च चत्वारः साम्यास्ते कथितास्ततः ।
अभिसो मंत्सरा राजा प्रहिन्वेतिचतुष्टयम् ।
परित्यं हियं मिन्द्राय औशनस चतुष्टयम् ।
प्रत्यैमेन यद्वीसुते ऽस्माअस्मेति चतुष्टयम् ।
परित्यं हियं मिन्द्राय सप्सखेतुात्तरं तथा ॥ १ ॥ ४ ॥

(८।)

सप्तन्यष्टौ प्रकथिताः प्रस्तावोऽत्र स्वनादतः ।
अहोसाउ वृषाहाउ अर्षाहाउ अभीचाम ।
अस्ताहाउ पवाहाउ इन्द्रोहाउ वयछहाउ ॥ १
यतइन्द्र पुनानः सृज्य पुरो याहि दुहा तवा ।
इमं स्तोमं च कथितं मंत्रैर्वाष्टौ समन्त्रकम् ॥ २
निषेधसंज्ञ मुदितं मष्टौ साम यथाक्रमम् ।
पुनान इन्दुः आर्यन्त पुरो ऽयम्पू पिबासुत ।
सोमानाञ्च ततः स्वादइष्ठयामदाइष्ठया ॥ ३
प्रसोमासोमदच्युतः तिस्रोवाचि उदीरते ।
आयिरातायि परिस्रुतासी गाथ्यिरिष्टाः ।
अदाभ्यः पुरः आयिता यस्तेमदो वरायिर्णियाः ।
पवमानो अजनइ जनान् अचि क्रदइषाहराइः ॥ ४
सफ मष्टौ प्रकथितं पवस्वधा अयापवा ।
अभिद्युम्नं बृहत्परिप्राधा भद्रोन इत्यपि ।
आसोताप्योपरिषिञ्चाप् समुन्धेय इति क्रमात् ॥ ५ ॥ ८ ॥

(९।)

आमन्द्रीयवसाभानि नवसङ्ख्यानि यानि च ।
प्रस्तावोऽत्र स्वनात् तानि कथनीयान्यतः परम् ।
उच्चातेजातमन्धसा एवाहोअसिवोरयः ।
इआपवस्वधारया अग्नात्व्योऽनातुवाम् ।
अस्यप्राणामपानता इन्द्रायेन्दोमरुत्वते ।
उग्रहतोऽर्चयाः पवमानस्यजिघ्नताः ॥ १

नौधसानि नवोक्तानि प्रस्तावोऽस्त्र खनादिह ।
तंवोदस्ममृतीषहामिन्द्रक्रतुंवआभर ।
अग्नआयाहि त्वमङ्गयिरिमाउत्वापुरूवसो ।
तंवोदस्ममृतीषाहामायिन्दुरश्वोनकृत्वा: ।
जज्ञोदेवोहिरण्यया: पूरोजितदेवोअन्धस: ।
तंवोदस्ममृतीषहाम् अस्यार्थम् (?) ॥ २
श्यावाश्वीगवं नव प्रोक्तं पुर:पर्युसुतापिश: ।
अभीनोवा परित्यञ्च सोमा: पवन्त इन्दव: ।
पवस्ववा पञ्चदशे पावास्तेतिरश्चविंशके ॥ ३ ॥ ९ ॥

(१०)

कावसंज्ञानि सामानि कथ्यन्ते ऽत:परं दश ।
अश्वोवा धर्त्तोर्वा सूर्योवा सभीवा अश्वोवा ।
पंथोवा जनोवा एतोवा अवोवेति दश ॥ १
दश श्यावाश्वकं प्रोक्तं पुर: पर्यू विश्व: प्रसू ।
अयम्पूषेत्यभीनोवा परितोषर्यतोहरिम् ।
सोमा:पवन्तइन्दव: पवस्ववाजसासुत: ॥ २
दशं श्वेत मथ प्रोक्तं मभिप्रेन्द्रक्रतुंत्वा ।
आनोविश्वासुहव्यादो रिमाउत्वा पुरूवसो ।
तद्विदासे न्दुरद्य: पुरज्जा ऽभिप्रवाङ्गकम् ॥ ३ ॥ १० ॥

(१२)

कथ्यन्ते धामदेव्यस्य प्रस्तावा द्वादशैव हि ।
काया अग्नि धारी शायिश्च काया रैव कास्तम् ।
एद्दु म इना प्रोतुर गायिमा: आर्ग ॥ १ ॥ १२ ॥

१४

सत्रासाहीयसामानि कथ्यन्तेऽत्र चतुर्दश ।
पुनानो अक्रमीदभी औवा । अग्नायिं वोवृधन्तम् औवा ।
उषाते जातमन्धसः औवा । अस्यप्रत्ना मनुद्युतम् औवा ।
पवास्व मधुमत्तमः औवा । प्रधान्वा सोमजागृविः औवा ।
अग्नायि त्वन्नो अन्तमः औवा । त्वामुवः सत्रासाहम् औवा ।
वसूरुचो दिव्या अभौवा । यस्तेमदो वरेण्यः औवा ।
पवास्व दक्षसाधनः औवा । अग्नायिः मूर्द्धा दिवःककुत् औवा ।
तुवांहि वड्डदेवया औवा । वरायि वोधातमोभुवः औवा ॥ १ ॥ १४

(१६

जराबोधीयसाम्नी ऽत्र प्रस्तावाः षोडश स्मृताः ।
येमो मासोवा । यस्ते मदोवा । सौम्यां प्रस्तावा । पारी सुवेवा ।
स्वादि ष्ठयोवा । मन्द्राऽ होनावा । उप्रा तेजोवा ।
आद्दधं तोकोवा । जारा बोधीवा । इन्द्रा मच्छोवा ।
प्रामो मासोवा । नामा स्तऔवा । पावा मानोवा ।
प्राति ष्यासोवा । एषो उषोवा । प्रांवा जियेवा ॥ १ ॥ १६ ॥

(१७)

अथ सप्तदश शुध्ये प्रस्तावाः परिकीर्त्तिताः ।
उपोषुजातम् अप्तुरोवा । प्राणाशिशुर्महीनोवा ।
इन्द्रमच्छा सुताइमेवा । अंवःसखायः मदायोवा ।
सोमःपुनानो ऊर्मिणोवा । नदंव ओदतोनोवा ।
अस्वेवाजा स्यगोमतोवा । प्राणाशिशुर्महीनोवा * ।

---

* एषः प्रस्तावो ऽग्निः परिगणितः एकार्चत्वबहुत्वभेदतः ।

गोमन्नायिन्दो स्वखयोवा । तंवःसखायः मदायोवा ।
उषस्तच्चाइत्रम् प्रभरोवा । अश्विनःवर्त्तिः अस्मदोवा ।
पवस्वदाइवा वीतयोवा । एनावोऽग्निं नमसोवा ।
प्रत्युवदार्भि आयतीवा । इमउवां दिविष्टयोवा ।
अग्नेविवास्वत् उषसांवा ॥ १ ॥ १७ ॥

(१८)

कालेयस्याष्टादशैव प्रस्तावाः परिकीर्त्तिताः ।
तृरोभार्यिवींविदद्वसूम् । मत्वण्राधस्यमासदात् ।
मत्सरासोमदच्युताः । दुहानोब्रभ्रजधनायि ।
सोमोदुग्धाभिरच्चाः । वृषोभाचिक्रदद्दनायि ।
परितोष्ञिश्चताज्जुताम् । पुनानास्तोमधारया ।
पवस्वामधुमत्तमाः । अच्छानः शीरशोचिषाम् ।
यस्ताराणांविश्वआर्योः । इन्द्रंवाइश्वाभ्रवीवृधान् ।
एषब्रह्माण । वयमूत्वामपूर्विया ।
मत्रिया पायितेमहः । आचात्वाथं यथोतयाइ ।
इन्द्रा योहियेषिताः । गायन्त्याइ त्वागायत्रीणाः ॥ १ ॥
अष्टादशाभीवर्त्तस्य प्रस्तावाः परिकीर्त्तिताः ।
उदुतेमाधुमत्तमों वां । माचाण्डिन्योद्विण्सतोवा ।
तंवोदास्ममृतीषहोवा । अभाइप्रावसुराधसेवा ।
आत्वासहस्त्रमंशतोवा । योराजाचर्षणीनोवा ।
तुवामा इन्द्रयशाभसोवा । पिबासुतस्यरसिनोवः ।
असोमादेनवीतयोवा । उत्नोदेवोहिरण्ययोवा ।
अभायि सोमासआयवोवा । पराइधाइण्रातिताण्इह्नोवा ।
एन्द्राणयातिधारयोवा । पवमानाभिदर्षसोम ।

पुनानास्सोमधारयोवा । वयाङ्क्षासुतावन्तोवा ।
अधाऊषुश्रचौपतोवा । सुवामायिन्द्रप्रतूर्त्तिष्वोवा ॥ २ ॥ १८ ॥

(२२.)

गौरोवितस्य प्रस्तावा द्वाविंशति रथोदिताः ।
प्रसु न्वानां यअन्धसाः । अयम् पूषा रयिर्भगाः ।
सुता सोमा धुमत्तमाः । इन्द्र जुष्व स्वअवहा ।
पवस्व वाजसा तयायि । सोमाः पवात इन्द्वाः ।
पुरः जितायि वअन्धसाः । अभी नोवा जसातमाम् ।
परित्यएहायंत हरायिम् । आजा गुवाभिः विप्रक्ततम् ।
प्रस न्वाना यअन्धसीः । अयं पूषा रयिर्भगाः ।
प्रति अन्मायि पिपीषतायि । विश्वः विश्वो वोअतिथायिम् ।
उत्सः देवो हिरण्ययाः । परि जषू प्रधान्नावां ।
वयमहा आभि सूरियां । किमित् नवायि णोपरिचा ।
इममिन्द्रा सुतम्पिबा । असा विसी मद्ङ्कृतावि ।
गायन्तित्वा गायत्रिणाः । ऐन्द्रयाह्वाइहरिभायिः ॥ १० ॥
प्रस्तावा वारवन्तीयसाम्नो द्वाविंशतिः स्मृताः ।
रेवतीर्नाः औहोहायि । परिप्रधा औहोहायि ।
तत्रोभिर्वा औहोहायि । उपत्वाजा औहोहायि ।
परिसुवा औहोहायि । तुव नश्चा औहोहायि
अश्वत्वा औहोहायि । यज्ञायज्ञा औहोहायि ।
एहियुषा औहोहायि । सुधीन्वा औहोहायि ।
— — — सा औहोहायि । इन्द्रविष्णा औहोहायि ।
प्राग्गाशिशा औहोहायि । कनावोमा औहोहायि ।
प्रत्यवदा औहोहायि । इमाउवा औहोहायि ॥

अग्नेविवा औहोहायि । अभित्वाशा औहोहायि ।
तुवामिन्द्रा औहोहायि । रेवाइन्द्रा औहोहायि ।
इन्द्रायेन्द्रा औहोहायि — — — ॥ २ ॥ २२ ॥

यज्ञायज्ञीयसामानि । चतुर्विंशतिसंख्यया ।
प्रस्तावोल्लेखनात्तत्र कथ्यन्ते तान्यतः परम् ।
यज्ञाय पुनानः पुरोजि देवोवः अदार्श्चि विशोवा ।
समायिन्द्र प्रदेवः इन्द्रायः पवायितः अयांपू धत्तीदिवो ।
अभायिम्नि वृषाम पवास्व परायित्य अभायिनः आजागृ ।
उपोषु हुवायिशु पवास्वमा पुरोजि सोमाःप सोमाःपः ॥ १ ॥ २४ ॥

ऊहे स्तोभैर्विना साम सप्तत्रिंशदथोच्यते ।
सर्वं यौधाजयं प्रोक्तं पुनानस्सो प्रसोमदे ।
औणस्तीगो प्रहिन्वानः प्रत्नम्पोयु तुचेतुनः ।
पुरुहिन्नोत्र तवाहंसो असोमा स्वरसंयुतम् ।
परीतोषिञ्चतासुत मिन्द्रमच्छ अयापव ।
पवतेहर्यतः प्राणाः चाग्नेवाजस्यगोमतः ।
गौमृतञ्च परिस्वाप परिप्राधेति चाष्टकम् ।
अथ नानाविधं साम द्वादशैवात्र कथ्यते ।
यत्सोमचित्रमुक्थ्याया मेषस्यधारयासुता ।
प्रोयासो दसाविद्ध्यभ्यालोशं यदुच्यते ।
प्रतआश्वो तथा गोविदश्यालोशं प्रतुद्रवा ।
अभिप्रियाणि वासिष्ठं स्वादिष्ठयेति शैशवम् ।
पुनानो आयाम माद्य मेतामूल्यं दशचिपा ।
प्रोवा आयो ऽभिक्रन्द मिति द्वादश कीर्त्तिताः ।
सप्तत्रिंशदिति प्रोक्तं सर्वं भवति वर्जितम् ॥ १ ॥ २७ ॥

(६८)

आद्यस्तोत्रीय मेकञ्च सूनसप्ततिसंज्ञकम् ।
आद्यप्रपाठके प्रोक्तं पञ्च तेषाञ्च कीर्त्तनम् ।
प्रसोमासो ऽयापवस्व पवतेहा प्रसुद्वयम् ।
पवस्वे न्द्रमच्छा यम्पूषा गौरोवित * स्मृतम् ।
आसोतासा सखा चेति पञ्चैवोक्तं द्वितीयके † ।
पवतेहर्यतो युग्मं षष्ठे प्रोक्त मिदं द्वयम् ।
सप्तमे द्वे परोक्तेथां माधुच्छन्दस मायास्यम् ।
तंवःसखा द्वयं प्रोक्त मष्टमे च प्रपाठके ।
प्रसोमदे ऽभिसोमा च द्वे ऽभिवत्तं तथैव च ।
अभिंद्रास्त्रं बृहत्प्राणा पवतेहर्यतस्तथा ।
अभोसोमा प्रसोद्वयं तंवःसखाय आर्यिहि ।
उक्ता नवैव नवमे दशमेऽपि नव स्मृताः ।
पवस्वमध्विति प्रोक्त मिडासंज्ञकसंज्ञकम् ।
परिप्रधन्वा ऽऽइन्द्रा पुना यायृन्त आँयाकृचा ।
इन्द्रायेन्दो मदंवञ्चो पाह्निनो देवसंज्ञकम् ।
एकादशे च कथितं मडेवैकश्चसंज्ञकम् ।
भद्रोनो अग्नेवाजाद्यं स्वावाश्वाख्यं विशोविशः ।
प्रसोमासो प्रधन्वासो प्रसुना वाश्वसंज्ञकम् ।
अतः परं त्रयोदशे पञ्चैव परिकथ्यते ।
पवस्वमेति चावनं स्वादिष्ठये न्द्रमच्छ च ।
अंतम्पोयूषमित्याद्यं पुनानस्सोमधेत्यथ ।

---

* गौरीवित भिति 'अयम्पूषा'—इत्यस्यां विशेषणं काश्यपविज्ञार्थम् ।

† काण्वाद्गृनिधनादेः प्रहिनोत्यादेश्चैव न गृहणम्, अगेऽदेशायितत्वात् ।

पवस्वमा चतुर्दशे षोडशे त्वय मिष्यते ।
परिप्रिया प्रसुन्वाना ऽभिसोमास्य मतः परम् ।
पवित्य रासितोत्तर प्रोक्तं च सप्तदशके ।
सोमः सोमास्व पर्यूषु माज्यमानः सुहस्तिया ।
स्वादिष्ठयेति विंशतितमे चत्वार इतोरिताः ।
उपशिक्षाप-युगलं संस्तुत्वेयः परिप्रधा ।
पवस्ववाजसा-युग्मं पावास्व सोमा च स्मृतम् ।
सप्तैकविंशतितमे द्वाविंशतितमे स्मृतम् ;
सैतम्व नौधसञ्चैव पुरोजिती प्रकीर्त्तितम् ।
इत्यूनसप्ततितम माद्यञ्चैकर्चसंज्ञकम् ॥ १ ॥ ६९ ॥

(२३९)

जष्टे गाने नकारान्त पदं प्रोक्तं मतः परम् ।
जनत्रिंशत्पदयुतं शतद्वय मिति स्फुटम् ।
अभित्वावृषभा दधन् गामिदं रसोवमाद्दन् ।
त्वास्मिन् नभिद्रोणा ऽक्षरन् वृषाशोणो प्रचोदयान् ।
कण्वान् वृषामता दधं विश्वान्मजनयन् मधुश्चुन् ।
तवाहंसो तितानिति तितानिति द्वयं स्मृतम् ।
विश्वोषायि स्वरान् तुवंहि पायान् सोमःपुना यान् ।
सोमः पवान् तिरेभिन्द्रिः सोमान् पश्चानथत्रयम् ।
गाभन्नितोमिमो न्यारान् अर्षासोमेति साद्वान् ।
सोमउष्माणं ईत्यावृमानिन्दुरोहो च दाद्वान् ।
एतमुत्यं हि मधुमान् सुष्वाणास: समिस्वरान् ।
प्राग्नया चिरहान् वयं वृत्रहणमघवर्भं तथा ।
भर्त्तादिवः अमीरायर् कुभयं मघवन् तथा ।

धर्म्मसामनि विधर्म्मा नर्क्कमुष्ये तथा योमान् ।
असाविसो सरान् आयंश्चोदयन् प्रथमं स्मृतम् ।
त्वष्ट्यङ्कदेवा धीषायानुदूत्येमधुमत् स्वरान् ।
प्रकाव्नि रेभान् श्रोवा द्दान् प्रसोमासोषि सप्तरान् ।
वृषाशोणो प्रचोदयान् क्रत्वान् सुता स्वरान् ततः ।
पवीत्रो स्थायिरानस्या रेभान् सोमा ऋथारहा ।
अभिवि हावान् शूर प्रातून् क्रत्वान् वाजान् तुवा अवान् ।
प्राणा हिन्वान् सासरान् च साकमुक्षये तथा ।
जानताद्ये भान् स्तोमान् च ततः पश्यान् सोषुजानान् ।
सोमोदुग्धाभिराग्मान् घ्नन् निन्द्रवाजोति कथ्यते ।
देवान् घ्नन्वानभिधाय यंश्वान् वृषामती विशान् ।
नाथानथ वयज्ञात्वा वृत्रहन्मघवन् तथा ।
तिस्रोवाच उत्समुद्रान् शिशुंयज्ञा तथैव साक् ।
धर्त्तोवा मोरयानिन्द्रक्रतु श्येते च भीमसे ।
अभित्रिच्छन्द इति प्रोक्त आग्नीविश्वासु वृत्रहन् ।
मत्स्योषु समास्वांश नदगि यास्मिंस्तथा इनाः ।
अपाजान् च स्वैभाग्यान् च विश्वानिति तथा स्मृतम् ।
उपक्राजा श्चिरानाचोधापूर्षीति स्वरान् द्वयम् ।
तुवाम्भिवत्प्रदेवेत्या यस्मिन् यस्तेभि सायिदान् ।
तुवंस्त्रिया धर्यम् साकमूचो यानित्यतः धरम् ।
पवमानो भजोजन क्राजान् दुग्मानितीरितम् ।
अग्नीविश्वासु वृत्रहन् पवोत्रा स्थायिरान् तथा ।
इन्दुरश्वो श्चियोमन् अंश्मान् भिवोक्तेधम्मंसक्के ।
इन्द्रमभोवेति च प्रत्न सुतेभे च समस्वरान् ।

साबीहोहाइ शान् प्रोक्तं यस्तेमदो च साइदान् ।
आलाविश्वन्विन्द्रवस्य वृषन् च वृत्रहन् तथा ।
इदंविश्वा शुभान् यान् प्रसोमासा चरान् तथा ।
अभिप्रकल यान् सोषु वासान् यस्तेम सोदान् ।
यज्ञायज्ञीये च इन्द्रायेन्द्रो वानित्यतः परम् ।
— — — — दाइरान् च प्रकाविंयाम् च रायिशान् ।
प्रोग्मा हान् शिशुंयज्ञा-द्वये रेभान् तथैव मान् ।
इत्यैहर्य-यज्ञायज्ञीये देवान् प्रकीर्त्तितम् ।
अक्रान् धर्म्मान् तथा देवान् पुनर्देवा नमाविसो ।
एधन् नाजाग्टर्विंश्मिषाणान् पवमानो अजीजनात् ।
द्युमानश्च द्वितीये च द्युमान् प्रसो सुता चरान् ।
साकां ग्रान् च कुहूलेदं माहान् त्वमिन्द्रे भ्रवान् ।
तुामेत्यत्र दाभान् त्रि रावाविशन्तु वृत्रहन् ।
आवो दाइवान् तुवाहियंगेति यघोषयन् ।
अनूपेगो प्रोक्त साग्नान् वयांहाउ च वृत्रहन् ।
प्रसोरासोनात्व क्षरान् सुताद्वये सरान् भुवान् ।
तवाहंसो ऽर्कपुष्पे च मान् माण्डवे न रातितान् ।
सोमउष्वा ततो अभान् तृतीये रमन् ततःपरम् ।
कृञ्चा-द्वितीये मान् पुभा-तृतीये मान् यत्रो योभान् ।
इन्द्रंविश्वा अवीवृधान् त्वमङ्ग ऽस्मान् द्वयञ्च भान् ।
तृतीयाया मृचि ततो मश्वि वाच तथैव वान् ।
अचिक्रदद्वृषा अहान् दिशिदिहानतः परम् ।
अभिलाभूरनोनुमाऽऽन् छन्दः परिकीर्त्तित ।
औहोनुत्वं हि मघवन् द्वयञ्च पाइवान् घन् ।

श्रूधाइ द्वान् त्वयं सुता चरोन् क्रुवान् तंव: परम् ।
इममिन्द्रसुता भियच्चरानिमं राम् तथास्नेम् ।
स्वन् त्वितयं नवं सुष्वाजासोविप स्वारान् ।
सोम:पवा चाल: मश्यान् भिगुंजज्ञेशि पूर्ववत् ।
आक्षान् प्रक्षा भिश्च चाक्षान् पुनरुक्तांश्च पूर्ववत् ।
एतामुल्यं तथा धूमा नस्माद्दये च पूर्ववत् ।
मदभिं यास्मिन्नितुरक्तं नकारान्तं पदं तथा ॥ १ ॥ २२८ ॥

॥ ऊहगानस्य संपूर्ण मिदं सामप्रकाशनम् ॥

(इति ऊहगानस्य)

(अथ ऊह्यगानस्य)

॥ अथातो ह्यूह्यगानस्य वक्ष्ये सोमप्रकाशनम् ॥

(१)

एक मूह्यं चतु:साम गीत मग्नेलवर्श्चव ॥ १
एक ऊह्यं नीचसंज्ञ: प्रस्तावे भूरिति स्मृत: ॥ २
एक ऊह्यं प्रकथितं त्वचद्वयविसिश्रितम् ।
यदिन्द्रचित्रमंइति सामालोपङ्गसंज्ञकम् ॥ ३
सोभमयं मेक मूह्यं व्याहृतीसंज्ञश्च भूरिति ॥ ४ ॥ १

(२)

येतं गीत अलोक मूह्ये सामद्वयं तत: ।
रथन्तरं च लहती बृहद्रथन्तरेण च ।

युक्तं सामद्वयमिदं स्वासुनेद्वक् प्रकीर्त्तितम् ॥ १
द्वितीयः षष्ठयैकर्च-द्दोभ जह्यो प्रपाठकः ॥ २ ॥ २ ॥

(६)

आद्यर्चजात मेकर्च भूह्यगाने षड़ीरितम् ।
अदंवओदतीनाञ्च पुनानःसोम सप्तकम् ।
पवतेहर्यतो यस्तेमदस्य बलभितुन्द्वयम् ।
अयम्पूतारयिर्भगः परित्यर्ठ्ठं हर्यतर्ठ्ठं हरिः ॥ १
षट् सामानि खिलान्यूह्ये कथ्यन्ते तान्यतः परम् ।
अग्नेतवश्च होहांइ नूरादि व्याहृति तथा ।
ए आग्नीरस्तथा प्रोषू श्रेयः प्रोक्त मितेति षट् ॥ २ ॥ ६ ॥

(८)

ऊह्यगाने समाख्यातान्यष्टावाथर्वणानि च ।
पवस्वदक्षसाधनं परीतोषिञ्चतासुतम् ।
पुरोजितीवोअन्धसः पुनानःसोमधारया ।
अभिसोमासआयवः पारधोर्ठ्ठं रतिताठ्ठं इहि ।
तंवोदस्ममृतीषहं मूभिप्रवःसुराधसम् ॥ १ ॥ ८ ॥

(१४)

द्विस्वरं साम कथित भूह्ये सामचतुर्दश ।
एकर्च प्रथमं भूषा धास्यमलमनुदुगता ।
विभ्राड़ वृहत्त्वाहंसो वयमहा मिन्द्रमित्तः ।
इन्द्रक्रतु पुरोजिती आयक्तङ्कत्र चेत्सथ ।
पर्यूषु प्रधन्वा चाथ पुरा सम्भोत्यसंज्ञकम् ।
पुनः पुरोजिती प्रोक्त मश्विनोर्व्रतमुत्तरम् ।
तवांहृतं इयं चैव पुनां स्वादिष्ठयेति च ॥ १ ॥ १४ ॥

(२०१)

ऊह्ये सामाष्टादशैव प्रोक्त मेकर्क्षसंज्ञकम् ।
आद्ये सूषाऽथ तृतीये नदंवश्चोदंतो स्मृतम् ।
अयश्चोति पुनानःसो होवायि पुनर्स तथा ।
यस्तेमदो चेन्दुरश्वो भूरा इत्याश्रीण इत्यपि ।
तुर्ये द्वियश्च यदुक्त परिप्रश्राद्दणा ततः ।
परित्यंहर्यतं चोक्त मुत्सर्पाख्य मितीरितम् ।
पञ्चमे प्रत्न मितुरक्तं सखेन्दुरश्व इत्यपि ॥ १ ॥ १८ ॥

(२१)

ऊह्यगाने स्त्रासुसंज्ञ मेकविंशतिसंख्यकम् ॥ १ ॥ २१ ॥

(२३)

त्रयोविंशतिमुद्दिष्ट मूह्य गाने रथन्तरम् ॥ १ ॥ २३ ॥

(२४)

ऊह्यगाने बृहत्संज्ञं चतुर्विंशति रीरितम् ॥ १ ॥ २४ ॥

(९)

ऊह्ये स्तोभपरित्यक्त नवसामात्र कथ्यते ।
सूषाम् विभ्राट् बृहद् वात वणमहाँ इन्द्रमित्ततः ।
इन्द्रक्रतुं पुरोजितो मूर्धानन्दिव इत्यपि ।
पर्यूष्विति नव प्रोक्त मथान्यत् स्तोभसंयुतम् ॥ १ ॥ ९ ॥

४१)

एकचत्वारिंशदुक्त मन्यस्तोभविवर्जितम् ।
यस्तेमदः परीतोषी चतुर्थ जिति कीर्त्तितम् ।
असाव्यप्रत्ना आयन्त पुनः आयन्त इत्यपि ।
परि चीश्चा पुन परो नदिदास त्रिकद्रुके ।

नर्दवश्चोदसौ धर्त्ता यस्ते च बलभित्तथा ।
त्वमिन्द्रयशाश्चसीति पुरो संमिल्वसंज्ञकम् ।
इन्दुस्तथायंसोमश्च तिस्रोवाचास्ततः परम् ।
आयापूषेति तिस्रोवाच उदोरित इत्यपि ।
पारे स्वादिष्ठया द्वाद्यौ परिस्वान इत्यतः ।
अभिप्रिया आयिंगा च पुनानःसो पुरोजिती ।
एतमोदे ऽभिप्रवः पुना स्वादिष्ठया ऽऽयज्ञौस्तथा ।
पिबासोमा श्रुधीहवां पुरोजितीव इत्यपि ।
अक्रानिति च संप्रोक्तं मन्त्यस्तोभविवर्जितम् ॥ १ ॥ ४१ ॥

(५८)

ऊह्ये पदं नकाशान्त मेकोनषष्टितमं स्मृतम् ।
अभिसोमादिषु प्रोक्तं मन्तरिक्षेषु पञ्चसु ।
अक्रानिति ततो यद्या वृत्रन् चौहेनि यस्मिरन् ।
— — — — आमा सरानिति द्वयम् ।
नदिदामा च तिशन्न चिरग्मानिति च त्रयम् ।
स्वर्णो यांनत्र किमिद्विद्वान् त्वमिन्द्रशा अस्रवन् ।
५आया दयन्नभित्वा वृषभान् वृषा ऽक्षरान् ।
वर्द्धयन् च पवित्रन्ति अस्थिरन् च सुता ऽक्षरान् ।
ब्रुवानाभी इंहन् हाउंदर्यावर्द्द बृहान् ततः ।
इगाहाउँ पिबासोमा मघवन् च श्रुधीहिधम् ।
विद्वानित्यथ वैरूपे सुतासोमेति चाक्रन् ।
सुतासोमेत्यन्तरिक्षे चारान्‌ब्रुवानतः परम् ।
सोमउष्वा-चतुष्टय आग्मानं सुताद्दयें ऽक्षरान् ।
पवस्वसोम मन्द्रयान् हाद्देत्यत्र तोश्चरान् ।

तर्त्रं दावान् जूवानाक्रान् धर्म्मक्ष सुतम् पुनस्तथा।
देवान्-चतुष्टयं त्वष्मान् नकारान्त मितीरितम् ॥ १ ॥ ५८ ॥

॥ समाप्तमिदं मूह्यस्य सामप्रकाशभंसम्प्रधाम् ॥

(इति ऊह्यगानस्य)

(अथ सर्वगानानाम्)

॥ अथास्याग्रे नकारणं कथ्यते सर्वगानजम् ॥

(१)

याष्टक् तयं प्रथग्वेये प्रतोच्चैः परिकीर्त्तितम् ।
उह्यं त्वच मिदं प्रोक्त मेक मेव च ताहृशम् ॥ १
ऊहस्य प्रथमान्त्या च वेयगानस्य मध्यमा ।
ऋक् सम्प्रोक्ता चैवात्र प्रवाइन्द्रेति कीर्त्तितम् ॥ २
इन्द्रायाहि चित्रभानो वितुरकाष्या ऋगाग्निके ।
उह्य नाथ भिर्येषिता, इमूराहे प्रथमा स्मृता ॥ ३ ॥ १ ॥

(२)

अरण्येये स्तोभ आरण्ये तुल्यं पदद्वयं तथा ।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रा नविष्ठया मती ॥ १
इन्द्रं इथं उवास्मिन्नि वेग्रेऽप्यहन्नमीति च ॥ २ ॥ २ ॥

(७)

ऋगाद्यन्ता च वेदस्य मध्यमोहस्य या स्मृता।
एवं सप्त समाख्याता-स्तासां भेदा यथाक्रमम्।
पवस्वदेव आयुषक् प्रयूषदर्शिगातुवित्।
प्रदैवोदास इत्युक्ता मिन्द्रोमदा यथाहृषभ्।
एषब्रह्माय इत्येता ऊहे प्रोक्ता यथा स्थिता: ॥ १ ॥ ७ ॥

(८)

युग्मं द्वितीयं दीर्घं यत् तन्नवैव प्रकीर्त्तितम्।
मिमोषते भिगधुर्दाहिर्देदिदोहिवि (?)।"
मिमीते अस्य योजनायु पूर्याश्च पिपीषते।
विश्वाविश्वा च बउदमिमीतो गमीत्यपि ॥ ८ ॥

(१२)

एकान्तरेण ये ख्याता: प्रस्तावास्ते त्रयोदश।
तेये प्र-शब्द इत्युक्त ओंकार: शाक्वरर्षभे।
आ-शब्दो रैवते प्रोक्त एकार: सम्मित-द्वये।
हुङ्कारो राजने प्रोक्त: सोमव्रते तु कथ्यते।
ईकार: क्रुष्ट ॐकारो महावैश्वानरव्रते।
उर्गिति चौश्व वाक्-यति-तुर्यमाने प्रकथ्यते।
पवस्ववाजसैत्यत्र प्रणव: शाक्वरर्षभे।
व्याहृती भूरिति प्रोक्तस्त्रयोदशैक कीर्त्तिता: ॥ १ ॥ १२ ॥

(१४)

ऋगन्तेषु समाख्यातं त्रिषु स: खण्ड मुत्तरे।
आद्यान्त्या मध्यमाश्चास्य खण्डन्तदत लप्यते।
ऊहे ऊह्ये च कथ्यन्ते चतुर्दशात यत्र च।

अतिश्रुमन्दधी परिस्रुतो मधेषु सर्वथा ।
इन्द्रनोगधिप्रियेति पतिर्हिवस्ततः परम् ।
आघायेअग्निमित्यन्ते येषामिन्द्रो दएकइत ।
इन्द्रोअङ्ग स्वाकोरित्था वस्वीमंस्तोममर्हते ।
अत्रैव सख्येमारिषमेन्द्रयाहिदिवोअसु ।
उभेयदिन्द्ररोदसी त्रिकस्येन मूत्तः पूर्वम् ।
अग्निन्तमन्ये यद्दध महेसुजात इत्यपि ।
प्रतिप्रियतमं माध्वी प्रोषु ज्याका अधेति च ॥ १ ॥
चतुर्दश समाख्यातं युग्माद्यं दीर्घ मच्चरम् ।
कादोहिंकदोदिवः प्रतरां दोदिहोति च ।
इहौओदोदिवः शुचयो दिदिवा मरुचत् ।
प्रावोविप दशूशुभ वग्ने दोदिहि च स्मृतम् ॥ २ ॥ १४ ॥

(४०)

अकारयुगलङ्गीतं चत्वारिंशत् प्रकीर्त्तितम् ।
जबाय शूश्वते शिशो श्वमश्युवन् शूश्वत्तम ततः ।
अशिश्वितत्तथा सान्त्वाशिशीति शूश्वतोः स्मृतः
अश्मश्युभिर्दीर्धवैश्व पृथिव्या निःशशा अहिम् ।
शुश्वच्छश्वट्टेशिशानः कलशे शमया तथा ।
शिशुंनय शिशुंनय प्राणाशिशुर्महो तथा ।
सर्वः शिशुर्मतो शब्दः शिशुकानिति चेरितः ।
चितुयांमः शशदग्निः — — शिशिरस्ततः ।
शशमानायसुन्वते दिवःशिशु मशूशुभम् ।
अशिश्युशवसा च शुश्रुवो नो हि शश्वतः ।
क्रन्दाचनः शुश्रवदिम्बाशविष्ठः शिश्वरीरिव ।

बृहिशश्वताकारेत. शिश्विभः शश्वतीरपः ।
शिशुन्न देवानं तु शिशुः शिशुंजज्ञाविशग्रयोः ।
शश्वंस्तद्धयन्ति च जोणो शिशुन्नमातरा ।
वज्जं शिशलि शिषणा प्रोक्तं तालव्ययुग्मकम् ॥ १ ॥ ४० ॥

(४१)

ऋक् चरण मेक मुक्तं गाने स्यान्दय साम ।
सत्ताक्षरादिसंयुक्तं तदेवात्र विलिख्यते ।
आर्चिके यद् भवेत् पदं गाने तन्न भवेत् क्वचित् ।
न लिख्यते तद्देशात्र निदर्शन मथोच्यते ।
अग्निंदूतं यजिष्ठन्त्वा अस्ययज्ञस्यसुक्रतुम् ।
भिंधिविश्वः यद्वीडावि वसुस्पार्हंतदाभर ।
इमाउत्वा सुतेसुते आत्वागिरो रथोरिवा ।
गावोवत्संनधेनवः अभिप्रगो अभिप्रवा ।
धन्द्रमर्क यथाविदे सदसस्पतिमद्भुतम् ।
अभीनवन्ते द्वियंप. प्रियमिन्द्र काम्यं त्रिषु ।
येतेपन्था येभिर्विर्येत्यास्यं येभिर्व्यश्वमैरयः ।
वातआवातु दधिक्राव्णः प्रणआयूंषितारिषत् ।
आत्वासहस्र एहदेवाम वहन्तुसोमपीतये ।
इन्द्रमिद्देवता पिदांसान्नि इन्द्रंधनस्यसातये ।
इमाउत्वापुरूवसोगिर इन्द्रमोशानमोजसा ।
अभिस्तोमैरनूषता. उदुत्यमधु पवस्सोमगान्द्रयन् ।
वाजयन्तो यच्छक्रासि दधिविजित्वा ऽऽविवासति ।
सुनोतसोम दिवक्षीयष सोममिन्द्रायवज्रिणे ।
पाहिग.अन्धसः इन्द्रद्वयोस्सचा इन्द्रोवनोर्हिरण्यय ।

इमइन्द्रायसुन्विरे तेपूताम: सोमासोदध्याशिर: ।
तमुअभि पान्तद्वितीयाऋक् पुरुहूतम्पुरुष्टुतम् ।
इत्याहिसोम इन्द्रसुभ्यमिन्दद्रिव:
प्रेह्यभीहिधृष्णुहि अर्चन्ननुस्वराज्य इतिषु ।
अच्छन्नमी उग्रोषुश्रष्ठो सघातन्नृषणं योजान्विन्द्रतेहरी इतिषु ।
अच्छन्नमोमद उवोप्रथमे स्तोषतंस्वभानवोविप्रानविष्ठयामती ।
आतेअग्नइधी अग्निन्तम्मन्ये इषस्तोत्रभ्यआभर ।
अग्निवस्वहृतिभि: अग्नआयाह्यग्निभि: होतारन्त्वावृणीमहे ।
अग्निंहोतारं पुरुप्रशस्तमूतये सहस्वेजातवेदसम् ।
इन्द्रायेन्दो पवस्वमधुमत्तम इन्द्रागमोमेति च ।
वृषाह्यसिभानुना त्वाधर्त्तारमोण्यो: पवमान:स्वर्दृशम् ।
पुनान:सोमधारया अनुशूरवैरामसि उक्तोदेवोहिरण्यय ।
प्रसोमदेव पवमानस्यतेकवे अच्छाकोशंमधुश्चुतम् ।
पवस्ववाजसातम: अक्रान्त्समुद्र: प्रथमेविधर्मन् ।
एषस्यतेमधुमाँऋतावा ज्योतिर्यज्ञस्य मदिन्तमोमत्सर: ।
वृषामतीनां अवद्युतान: कलशाँअचिक्रदत् ।
प्रधन्वासोम त्वंशुष्माणो दुग्रमन्तंशुष्ममाभर ।
वनप्रत्नेमदच्युतम् एतमुत्यम्मदच्युतं सहस्रधारंवृषभम् ।
सनइन्द्राय अप्सुइन्द्राय वरुणायमरुद्भ्य: ।
एनाविश्वानिस्त्वमुवामियम् सिषासन्तोवनामहे ।
इन्द्रधनस्यसातये सत्वेतदिन्द्रवाजिनो जेतारमपराजितम् ।
एवाह्येवेत्यारण्ये विद्यायाश्च ।
वरिवोधातमोभुव: उभेलोकेतनये पर्षिराधोमघोनाम् ।
त्रिकद्रुकेषुचेतन अपोषुजातं तमिद्वर्धन्तुनोगिर: ।

सुताइन्द्राय सुता अया च वर्जित मेकविंशत्यक्षरं तुल्यम् ।
मत्सराय: शिंद्रवाय राजादेवऋतंदृहत् ।
मूनोस्तयिमहामिन्द्रो इषस्तोकाय
अस्मभ्यःसोमविश्वत: आपवस्वसहस्रिणमिति पादद्वयम् ।
मर्सजिकलशाः सदोवनेषु मीढ्वानत्क्तिर्नवाजयु: ।
पवस्ववाजसातये अयंदक्षायसाधनो देवेभ्योमधुमत्तर: ।
ज्योतिर्यज्ञस्य ऋतस्यजिह्वा पवतेमधुप्रियम् ।
रसंस्तेमित्र स्ववत्यइन्दो पवमानस्यमरुत: ।
आन:सोम इन्द्रस्यप्रेम पवमानऊर्मिणा ।
शिशुञ्जज्ञानःहरिं शिशुञ्जज्ञानःहर्यतं ।
शिशुञजज्ञानः०-०मृञ्जन्तीति नवाक्षरं तुल्यम् ।
मधुप्रियोमृज्यते वषट्तेविष्णवा यूयम्पातस्वस्तिभिस्सदान: ।
इदंश्रेष्ठं ज्योतिषा ज्योतिरिति नवाक्षरं तुल्यम् ।
तःहोतारमध्वरस्यप्रचेतस मिस्कर्तारमध्व-
रस्यप्रचेतस मिति दशाक्षरं च तुल्यम् ॥
न्याना मन्त्राणां पदानि न्यूनानि बहुत्वात् ॥

मिश्रित मिद मिति सुखदं कौतुकसहितं दुर्घटश्लोकै: ।
प्रीतिकरेण यथाक्रम मुदितं सामग्रन्थस्य सर्वस्य ॥ १ ॥

॥ इति प्रोन्मिश्रअग्निवेदिमणीतं सामप्रकाशनं समाप्तम् ॥